जून, 2021
I.S.S.N. : 2457-0478

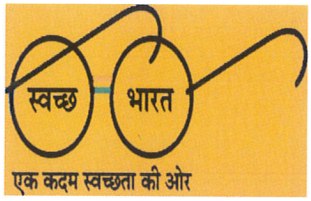

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

श्री कमला कान्त
श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2021 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जून, 2021 अंक - 6

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

असलम खान

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2021) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website ➡ **https://bharatkosh.gov.in/product/product**

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.

दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

प्राचीन काल में विवाह-विच्छेद के संबंध में कोई सोच नहीं सकता था । लोग विवाह को एक पवित्र कार्य मानते थे । प्राचीन साहित्य के अनुसार पति-पत्नी को एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता था और उनका वैवाहिक बंधन नहीं तोड़ा जा सकता था । समय बीतने के बाद विवाह-विच्छेद की अवधारणा वजूद में आई और विवाह समाप्त करने के लिए एक प्रथा के रूप में स्थापित हुई । हमारे देश में विवाह-विच्छेद के लिए बोलचाल की भाषा में आम तौर पर अरबी शब्द "तलाक" का प्रयोग किया जाता है । अर्थशास्त्र के अनुसार, आपसी सहमति से भंग होने पर विवाह समाप्त हो सकता है और किन्तु प्राचीन प्रथा के अधीन विवाह विघटन है ही नहीं और विवाह समाप्त करने का एकमात्र उपाय पति-पत्नी में से किसी एक की मृत्यु ही है । विवाह-विच्छेद से संबंधित उपबंध हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन प्रस्तुत किए गए हैं । यह अधिनियम विवाह-विच्छेद को विवाह के विघटन के रूप में परिभाषित करता है । समाज के हित के लिए, वैवाहिक संबंध कानून के अधीन चारों ओर से संरक्षित होना चाहिए । विवाह-विच्छेद की अनुमति केवल एक गंभीर स्थिति में ही दी जाती है अन्यथा अन्य विकल्प का सहारा लिया जाता है ।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1) पीड़ित पति-पत्नी में से कोई भी न्यायालय का दरवाजा विवाह-विच्छेद के लिए खटखटा सकता है । धारा 13(2) वह आधार प्रदान करती है जिस पर केवल पत्नी ही न्यायलय में विवाह-विच्छेद की गुहार लगा सकती है । विवाह-विच्छेद से संबंधित मुख्य तीन सिद्धांत हैं : दोष सिद्धांत, पारस्परिक सहमति सिद्धांत और अपरिवर्तनीय सिद्धांत हैं । भारत में विवाह-विच्छेद के मामले में दोष सिद्धांत काम करता है । इस सिद्धांत के अनुसार, विवाह तब समाप्त किया जा सकता है जब पति या पत्नी में से एक वैवाहिक अपराधों के लिए जिम्मेदार या उत्तरदायी हो । इसके अंतर्गत पति-पत्नी व्यभिचार, परित्याग, धर्मांतरण, कुष्ठ रोग, क्रूरता आदि दोषों के आधार पर न्यायालय से तलाक ले सकते हैं । पारस्परिक सम्मति वाला सिद्धांत एक

सभ्य सिद्धांत माना जाता है जिसके अधीन कम समय में न्यायालय से निर्णय प्राप्त किया जा सकता है और इसके निर्णय के विरुद्ध कोई अपील भी नहीं की जा सकती है । तीसरे सिद्धांत के अनुसार जब किसी भी स्थिति में पति-पत्नी एक-दूसरे के साथ रहना ही न चाहते हों तो वे न्यायालय से अपरिहार्य परिस्थितियों में विवाह-विच्छेद की डिक्री प्राप्त कर सकते हैं । इस अंक में प्रकाशित **राकेश कांडपाल** बनाम **नीलम कांडपाल** (2021) 1 सि. नि. प. 785 वाला मामला इस स्थिति को बखूबी स्पष्ट करता है ।

इस अंक में निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 के अतिरिक्त अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । इस अंक में सामाजिक कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि-विद्यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जून, 2021

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
अर्पणा विजय मनोर **बनाम** विजय तुकाराम मनोर	840
एन. सत्यानारायणन उप कलक्टर, अरियालूर **बनाम** कलैसेलवी और अन्य	850
ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** उमा देवी और अन्य	727
ज्योत्सना पवार और अन्य **बनाम** दौलत राम पवार और अन्य	811
नटवरलाल रणछोड़दास पटेल और अन्य **बनाम** हरेन्द्रभाई सोमजीभाई पटेल और अन्य	796
रंजन कुमार राउत्रे **बनाम** मधु मोहन्ती **उर्फ** राउत्रे	767
राकेश कांडपाल **बनाम** नीलम कांडपाल	785
संतोष कुमार गुप्ता **बनाम** राधा देवी	825

संसद् के अधिनियम

निःशुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 29

पृष्ठ संख्या

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43)

– धारा 17 और 19 [सपठित माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 की धारा 23] – अपीलार्थी पुत्रवधू द्वारा साझी गृहस्थी में निवास करने के अधिकार का दावा किया जाना – पुत्र और पुत्रवधू द्वारा बेदखली के आदेश को चुनौती दिया जाना – सास-श्वसुर (प्रत्यर्थी) द्वारा फाइल किया गया बेदखली का वाद मंजूर किया जाना – अपीलार्थियों को वाद परिसर खाली करने का दो बार समय दिया जाना – अपीलार्थियों ने परिसर खाली करने की अवधि 6-6 मास दो बार बढ़ाए जाने का लाभ उठाया और उनके द्वारा घरेलू हिंसा की शिकायत मात्र दिखावा है जो प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए बेदखली के मामले में पारित आदेश को निष्फल बनाने के लिए फाइल की गई प्रतीत होती है, अत: निचले न्यायालय के बेदखली के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

ज्योत्सना पवार और अन्य बनाम **दौलत राम पवार और अन्य** 811

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 (1971 का 70)

– धारा 12 और 19 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 129, 136, 142 और 215] – न्यायालय अवमान के लिए एकल न्यायाधीश द्वारा आरोप विरचित किया जाना – आरोप विरचना के विरुद्ध अवमान अपील – सीमेंट कंपनी द्वारा सरकारी भूमि पर अतिक्रमण – उप कलक्टर द्वारा बेदखली का आदेश – आदेश के विरुद्ध

पृष्ठ संख्या

रिट याचिका – रिट खारिज – खारिजी के विरुद्ध खंड न्यायपीठ के समक्ष रिट अपील – रिट अपील खारिज – खारिजी के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका – याचिका खारिज – एकल न्यायाधीश और खंड न्यायपीठ के बेदखली के आदेश की पुष्टि – जिला प्रशासन द्वारा सरकारी भूमि से अतिक्रमण न हटाया जाना – एकल न्यायाधीश के आदेश की अवमानना के लिए आवेदन – अवमानना आवेदन की सुनवाई के दौरान सरकार द्वारा भूमि पट्टे की अवधि उप कलक्टर द्वारा 30 वर्ष के लिए सीमेंट कंपनी के पक्ष में बढ़ाया जाना – उप कलक्टर पर आरोप विरचित किया जाना – आरोप विरचना के विरुद्ध धारा 19(1) के अधीन खंड न्यायपीठ के समक्ष अवमान अपील – जिस न्यायालय के आदेश की अवमानना की गई है, मामला पहले उसी न्यायालय के समक्ष फाइल किया जाना चाहिए और यदि अवमानकर्ता दंडित किया जाता है तब मामला खंड न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है अन्यथा नहीं और आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर अवमानकर्ता धारा 19(1) का अवलंब लेकर अवमान अपील फाइल नहीं कर सकता, अत: अवमान अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

एन. सत्यानारायणन उप कलक्टर, अरियालूर बनाम **कलैसेलवी और अन्य** 850

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 3 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 107(1)(घ)] – अतिरिक्त साक्ष्य का प्रस्तुत किया जाना – तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियों का लंबित पाया

पृष्ठ संख्या

जाना – दस्तावेजी साक्ष्य का अंतिम रूप में न पाया जाना – पति ने अपनी आय से संबंधित ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं जिनको लेकर तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियां लंबित हैं, अत:, अपील के प्रक्रम पर अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता ।

रंजन कुमार राउत्रे बनाम **मधु मोहन्ती** उर्फ **राउत्रे** 767

– धारा 73 और 47 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 7, नियम 14(1), आदेश 13, नियम 1 और आदेश 18, नियम 2] – हस्तलेख का मिलान – पति द्वारा विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पत्नी पर विवाह पूर्व प्रेम-प्रसंग का आरोप – पति द्वारा पत्नी के हस्तलेख में प्रेम-प्रसंग संबंधी उल्लेख का डायरी में पाए जाने का अभिकथन किया जाना – वादपत्र के साथ डायरी के पृष्ठों का प्रस्तुत न किया जाना – अपीलार्थी-पति ने अपने वादपत्र के साथ न डायरी के पृष्ठों को और न ही दस्तावेजों की कोई सूची फाइल की है तथा साथ ही दस्तावेजों को समुचित प्रक्रम पर फाइल न करने का कोई भी कारण नहीं दिया गया है, अत: इससे प्रेम-प्रसंग का आरोप साबित नहीं होता है जिससे निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

राकेश कांडपाल बनाम **नीलम कांडपाल** 785

साधारण बीमा कारबार (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 (1972 का 57)

– धारा 2, 9 और 16 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 12] – याची बीमा कंपनी राज्य का अंग – कंपनी

का साधारण वादी न होना – याची कंपनी का विलयन के उपरान्त राज्य की कोटि में आना – किसान बीमा योजना के अंतर्गत प्रत्यर्थी सं. 1 के पति का बीमा किया जाना – पति की दुर्घटना में मृत्यु हो जाना – मृतक की मृत्यु के पश्चात् तैयार किया गया आय प्रमाणपत्र याची बीमाकर्ता द्वारा स्वीकार न किया जाना – किसान बीमा योजना राज्य द्वारा अधिनियमित है और बीमाकर्ता तथा राज्य सरकार के बीच निष्पादित संविदा का एक भाग है और स्वयं याची के अन्वेषक की रिपोर्ट के अनुसार मृतक की वार्षिक आय 75,000/- रुपए से अधिक नहीं पाई गई जिसके लिए संविदा के अनुसार मृतक के आय प्रमाणपत्र की आवश्यकता ही नहीं है, अतः याची ने जिला समीक्षा समिति द्वारा तय की राशि प्रतिकर की राशि का भुगतान करने से इनकार करके न केवल राष्ट्रीय वाद पॉलिसी के उल्लंघन सहित राज्य सरकार के साथ की गई संविदा का अतिक्रमण किया है अपितु दावेदार किसान की विधवा के साथ अन्याय भी किया है, अतः 5 लाख रुपए प्रतिकर मंजूर करने वाले जिला समीक्षा समिति के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **उमा देवी और अन्य** 727

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 39, नियम 1 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – अस्थायी व्यादेश – अंतरिम निपटारे तक यथास्थिति बनाए रखने का आदेश – अविभाजित संपत्ति – वाद लंबित रहने के दौरान संपत्ति

पृष्ठ संख्या

का अंतरण – 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के अधीन वाद के पक्षकार का हस्तांतरण बातिल नहीं किया जा सकता किंतु यह मुकदमे के अन्य पक्षकारों के अधिकारों के लिए मात्र सहायक ही है – अतः जहां तक वाद के अन्य पक्षकारों का सम्बन्ध है, धारा 52 वाद के लंबित रहने के दौरान वाद संपत्ति से संबंधित संव्यवहार को शून्य नहीं कर सकती – वाद के लंबित रहने के दौरान, वाद संपत्ति के किसी भी अधिकार, हक़ या हित का अंतरण या किसी भी अधिकार, हक़ या हित का पारिणामिक अर्जन, वाद में विनिश्चय किए जाने के अध्यधीन होगा, अतः निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

नटवरलाल रणछोड़दास पटेल और अन्य बनाम **हरेन्द्रभाई सोमजीभाई पटेल और अन्य** 796

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 9 – दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन – विवाह-विच्छेद वाद खारिज होने पर पति द्वारा पत्नी का अधित्यजन किया जाना – पत्नी के विकृत-चित्त होने का पति द्वारा अभिवाक् किया जाना – चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा विकृत-चित्त होने की पुष्टि न होना – पति का पत्नी के साथ न रहना अयुक्तियुक्त पाया जाना – अपीलार्थी-पति यह साबित करने में असफल रहा है कि पत्नी का मानसिक विकार इस सीमा तक है कि वह उसके साथ नहीं रह सकता तथा अपीलार्थी का बातिलकरण का वाद भी निचले न्यायालय द्वारा खारिज किया गया था जिसे अपीलार्थी ने चुनौती नहीं दी है, अत: निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता और पत्नी दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की हकदार है ।

संतोष कुमार गुप्ता बनाम **राधा देवी** 825

पृष्ठ संख्या

– धारा 13(1)(i-क) [सपठित कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 14] – क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पत्नी का विवाह के लिए सहमत न होने का आरोप पति द्वारा लगाया जाना – पति का यह अभिवाक् न किया जाना कि पत्नी अभी भी प्रेम-प्रसंग में अन्तर्वलित है – विवाह-विच्छेद के लिए पति या पत्नी की ओर से वाद तब लाया जा सकता है जब दूसरे पक्षकार ने विवाह के पश्चात् वादी के साथ क्रूरता कारित की हो और अपीलार्थी का मामला यह नहीं है कि प्रतिवादी का अभी भी किसी अन्य व्यक्ति के साथ प्रेम-प्रसंग चल रहा है, अत: प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा पति के प्रति क्रूरता कारित नहीं होती है, इसलिए, निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

राकेश कांडपाल बनाम **नीलम कांडपाल** 785

– धारा 13(1)(i-क) – पति द्वारा विवाह-विच्छेद का वाद फ़ाइल किया जाना – पत्नी द्वारा स्त्रीधन वापस लेने का आवेदन किया जाना – स्त्रीधन सुनिश्चित किए जाने हेतु दोनों पक्षकारों द्वारा पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध न करना – यद्यपि पत्नी द्वारा भरणपोषण का आवेदन खारिज किए जाने संबंधी कुटुंब न्यायालय के आदेश पर आक्षेप किया गया है, फिर भी स्त्रीधन सुनिश्चित करने हेतु अतिरिक्त साक्ष्य अपेक्षित है, अतः चर्चा का विषय होने के कारण इस प्रक्रम पर स्त्रीधन की वापसी का आवेदन मंजूर नहीं किया जा सकता ।

अर्पणा विजय मनोर बनाम **विजय तुकाराम मनोर** 840

– धारा 24 – वादकालीन भरणपोषण – पति द्वारा

पृष्ठ संख्या

फाइल की गई विवाह-विच्छेद याचिका के लंबित रहने के दौरान अंतरिम निर्वाह भत्ते के लिए डा. पत्नी द्वारा आवेदन किया जाना – पत्नी द्वारा चिकित्सा व्यवसाय किया जाना और अपनी जीविका के लिए कमाना – याची-पत्नी एक चिकित्सा व्यवसायी है और वह अपनी जीविका के लिए कुछ कमाती भी है, फिर भी इस आधार पर उसे अधिनियम की धारा 24 के अधीन निर्वाह भत्ते से इनकार नहीं किया जा सकता ।

अर्पणा विजय मनोर बनाम **विजय तुकाराम मनोर** 840

– धारा 25 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 41, नियम 27] – प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा कुटुंब न्यायालय के समक्ष दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की अर्जी फाइल किया जाना – पति द्वारा दूसरा विवाह किया जाना – तत्पश्चात् पत्नी द्वारा प्रत्यास्थापन की अर्जी को विवाह-विच्छेद की अर्जी में परिवर्तन किए जाने का आवेदन फाइल किया जाना – कुटुंब न्यायालय द्वारा पत्नी के पक्ष में 35 लाख रुपए स्थायी निर्वाहिका के रूप में दिए जाने के साथ विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किया जाना – अपीलार्थी-पति द्वारा निर्वाहिका की राशि को चुनौती दिया जाना तथा साथ ही अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने का आवेदन किया जाना – स्थायी निर्वाहिका प्रदान करने के लिए कोई भी गणितीय सूत्र नहीं अपनाया जा सकता और पति द्वारा कोई भी सुसंगत साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता किन्तु भरणपोषण की राशि में वृद्धि भी नहीं की जा सकती ।

रंजन कुमार राउत्रे बनाम **मधु मोहन्ती** उर्फ **राउत्रे** 767

(2021) 1 सि. नि. प. 727 **इलाहाबाद**

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

उमा देवी और अन्य

(2020 की सिविल रिट याचिका सं. 21066)

तारीख 25 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

साधारण बीमा कारबार (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 (1972 का 57) – धारा 2, 9 और 16 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 12] – याची बीमा कंपनी राज्य का अंग – कंपनी का साधारण वादी न होना – याची कंपनी का विलयन के उपरान्त राज्य की कोटि में आना – किसान बीमा योजना के अंतर्गत प्रत्यर्थी सं. 1 के पति का बीमा किया जाना – पति की दुर्घटना में मृत्यु हो जाना – मृतक की मृत्यु के पश्चात् तैयार किया गया आय प्रमाणपत्र याची बीमाकर्ता द्वारा स्वीकार न किया जाना – किसान बीमा योजना राज्य द्वारा अधिनियमित है और बीमाकर्ता तथा राज्य सरकार के बीच निष्पादित संविदा का एक भाग है और स्वयं याची के अन्वेषक की रिपोर्ट के अनुसार मृतक की वार्षिक आय 75,000/- रुपए से अधिक नहीं पाई गई जिसके लिए संविदा के अनुसार मृतक के आय प्रमाणपत्र की आवश्यकता ही नहीं है, अतः याची ने जिला समीक्षा समिति द्वारा तय की राशि प्रतिकर की राशि का भुगतान करने से इनकार करके न केवल राष्ट्रीय वाद पॉलिसी के उल्लंघन सहित राज्य सरकार के साथ की गई संविदा का अतिक्रमण किया है अपितु दावेदार किसान की विधवा के साथ अन्याय भी किया है, अतः 5 लाख रुपए प्रतिकर मंजूर करने वाले जिला समीक्षा समिति के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार से हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 विधवा है जिसके पति और रोजीरोटी कमानेवाले कुटुंब के अर्थात् स्वर्गीय प्रमोद कोरी, आयु लगभग 25 वर्ष, की यान "टवेरा" द्वारा कारित सड़क दुर्घटना में तारीख 20 जून, 2019 को मृत्यु हो गई । वह एक गरीब किसान था जिसके पास 0.882 हेक्टेअर कृषि भूमि के कुल क्षेत्रफल का छटा भाग था । वह उपरोक्त किसान बीमा योजना के अधीन आता था । अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने किसान बीमा योजना के अधीन याची के समक्ष बीमा दावा फाइल किया । उसने सक्षम प्राधिकारी/तहसीलदार, गरोठा, झांसी द्वारा तारीख 29 अगस्त, 2019 को जारी किया गया आय प्रमाणपत्र प्राप्त किया जिसमें सभी स्रोतों से मृतक की मासिक आय 2,500/- रुपए अर्थात् 30,000/- रुपए प्रतिवर्ष लिखी हुई थी । याची ने तारीख 26 नवंम्बर, 2019 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 के दावे को खारिज कर दिया वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार से हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 विधवा है जिसके पति और रोजीरोटी कमानेवाले कुटुंब के अर्थात् स्वर्गीय प्रमोद कोरी, आयु लगभग 25 वर्ष, की यान "टवेरा" द्वारा कारित सड़क दुर्घटना में तारीख 20 जून, 2019 को मृत्यु हो गई । वह एक गरीब किसान था जिसके पास 0.882 हेक्टेअर कृषि भूमि के कुल क्षेत्रफल का छटा भाग था । वह उपरोक्त किसान बीमा योजना के अधीन आता था । अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने किसान बीमा योजना के अधीन याची के समक्ष बीमा दावा फाइल किया । उसने सक्षम प्राधिकारी/तहसीलदार, गरोठा, झांसी द्वारा तारीख 29 अगस्त, 2019 को जारी किया गया आय प्रमाणपत्र प्राप्त किया जिसमें सभी स्रोतों से मृतक की मासिक आय 2,500/- रुपए अर्थात् 30,000/- रुपए प्रतिवर्ष लिखी हुई थी । याची ने तारीख 26 नवंम्बर, 2019 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 के दावे को खारिज कर दिया । याची द्वारा अपने दावे के खारिज किए जाने से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने जिला मजिस्ट्रेट, झांसी की अध्यक्षता में जिला समीक्षा समिति के समक्ष एक आवेदन फाइल किया जिसने किसान बीमा योजना के अधीन तारीख 20 दिसंबर, 2019 का आक्षेपित "बाध्यकारी आदेश" पारित किया और प्रत्यर्थी सं 1 को 5 लाख रुपए के दावे का अधिनिर्णय किया । याची द्वारा अपने दावे

के खारिज किए जाने से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने जिला मजिस्ट्रेट, झांसी की अध्यक्षता में जिला समीक्षा समिति के समक्ष एक आवेदन फाइल किया जिसने किसान बीमा योजना के अधीन तारीख 20 दिसंबर, 2019 का आक्षेपित "बाध्यकारी आदेश" पारित किया और प्रत्यर्थी सं 1 को 5 लाख रुपए के दावे का अधिनिर्णय किया । समिति के इस आदेश से व्यथित होकर बीमा कंपनी ने उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका फाइल की । याचिका ख़ारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस प्रकार, याची बीमा कंपनी एक साधारण वादी नहीं है और विशिष्ट रूप से बीमा संविदा (जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है) बाध्य है, को संविदात्मक रूप से "बाध्यकारी आदेश" को चुनौती देने के लिए वर्तमान तुच्छ रिट याचिका फाइल नहीं करनी चाहिए थी । वर्तमान रिट याचिका फाइल करने में याची के आचरण की निंदा की जानी चाहिए क्योंकि प्रत्यर्थी सं. 1 को, वाद में घसीटने के लिए एक तुच्छ रिट याचिका फाइल की गई है जो एक विधवा है और समाज के आर्थिक रूप से कमजोर और शैक्षणिक रूप से वंचित वर्ग से संबंधित है । इस तथ्य के अतिरिक्त कि याची बीमा की संविदा के निबंधनों के अधीन आक्षेपित बाध्यकारी आदेश से बाध्य था, याची को वाद नीति का भी पालन करना चाहिए था और निष्पक्ष और एक जिम्मेदार वादी के रूप में कार्य करना चाहिए था । राष्ट्रीय वाद नीति यह मान्यता देती है कि नागरिकों के अधिकारों का संरक्षण, मौलिक अधिकारों को महत्व देना सरकार का उत्तरदायित्व है और वाद के संचालन के प्रभारी को इस मूल सिद्धांत को कभी नहीं भूलना चाहिए । वर्तमान रिट याचिका फाइल करने से पता चलता है कि याची ने न केवल उसके और राज्य-सरकार के बीच बीमा संविदा का अनादर किया है, बल्कि दावेदार अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 के अधिकारों के विरुद्ध भी अनुचित तरीके से कार्य किया है । हमने याची और राज्य सरकार के मध्य बीमा संविदा के कतिपय सुसंगत भाग का निष्कर्ष निकाला है । पूर्वोक्त संविदा के निबंधनों के अनुसार, किसानों के मामले में आय प्रमाणपत्र अपेक्षित नहीं है । प्रत्यर्थी सं. 1 का पति किसान था । इसके अतिरिक्त, भले ही उसे मजदूर मान लिया जाए, फिर भी पूरे परिवार की आय, याची की तारीख 4 अक्तूबर, 2019 अपनी

रिपोर्ट और याची के अन्वेषक की तारीख 25 नवम्बर, 2019 की रिपोर्ट के अनुसार 75,000/- रुपए से अधिक नहीं थी जैसाकि आक्षेपित आदेश में उल्लेख किया गया है । बीमा संविदा के निबंधनों के अनुसार याची, प्रत्यर्थी सं. 3 के आदेश से आबद्ध है और विनिर्दिष्ट समय के भीतर संदाय करने के लिए भी बाध्य है, जिसके न हो सकने पर प्रति सप्ताह 2,500/- रुपए की शास्ति का संदाय दावेदार को किया जाएगा और फिर भी याची ने प्रत्यर्थी सं. 1 को संदाय करने के बदले वर्तमान रिट याचिका फाइल की है । इस प्रकार, वर्तमान रिट याचिका एक तुच्छ रिट याचिका है । (पैरा 25, 28 और 30)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] (2016) 15 एस. सी. सी. 315 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 3908 : **उड़ीसा औद्योगिक संवर्धन निवेश निगम** बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** ; 29

[2014] 2014 (2) ए.डब्ल्यू.सी. 1407 (एस. सी.) : **भूसावल मुनिसिपल काउंसेल** बनाम **नीवरुति रामचन्द्र फलक और अन्य** ; 16

[2014] (2014) 13 एस. सी. सी. 666 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 एस. सी. 18 : **पंजाब राज्य विद्युत निगम लिमिटेड** बनाम **आत्मा सिंह ग्रेवाल** ; 24

[2014] (2014) 1 एस. सी. सी. 686 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 एस. सी. 94 : **निर्यात ऋण गारंटी निगम** बनाम **मैसर्स गर्ग संस इंटरनेशनल** ; 29

[2012] (2012) 8 एस. सी. सी. 781 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2881 : **गुड़गांव ग्रामीण बैंक** बनाम **खजानी** ; 23

[2011] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1989 :
नर्मदा बचाओ आंदोलन बनाम
मध्य प्रदेश राज्य और अन्य ; 17

[2010] (2010) 11 एस. सी. सी. 296 =
ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3400 :
मैसर्स सुमितोमो हेवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम
ऑयल एंड नेचुरल गैस कंपनी ; 29

[2010] (2010) 11 एस. सी. सी. 269 =
ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3400 :
महानदी कोयल फील्ड्स लिमिटेड और अन्य
बनाम **मथियास ओरम और अन्य** ; 17

[2010] (2010) 1 एस. सी. सी. 512 =
ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (अनु.) 504 :
बीकानेर बनाम **मोहन लाल** ; 24

[2010] (2010) 10 एस. सी. सी. 567 =
ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (अनु.) 23.2 :
सूरज मल राम निवास ऑयल मिल्स
प्राइवेट लिमिटेड बनाम **यूनाइटेड इंडिया**
इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड ; 29

[2009] (2009) 5 एस. सी. सी. 599 :
विक्रम ग्रीनटेक (आई) लिमिटेड और अन्य बनाम
न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड ; 29

[2008] (2008) 10 एस. सी. सी. 404 =
ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 446 :
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड
बनाम **मनुभाई धर्मसिंहभाई गजेरा** ; 18

[2001] (2001) 6 एस. सी. सी. 477 = ए. आई. आर.
ऑनलाइन 2001 एस. सी. 525 :
बिमान कृष्णा बोस बनाम **यूनाइटेड**
इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड ; 18

[1979] (1979) 4 एस. सी. सी. 701=
ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1871 :
मुंद्रिका प्रसाद सिंह बनाम **बिहार राज्य** ; 21

[1974] (1974) 3 एस. सी. सी. 554 =
ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 130 :
दिलबाग राय जेरी बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 20

[1966] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1644 :
जनरल एश्योरेंस सोसाइटी लिमिटेड
बनाम **चंदुमुल जैन और अन्य** । 29

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2020 की सिविल रिट संख्या 21066.

जिला समीक्षा समिति, झांसी द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2019 को पारित आदेश के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री पर्व अग्रवाल

प्रत्यर्थी की ओर से केन्द्रीय स्थायी काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी ने दिया ।

न्या. केसरवानी – याची ने "मुख्यमंत्री किसान एवं सर्वहित बीमा योजना" (जिसे संक्षिप्त में "किसान बीमा योजना" कहा गया है) के अधीन प्रत्यर्थी संख्या 1 के अधिनिर्णीत बीमा दावा को जिला समीक्षा समिति, झांसी (प्रत्यर्थी संख्या 3) द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2019 के पारित बाध्यकारी आदेश को चुनौती दी है ।

2. याची के विद्वान् काउंसेल श्री पर्व अग्रवाल और राज्य- प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् स्थायी काउंसेल श्री मनोज कुमार कुशवाह को सुना ।

तथ्य

3. वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार से हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 विधवा है जिसके पति और रोजीरोटी कमानेवाले कुटुंब के अर्थात् स्वर्गीय प्रमोद कोरी, आयु लगभग 25 वर्ष, की यान "टवेरा"

द्वारा कारित सड़क दुर्घटना में तारीख 20 जून, 2019 को मृत्यु हो गई । वह एक गरीब किसान था जिसके पास 0.882 हेक्टेअर कृषि भूमि के कुल क्षेत्रफल का छटा भाग था । वह उपरोक्त किसान बीमा योजना के अधीन आता था । अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने किसान बीमा योजना के अधीन याची के समक्ष बीमा दावा फाइल किया । उसने सक्षम प्राधिकारी/तहसीलदार, गरोठा, झांसी द्वारा तारीख 29 अगस्त, 2019 को जारी किया गया आय प्रमाणपत्र प्राप्त किया जिसमें सभी स्रोतों से मृतक की मासिक आय 2,500/- रुपए अर्थात् 30,000/- रुपए प्रतिवर्ष लिखी हुई थी । याची ने तारीख 26 नवंम्बर, 2019 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1 के दावे को खारिज कर दिया जो इस प्रकार है :–

> "मृतक/परिवार की वार्षिक आय का प्रमाणपत्र मृत्यु के 45 दिन बाद का बना है जो योजना में मान्य नहीं है ।"

4. याची द्वारा अपने दावे के खारिज किए जाने से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 1 ने जिला मजिस्ट्रेट, झांसी की अध्यक्षता में जिला समीक्षा समिति के समक्ष एक आवेदन फाइल किया जिसने किसान बीमा योजना के अधीन तारीख 20 दिसंबर, 2019 का आक्षेपित "बाध्यकारी आदेश" पारित किया और प्रत्यर्थी सं 1 को 5 लाख रुपए के दावे का अधिनिर्णय किया ।

5. आक्षेपित आदेश में, प्रत्यर्थी सं 3 ने यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि मृतक स्वयं यथाउल्लेखित कृषि भूमि का स्वामी था, मृतक परिवार का मुखिया/रोजीरोटी कमाने वाला था और कुटुंब की वार्षिक आय 30,000/- थी । समिति ने बीमे के दावे को मंजूरी दी और यह निदेश दिया कि यदि अधिनिर्णीत राशि एक महीने के भीतर याची-बीमा कंपनी द्वारा संदत्त नहीं की जाती है तो किसान बीमा योजना के निबंधनों के अनुसार बीमा कंपनी को 1,000/- रुपए प्रति सप्ताह की शास्ति, प्रत्यर्थी सं. 1 के पक्ष में संदत्त करनी होगी । इस आदेश से व्यथित होकर, याची बीमा कंपनी ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की है ।

6. इस न्यायालय ने तारीख 10 दिसंबर, 2020 को पक्षकारों के विद्वान् काउंसलों को विस्तार से सुना और याची को यह निदेश दिया

कि वह राज्य सरकार के समक्ष बीमा संविदा की प्रति और "मुख्यमंत्री किसान एवं सर्वहित बीमा योजना" का संपूर्ण स्कीम के साथ उपाबद्ध करते हुए, पूरक शपथपत्र फाइल करेगा । पूर्वोक्त आदेश का अनुपालन करते हुए, याची ने तारीख 15 दिसंबर, 2020 को पूरक शपथपत्र फाइल किया । "मुख्यमंत्री किसान एवं सर्वहित बीमा योजना", और तारीख 13 सिंतबर, 2018 के करार/बीमा संविदा का यथासंशोधित भाग है जो याची और उत्तर प्रदेश के राज्यपाल के मध्य निष्पादित हुआ था ।

दलीलें

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने रिट याचिका के पैरा 10,19 और 20 में किए गए प्रकथनों को निर्दिष्ट किया है जो निम्न प्रकार है :–

> "10. दावा साबित करने के लिए, दावेदार ने अपनी वार्षिक आय 30 हजार रुपए दर्शाते हुए तारीख 29 अगस्त, 2019 का एक आय प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया था । उक्त आय प्रमाणपत्र मृत्यु के 45 दिन बाद तैयार किया था । दावा याचिका की मूल प्रति के साथ आय प्रमाणपत्र फाइल किया गया है और इस रिट याचिका में उपाबंध संख्या 3 के रूप में चिन्हांकित किया गया है ।
>
> 19. यहां यह करना महत्वपूर्ण होगा कि दावेदार ने एम.ओ.यू के अधीन विहित अवधि के परे जारी किए गए आय प्रमाणपत्र के बल पर स्कीम के अधीन अपना दावा फाइल किया है ।
>
> 20. स्पष्ट दलील यह दी गई है कि वर्ष 2018 में पॉलिसी के नवीकरण के समय पर राज्य इस शर्त पर सहमत हुआ है कि आय प्रमाणपत्र 45 दिन के भीतर जारी किया जाना है न कि उसके परे और इस प्रकार तारीख 29 अगस्त, 2019 को जारी किया गया आयकर प्रमाणपत्र दावेदार के लिए घातक है, जिसके लिए उसे दायी नहीं ठहराया जा सकता ।

8. विद्वान् स्थायी काउंसेल ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया है ।

चर्चा और निष्कर्ष

9. किसान बीमा योजना को स्कीम में यथाउल्लिखित राज्य के

लाभ और निम्नलिखित उदेश्यों के साथ राज्य सरकार द्वारा अधिनियमित किया गया है जो नीचे इस प्रकार पुरःस्थापित है :–

"योजना का नाम – "मुख्यमंत्री किसान एवं सर्वहित बीमा योजना"

योजना का उद्देश्य – विभिन्न प्रकार की अनिश्चित दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं जिससे परिवार के मुखिया की मृत्यु हो सकती है/विकलांग बना सकती है जो पूरे परिवार के लिये असुरक्षा/विपत्तियां ला सकती है, की सहायता हेतु ।"

10. मुख्यतः, किसान बीमा योजना स्कीम में यथाउल्लिखित दो भागों में है, जो इस प्रकार हैं :–

"इस पॉलिसी के दो मुख्य भाग है –

1. व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा

2. दुर्घटना के उपरान्त चिकित्सा सुविधा एवं आवश्यकतानुसार कृत्रिम अंग ।

भाग – 1 **व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा** – परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक की रेल/रोड/वायुयान से दुर्घटना, किसी भी टकराव, गिरने के कारण चोट, गैस रिसाव, सर्प काटने बिच्छू, नेवला, छिपकली काटने से मरना, सिलेण्डर फटने के कारण विकलांगता या मृत्यु, विस्फोट, कुत्ता काटने, जंगली जानवर के काटने से मरना, जलना, डूबना, बाढ़ में बह जाना, किसी भी प्रकार से हाथ-पैर कट जाना एवं विषाक्ता आदि दुर्घटना में शामिल हैं ।

व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा के अन्तर्गत केवल परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक आच्छादित हैं ।

– **दुर्घटना में मृत्यु** – यदि दुर्घटना के कारण परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक की मृत्यु बीमा अवधि के दौरान हो जाती है तो बीमा कम्पनी सम्पूर्ण बीमित राशि रु. 5.00 लाख का भुगतान नामिनी/कानूनी वारिश को करेगी ।

– **दुर्घटना में विकलांगता** – दुर्घटना में परिवार के

मुखिया/रोटी अर्जक की विकलांगता की स्थिति में बीमा कम्पनी पीड़ित मुखिया/रोटी अर्जक को निम्नानुसार भुगतान करेगी –

व्यक्तिगत दुर्घटना आवरण	अभिव्यक्त मुआवजा कुल बीमित राशि का प्रतिशत में
स्थायी पूर्ण विकलांगता	100 प्रतिशत
स्थायी और लाईलाज पागलपन	100 प्रतिशत
कुल दो अंगों के स्थायी नुकसान	100 प्रतिशत
दोनों आंखों में स्थायी दृष्टि का नुकसान	100 प्रतिशत
एक अंग और एक आंख की दृष्टि का स्थायी नुकसान	100 प्रतिशत
वाक् का स्थायी नुकसान	100 प्रतिशत
निचले जबड़े की पूरी हानि	100 प्रतिशत
चबाने की स्थिति का स्थायी नुकसान	100 प्रतिशत
दोनों कानों से बहरेपन की स्थिति	75 प्रतिशत
एक अंग का स्थायी नुकसान	50 प्रतिशत
एक आंख की दृष्टि हानि का स्थायी नुकसान	50 प्रतिशत

भाग – 2 दुर्घटना के उपरान्त चिकित्सा सुविधा एवं आवश्यकतानुसार कृत्रिम अंग की उपलब्धता –

परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक तथा परिवार के सदस्य प्राथमिक उपचार एवं बड़े चिकित्सालय/ट्रामा सेन्टर में बीमित अवधि के दौरान दुर्घटना के उपरान्त चिकित्सा सुविधा एवं आवश्यकतानुसार कृत्रिम अंग प्राप्त कर सकेंगे ।

इसके अन्तर्गत परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक/परिवार का आच्छादित है ।

दुर्घटना के उपरान्त कवर

कवरेज	लाभार्थी	बीमित राशि (रु.)
दुर्घटना के उपरान्त प्राथमिक चिकित्सा	परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक/सदस्य	0.25 लाख
प्राथमिक चिकित्सा के उपरान्त बड़े चिकित्सालय/ट्रामा सेन्टर में चिकित्सा सुविधा ।	परिवार का मुखिया/रोटीअर्जक/सदस्य	2.25 लाख
आवश्यकतानुसार कृत्रिम अंग	परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक/सदस्य	1.00 लाख

11. स्कीम के अधीन, अर्हता, योजना और बीमा कवरेज की विशेषता किसान बीमा योजना में उपबंधित है, जो इस प्रकार है –

"लाभार्थी – यह योजना उत्तर प्रदेश के निवासियों के लिए हैं ।

पात्रता – उत्तर प्रदेश राज्य के समस्त कृषक (असीमित आय सीमा), भूमिहीन कृषक, कृषि से संबंधित क्रियाकलाप करने वाले, (मत्सय पालक, दुग्ध उत्पादक, सूकर पालक, बकरी पालक, मधुमक्खी इत्यादि) धुमन्तू परिवार, व्यापारी (जो कि किसी शासन योजना से आच्छादित नहीं है), वन श्रमिक, दुकानदार, फुटकर कार्य करने वाले, रिक्शा चालक, कुली एवं अन्य कार्य़ करने वाले ग्रामीण क्षेत्रों अथवा शहरी क्षेत्रों के निवासी जिनकी परिवारिक आय रु. 75,000/- प्रति वर्ष से कम हो एवं जिनकी आयु 18 वर्ष से 70 वर्ष के मध्य है, पात्र होंगे । इसमें राज्य सरकार एवं भारत सरकार तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार के पी.एस.यू. के, वित्तीय सहायता प्राप्त संस्थानों के, निजी क्षेत्र के तथा स्वशासी निकायों/सार्वजनिक उपक्रमों/निगमों/बोर्ड एवं प्राधिकरणों के कर्मचारी जो किसी बीमा कम्पनी की बीमा योजना से लाभान्वित हो रहे है, शामिल नहीं होगे । बीमा आवरण की अवधि में 18 वर्ष की आयु पूर्ण करने वाले उक्त

सभी योजना के अन्तर्गत पात्रता की परिधि में आएगें । इसी प्रकार बीमा आवरण अवधि में 70 वर्ष पूर्ण हो जाने पर उक्त सभी पात्रता श्रेणी में माने जाएगें ।

कृषक – कृषक का तात्पर्य राजस्व अभिलेखों अर्थात् खतौनी में दर्ज खातेदार/सहखातेदार से हैं, जिसकी आयु न्यूनतम 18 वर्ष तथा अधिकतम 70 वर्ष हो ।

भूमिहीन कृषक एवं कृषि से संबंधित क्रियाकलाप – ऐसे ग्रामीण भूमिहीन परिवार जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्य से जुड़े हुए हों ।

अन्य – कृषकों के अतिरिक्त जिनकी आयु 18 वर्ष से 70 वर्ष के मध्य है तथा पारिवारिक आय रु. 75,000/- प्रति वर्ष से कम हो, योजनान्तर्गत पात्र होंगे । इसमें राज्य सरकार एवं भारत सरकार तथा राज्य एवं केन्द्र सरकार के पी.एस.यू. के वित्तीय सहायता प्राप्त संस्थानों के, निजी क्षेत्र के तथा स्वशासी निकायों /सार्वजनिक उपक्रमों/निगमों/बोर्ड एवं प्राधिकरणों के कर्मचारी जो किसी बीमा कम्पनी की बीमा योजना से लाभान्वित हो रहे हैं, शामिल नहीं होंगे ।

प्रदेश सरकार के किसी भी विभाग द्वारा संचालित किसी भी दुर्घटना बीमा योजना में आच्छादित लाभार्थी मुख्यमंत्री किसान एवं सर्वहित योजना के लिए पात्र नहीं होंगे ।

परिवार आच्छादन – आच्छादित परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक (बीमा धारक) रु. 5.00 लाख तक का व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा लाभ एवं मुखिया/रोटी अर्जक/परिवार के सदस्य दुर्घटना के उपरान्त रु. 25,000/- तक प्राथमिक चिकित्सा एवं रु. 2.25 लाख तक वृहद्ध चिकित्सा लाभ तथा आवश्यकतानुसार अधिकतम रु. 1.00 लाख तक का कृत्रिम अंग प्राप्त कर सकेंगे ।

बीमा आवरण की अवधि – बीमा आवरण की अवधि संस्थागत वित्त, बीमा एवं वाह्य सहायतित परियोजना महानिदेशालय, उ.प्र.

एवं बीमा कम्पनी के मध्य मेमोरेण्डम आफ अण्डरस्टैंडिंग (एम.ओ.यू.) हस्ताक्षरित होने की तिथि से एक वर्ष के लिए मान्य होगी तदोपरान्त इसे वर्षवार बढ़ाया जायेगा । यह योजना 3 वर्ष + 3 वर्ष से अधिक नहीं होगी ।

परिवार निर्धारण – परिवार के अन्तर्गत परिवार का मुखिया/रोटी अर्जक (पुरुष/स्त्री) उसकी पत्नी/पति, अविवाहित पुत्री, आश्रित पुत्र, मुखिया पति एवं अविवाहित पुरुष के आश्रित माता-पिता बीमा का लाभ प्राप्त करने हेतु आवृत्त होगें ।

लाभार्थी की पात्रता निम्न दस्तावेजों द्वारा निर्धारित की जायेगी –

1. भू-राजस्व अभिलेख (खसरा/खतौनी कृषकों के मामलों में सहखातेदार सहित), (किसी भी कृषक को आय प्रमाणपत्र की आवश्यकता नहीं है)

2. तहसीलदार से प्राप्त आय प्रमाणपत्र (अन्य के मामलों में) ।

3. परिवार विवरण प्रमाणपत्र (कोई एक)

- परिवार रजिस्टर की प्रति ।
- राशन कार्ड
- उप जिलाधिकारी/प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट द्वारा जारी प्रमाणपत्र ।

4. आयु प्रमाणपत्र (कोई एक)

- आयु प्रमाणपत्र (कोई एक)
- हाईस्कूल प्रमाणपत्र ।
- बैंक खाते की पासबुक ।
- वोटर आई.डी. कार्ड/वोटर लिस्ट की प्रति ।
- नगर निगम/खण्ड विकास कार्यालय द्वारा जारी आयु प्रमाणपत्र ।
- पासपोर्ट ।

- ड्राईविंग लाईसेन्स ।
- आधार कार्ड
- राशन कार्ड ।

5. निवास प्रमाणपत्र (इस योजना हेतु निवास प्रमाणपत्र का निर्धारण) उ.प्र. के निवासियों हेतु निम्न से कोई एक जिसमें नाम, पता दर्ज होः

- पासपोर्ट
- ड्राइविंग लाइसेन्स
- राशन कार्ड
- बैंक खाते की पासबुक
- वोटर आई.डी.कार्ड
- आधार कार्ड
- उप जिलाधिकारी द्वारा जारी निवास प्रमाणपत्र ।

योजना की विशेषताएं

1. नगद रहित सुविधायुक्त ।

2. व्यक्तिगत दुर्घटना बीमा-परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक की दुर्घटना में मृत्यु/स्थायी पूर्ण विकलांगत/स्थायी और लाईलाज पागलपन/कुल दो अंगों के स्थायी नुकसान/दोनों आंखों में स्थायी नुकसान/ दोनों आंखो में स्थायी दृष्टि का नुकसान/ वाक् का स्थायी नुकसान पर बीमित राशि रु. 5.00 लाख, दोनों कानों से बहरेपन की स्थिति में बीमित राशि रु. 5.00 लाख का 75 प्रतिशत तथा एक अंग का स्थायी नुकसान या एक आंख की दृष्टि हानि के स्थायी नुकसान पर बीमित राशि रु. 5.00 लाख का 50 प्रतिशत लाभ दिया जायेगा ।

3. दुर्घटना के उपरान्त परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक/परिवार के सदस्य के लिए लाभ-

मुखिया/सदस्य की दुर्घटना के उपरान्त चिकित्सा के लिए- रु. 2.50 लाख

मुखिया/सदस्य आवश्यकतानुसार रु. 1.00 लाख तक का कृत्रिम अंग

बीमा आवरण – यह योजना परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक को व्यक्तिगत दुर्घटना एवं परिवार के मुखिया/रोटी अर्जक तथा परिवार के सदस्यों को दुर्घटना के उपरान्त चिकित्सा सुविधा एवं आवश्यकतानुसार कृत्रिम अंग की सुविधा प्रदान करेगी ।

12. दावे प्रस्तुत करने के लिए विस्तृत और स्पष्ट प्रक्रिया, अधिनिर्णीत दावे और बीमा कंपनी द्वारा दावे को खारिज करने की दृष्टि से और अन्य सुसंगत मामले जिसमें दावे के संदाय और याची बीमा कंपनी द्वारा गैरसंदाय के लिए प्रति सप्ताह 2,500/- रुपए की बीमा शास्ति का किसान बीमा योजना में उपबंध किया गया है जो याची और राज्य सरकार के मध्य संविदा का भाग है । स्कीम के अधीन जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में गठित की गई जिला समीक्षा समिति द्वारा पारित आदेश के बाध्यकारी उपबंध किए हैं । दावे के खारिज करने के संबंध में किसान बीमा योजना का सुसंगत भाग नीचे पुरःस्थापित किया गया है :–

"गतिरोध का निपटान-दावे के अपर्याप्त अथवा अनौचित्य पूर्ण आधारों पर अस्वीकृत करने तथा चिकित्सालयों को बीमा कंपनी द्वारा समय पर भुगतान न करने पर संबंधित <u>जिलाधिकारी की अध्यक्षता में गठित समिति का निर्णय बीमा कम्पनी पर बाध्यकारी होगा</u>"

व्यक्ति-दुर्घटना-बीमा के लिए दावा प्रक्रियाः–

(एम) यदि दावे में कोई विसंगतियां पाई जाती हैं या यदि कोई विवाद उद्भूत होता है, तो दावे का अन्वेषण किया जाएगा और अन्वेषण की रिपोर्ट संबंधित समिति जिसकी अध्यक्षता जिला अधिकारी द्वारा की गई है, को प्रस्तुत करेगा । समिति में निम्नलिखित सम्मिलित होंगेः–

(क) जिला अधिकारी,

(ख) मुख्य विकास अधिकारी,

(ग) मुख्य चिकित्सा अधिकारी,

(घ) उपखण्ड मजिस्ट्रेट ।

बीमा कंपनी के प्रतिनिधियों को भी आमंत्रित किया जाएगा । समिति सभी विसंगतियों/विवादास्पद दावों पर निर्णय लेंगी । बीमा कंपनी समिति द्वारा लिए गए निर्णय का पालन करने और एक महीने के भीतर संदाय करने के लिए बाध्य होगी । ऐसे मामलों में, बीमा कंपनी जिला अधिकारी को संदेय की गई राशि का चैक प्रस्तुत करेगी जो 15 दिन के भीतर कुटुंब के संबंधित मुखिया/कमाने वाला/नामांकित/विधिक उत्तराधिकारी (जो भी लागू हो) को सौंप देगा ।"

(मेरे द्वारा बल दिया गया)

13. उपरोक्त किसान बीमा योजना संशोधित की गई थी और इस संशोधन के अधीन याची और राज्य सरकार के मध्य बीमा संविदा के भाग को भी गठित किया गया है । संशोधन जिसमें यह सम्मिलित है कि आय-प्रमाणपत्र, बी.पी.एल कार्ड धारकों, समाजवादी पेंशन के लाभार्थियों और किसानों, खातेदार/सह-खातेदार के लिए अपेक्षित नहीं है । करार के अधीन उपरोक्त किसान बीमा योजना के प्रयोजन के लिए, करार के खंड (1) के अनुसार राज्य सरकार ने आगरा समूह 105,93,81,344/- रुपए, मेरठ समूह 54,03,58,132/- रुपए, बरेली समूह 74,22,45,091/- रुपए, कानपुर समूह 76,09,84,705/- रुपए और बस्ती समूह 25,74,05,500/- रुपए के लिए याची को वार्षिक बीमा किस्त संदत्त की है ।

14. जैसा कि उपरोक्त उल्लिखित संक्षिप्त तथ्यों और किसान बीमा योजना के सुसंगत भाग से यह प्रकट होता है कि यह योजना, जो याची और राज्य सरकार के मध्य बीमा संविदा का भाग है; निर्धन व्यक्तियों के लिए एक महत्वाकांक्षी बीमा है, जो उनको चिकित्सा/उपचार सुविधा का संरक्षण प्रदान करने के लिए समाज के आर्थिक रूप से कमजोर, उपेक्षित और लाभान्वित न हो पाने वाले वर्ग के कल्याण के पुण्य कार्य

के साथ आरंभ किया गया है और नि:शक्तता या कुटुंब के मुखिया या जीविका अर्जन करने वाले की मृत्यु होने की दशा में उनको चिकित्सा सुविधा और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करती है ।

15. निर्विवाद रूप से, प्रत्यर्थी सं. 1 का पति अर्थात् मृतक, कुटुंब का मुखिया/जीविका अर्जन करने वाला था । वह एक गरीब किसान था और इस प्रकार किसान बीमा योजना स्कीम (यथासंशोधित) के निबंधनों में कोई आय प्रमाणपत्र अपेक्षित नहीं था । प्रत्यर्थी सं. 3 अर्थात् जिला समीक्षा समिति द्वारा किया गया अधिनिर्णय संविदा के पूर्वोक्ति उल्लिखित खंड (एम) के निबंधनों में बाध्यकारी है । संविदा के निंबधनों में, याची समिति के निर्णय तथा साथ ही एक महीने के भीतर संदाय करने के लिए बाध्य है । परंतु संदाय करने के बजाय याची ने एक सामान्य मुकदमेबाज के रूप में वर्तमान रिट याचिका तुच्छ आधार पर फाइल की है ताकि प्रत्यर्थी सं. 1 को, जो एक विधवा है और जिसका संबंध सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक रूप से कमजोर वर्ग से है, मुकदमे में घसीटा जा सके ।

समाज के लघु किसान/उपेक्षित/अलाभप्रदकारी की दशा

16. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **भूसावल म्युनिसिपल काउंसेल** बनाम **नीवरुति रामचन्द्र फलक और अन्य**[1] वाले मामले में समाज के किसानों और निर्धन व्यक्तियों की दशा के संदर्भ में भूमि अर्जन मामले में कतिपय अवलोकन किया है । इसमें यह मत व्यक्त किया गया है :–

> "16. न्यायालय की न्यायिक प्रक्रिया को इन कारणों से पलटा नहीं जा सकता है क्योंकि न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग न्याय के प्रोत्साहन में ही करता है । राज्य/प्राधिकरण अक्सर यह न्यायालय तुच्छ राशि के संदाय के लिए भी बेघर गरीब दावेदारों को न्यायालय में घसीटते हैं वह भी मुकदमे में जनता का धन बर्बाद करके और यह भी, अहसास नहीं करते हैं कि गरीब लोग मुकदमे की अत्यधिक लागत वहन नहीं कर सकते और

[1] 2014 (2) ए.डब्ल्यू.सी. 1407 (एस. सी).

दुर्भाग्य से राज्य किसी भी वरिष्ठ अधिकारी के ऐसे अनुचित आचरण के लिए जिम्मेदार नहीं है । इसमें न्यायमूर्ति ब्रेनन के प्रसिद्ध शब्दों को उद्धृत करना उपयुक्त होगा –

> 'मानव हृदय में अन्याय के भय की भावना से अधिक कुछ भी नहीं है । बीमारी हम सहन कर सकते हैं । लेकिन अन्याय हमें परिस्थितियों से नीचे खींचना चाहता है । जब केवल अमीर व्यक्ति ही विधि का आनंद ले सकते हों तब एक संदेहपूर्ण विलासिता के रूप में वे निर्धन जिन्हें इसकी सबसे अधिक आवश्यकता है, इसे प्राप्त नहीं कर सकते चूंकि इसका खर्च ही इसे उनकी पहुंच से दूर कर देता है, स्वतंत्र लोकतंत्र के निरंतर अस्तित्व के लिए खतरा काल्पनिक नहीं है, बल्कि बहुत वास्तविक है, क्योंकि लोकतंत्र का जीवन न्याय की मशीनरी को इतना प्रभावी बनाने पर निर्भर करता है कि प्रत्येक नागरिक इसकी निष्पक्षता और न्यायसंगति में विश्वास करेंगे और लाभान्वित होंगे ।'

17. अपनी भूमि पर खेती करने के लिए एक किसान का मौलिक अधिकार आजीविका के अधिकार का एक भाग है "कृषि भूमि सुरक्षा की भावना और भय से मुक्त होने का आधार है। सुनिश्चित कब्जा शांति और समृद्धि का एक स्थायी स्रोत है ।" भारत मुख्य रूप से एक कृषि प्रधान समाज होने के नाते, "भूमि और सामाजिक व्यवस्था में व्यक्ति की हैसियत के मध्य एक "मजबूत कड़ी" है । "विकास की एक धुंधली दूरदर्शिता, उन लोगों के प्रति संपूर्ण उदासीनता, जो विकास प्रक्रिया से अत्यधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित हैं और प्रवर्तन और विधियों के लिए एक निश्चित असंबद्धता एक ऐसी प्रास्थिति की ओर ले जाती है जहां संविधान के अधीन किए गए वादे और प्रत्याभूति अधिकार और लाभ शायद ही कभी हाशिए पर रखे गए नागरिकों तक पहुंचते हैं । उन व्यक्तियों के लिए जिनका जीवन और आजीविका मूलभूत रूप से भूमि से जुड़ी हुई है । एक व्यवसायिक अर्थव्यवस्था के लिए आर्थिक और

सांस्कृतिक परिवर्तन दर्दनाक हो सकता है ।" [देखिए: महानदी कोल फील्ड्स लिमिटेड और अन्य **बनाम** मथियास ओरम और अन्य) (2010) 11 एस. सी. सी. 269] और नर्मदा बचाओ आंदोलन **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य [ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1989] ।

18. एक किसान का जीवन निरंतर अस्तित्व के लिए प्रयोग और संघर्ष की कहानी है । केवल शब्दों या दृश्यों से कभी यह पता नहीं चलता है कि एक भारतीय किसान के रूप में जीवन जीने का क्या अर्थ है । जब तक कोई उनके संघर्ष का अनुभव नहीं करता तो उसकी पीड़ा को वह कभी समझ नहीं पाएगा कि वह कैसा महसूस करता है । कृषक समुदाय के सामने बहुत से जोखिम हैं; वे सूखे और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं से संबंधित हैं; निवेश और उत्पादन के मूल्यों में उच्च उतार-चढ़ाव, जिस पर उनका कोई नियंत्रण नहीं है; एक क्रेडिट प्रणाली जो कभी भी जरुरतमंदों की मदद के लिए हाथ नहीं बढ़ाती है; बिचौलियों के वर्चस्व जो किसान के कठिन परिश्रम का फायदा उठाते हैं; नकली निवेश और हाल ही में श्रमिकों की कमी की घटना, जिसे आसानी से उनके संकट की कहानी से जोड़ा जा सकता है । हाल ही में, देश के विभिन्न हिस्सों में हताशा से पीड़ित किसानों द्वारा अपनी जीवन लीला समाप्त करने के बहुत से मामले सामने आए हैं । अर्थशास्त्र के सिद्धांत एक वस्तु के उत्पादन की कीमत निर्धारित करने का उपबंध करते हैं, लेकिन एक भारतीय किसान शायद अर्थशास्त्र के इस सिद्धांत का एकमात्र अपवाद है, क्योंकि उनकी कृषि उपज हेतु उचित मूल्य प्राप्त करना भी उनके लिए कठिन है । 1990 के दशक के दौरान आर्थिक विकास ने भारत को और अधिक बाजारोन्मुखी अर्थव्यवस्था बना दिया था, परंतु सभी भारतीय किसानों को सामांतर रूप से लाभान्वित करने में विफल रहा । कई दशक पूर्व किसानों की जो समस्याएं थीं, वे आज भी स्पष्ट रूप से विद्यमान हैं; मात्र एक लघु क्रेडिट ही उपलब्ध है । जो उपलब्ध है वह बहुत महंगा है ।

कृषि कार्यों के संचालन में सर्वोत्तम अभ्यास पर कोई योजना नहीं है । कृषि से होने वाली आय एक किसान के कुटुंब की न्यूनतम आवश्यकताओं को भी पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है । सरकार की ओर से निःशुल्क स्वास्थ्य सुविधाएं जैसी सहायता प्रणालियां वास्तव में ना के बराबर हैं । लाखों व्यक्तियों का नौकरी की खोज में अपना घर छोड़ने का नाटक, जो कि गांवों में मौजूद नहीं हैं, तेजी से वयस्कों के सक्षम शरीर निर्बल हो रहे हैं और वे बूढ़े, भूखे और कमजोरों को भी पीछे छोड़ रहे हैं । परिवार अलग-अलग दिशाओं में अपने सदस्यों के मुखिया के रूप में टूट जाते हैं ।

(मेरे द्वारा बल दिया गया)"

सरकारी बीमा कंपनी - क्या एक साधारण वादी है

17. स्वतंत्रता से पूर्व, भारत में बीमा व्यवसाय का स्वामित्व और संचालन निजी संस्थाओं के पास था । भारत में बीमे की शासित विधि अभी भी बीमा अधिनियम, 1938 के अधीन है । स्वतंत्रता के बाद, 1956 की औद्योगिक नीति संकल्प द्वारा, भारत में जीवन बीमा उद्योग का राष्ट्रीयकरण किया जाना था ।

1956 के जीवन बीमा निगम अधिनियम, को एक कानूनी निगम के रूप में जीवन बीमा सृजित करते हुए पारित किया गया और सभी निजी जीवन बीमा कंपनियों की संपत्ति भारतीय जीवन बीमा निगम को अंतरित कर दी गई थी । तत्पश्चात्, साधारण बीमा (आपातकालीन उपबंध) अधिनियम, 1971 को संसद् द्वारा पारित किया गया जो साधारण बीमा व्यवसाय के प्रबंधन को संभालने के लिए शक्ति प्रदान करता है । आरंभ में, केंद्रीय सरकार ने राष्ट्रीयकरण की दिशा में एक प्रारंभिक कदम के रूप में साधारण बीमा व्यवसाय के प्रबंधन को ग्रहण किया । इसके बाद, साधारण बीमा व्यवसाय (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 पारित किया गया । अधिनियम, 1972 की धारा 16 में निजी बीमा कंपनियों के चार बीमा कंपनियों अर्थात् (क) नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (ख) न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (ग) ओरियंटल

इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और (घ) यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड में विलय करने पर विचार किया गया था । ये चारों बीमा कंपनियां जनरल इंश्योरेंस कार्पोरेशन ऑफ इंडिया की पूर्णरूप से स्वामित्व वाली सहायक कंपनियां हैं, जो कंपनी अधिनियम के अधीन पंजीकृत एक सरकारी कंपनी है, लेकिन पूर्वोक्त राष्ट्रीयकरण अधिनियम की धारा 9 के अधीन आज्ञापक रूप से निगमित है । इस प्रकार, याची-बीमा कंपनी भारतीय साधारण बीमा निगम की पूर्ण स्वामित्व वाली सहायक कंपनी है ।

18. याची एक सरकारी बीमा कंपनी है । **बिमान कृष्णा बोस** बनाम **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने एक समान बीमा कंपनी, अर्थात् यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड पर विचार किया और यह अवलोकन किया है कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थांतर्गत एक राज्य है । आगे यह अभिनिर्धारित किया है कि संविदात्मक संबंधों के क्षेत्र में भी, राज्य और उसके साधनों को निष्पक्षता के साथ कृत्य करने के दायित्वों के साथ जोड़ा जाता है और किसी निर्णय पर पहुंचते हुए कोई अप्रासंगिक और असंगत विचार नहीं करना चाहिए । उनके कृत्यों या निर्णयों में मनमानी प्रतीत नहीं होनी चाहिए । **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **मनुभाई धर्मसिंहभाई गजेरा**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थांतर्गत यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी को राज्य के रूप में अभिनिर्धारित किया गया है और यह अवलोकन किया है कि इसे 1972 के साधारण बीमा व्यवसाय राष्ट्रीयकरण अधिनियम के अधीन सृजित किया है और इससे संबंधित प्रस्तावना यह दर्शाती है कि इसे कतिपय प्रयोजनों को प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों और/या व्यक्तियों के समूहों उनमें से जो भी हों, का आर्थिक लाभ पाने के लिए अधिनियमित किया था । आगे यह मत व्यक्त किया गया है कि क्षेत्र में एक निजी खिलाड़ी (कंपनी) और एक

---

[1] (2001) 6 एस. सी. सी. 477 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2001 एस. सी. 525.

[2] (2008) 10 एस. सी. सी. 404 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 446.

सार्वजनिक क्षेत्र की बीमा कंपनी के मध्य एक भिन्नता विद्यमान थी । चूंकि एक निजी खिलाड़ी (कंपनी) क्षेत्र में संचालित सांविधिक विनियमों से भी बाध्य है, इसलिए सार्वजनिक क्षेत्र की बीमा कंपनियां भी केंद्रीय सरकार के अधीन साधारण बीमा निगम द्वारा जारी किए गए निदेशों से बाध्य हैं । सार्वजनिक क्षेत्र की बीमा कंपनियों की, राज्य होने के नाते एक भिन्न भूमिका है । यह कहना सहीं नहीं है कि नीति के मामले में, कानूनी या अन्यथा, बीमा कंपनियां निदेशात्मक सिद्धांतों के कथन को ध्यान में रखते हुए बीमे की सभी संविदाएं विनियमित करने के लिए बाध्य हैं, परंतु इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि बीमा कंपनियों की निष्पक्षता और तर्कसंगतता उनके सभी व्यवहारों में दिखाई देनी चाहिए ।

19. इस प्रकार, याची बीमा कंपनी एक सरकारी कंपनी होने के नाते कोई साधारण वादी नहीं है । यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थांतर्गत राज्य है ।

20. **दिलबाग राय जेरी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय कृष्ण अय्यर जे. (सहमत) ने यह विचार व्यक्त किया कि मुकदमेबाजी में सरकार का दृष्टिकोण कैसा होना चाहिए और इसे निम्नानुसार व्यक्त किया गया है :–

> "हाल ही में दिए गए निर्णय के पक्ष में मेरी पूर्णरूप से सहमति है, परंतु मैं गुणागुण पर कुछ अवलोकन करने के लिए नहीं बल्कि मुकदमेबाजी की सरकारी कार्यशैली पर कुछ टिप्पणियां करने के लिए बाध्य हूं, वर्तमान मामला एक गंभीर त्रुटि के कारण सृजित हुआ है । आजकल इस देश में राज्य सबसे बड़ा वादी है और इसके लिए राज्य सरकार के सार्वजनिक खजाने पर अत्यधिक भार पड़ता है । राज्य की गतिविधि और जिम्मेदारी के विस्तार के संदर्भ में, क्या इसकी मुकदमेबाजी नीति में बेहतर समझ और संवेदनशीलता की अपेक्षा करना अनुचित है, जिसके अभाव में, वर्तमान मामले में, रेलवे को अपने ही कर्मचारी से एक छोटे से पदाधिकारी द्वारा कार्रवाई का विरोध करने हेतु, मात्र एक तकनीकी

[1] (1974) 3 एस. सी. सी. 554 = ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 130.

अभिवाक् के अधार पर जिसे शीर्ष न्यायालय तक ले जाया गया है हाल ही में उद्घोषित निर्णय में नकारात्मक के रूप में उल्लेख किया गया है । इस प्रकार का दृष्टांत यह भी है कि भारत के विधि आयोग ने हाल ही में सिविल प्रक्रिया संहिता में संशोधन पर एक रिपोर्ट में धारा 80 को समाप्त करने का सुझाव दिया है । हमने यह देखा है कि सरकार द्वारा शायद ही कभी हितकारी उपबंध का उपयोग किया गया हो और सरकारी मुकदमेबाजी के लिए विशेष प्रक्रिया प्रदान करने के लिए आगे बढ़ाया गया हो ताकि दावों के उचित समाधान की एक सक्रिय नीति की आवश्यकता को विशेष रूप से दर्शाया जा सके जहां राज्य एक पक्षकार है । हमारे जैसे कल्याणकारी राज्य के लिए दोहरे मापदंड अपनाना सही नहीं है, और निर्धनों के लिए विधि सहायता की मानवतावादी परियोजना तैयार करते समय इसके अधीन निर्धन कर्मचारियों के दावों को परिसीमा आदि के अधीन सीमित करें । यह प्रवृत्ति मेरे द्वारा केरल उच्च न्यायालय के निर्णय में की गई कुछ पुरानी टिप्पणियों का प्रभाव है, जिसे मैं यहां लाभप्रदकारी रूप से उद्धृत कर सकता हूं – "राज्य, हमारे संविधान के अधीन, एक विशाल और व्यापक सार्वजनिक क्षेत्र में आर्थिक गतिविधियां करता है और अनिवार्य रूप से निजी क्षेत्रों के साथ विवादों में शामिल हो जाता है । लेकिन यह याद रखना चाहिए कि राज्य कोई साधारण पक्षकार नहीं है जो अपने ही नागरिकों में से किसी एक के विरुद्ध किसी भी तरह से वाद जीतने का प्रयत्न करता है; राज्य के हित के लिए सत्य दावों को पूरा करना, पर्याप्त अभिरक्षा प्रदान करना और कभी न्यायसंगत दायित्व से बचने या अनुचित लाभ को सुरक्षित करने के लिए तकनीकी बिन्दुओं का सहारा कमजोर पक्षकार के विरुद्ध नहीं लेना चाहिए । राज्य एक सदाचारी वादी है और अनैतिक न्यायालयिक सफलताओं पर निष्पक्षता के साथ देखता है ताकि अगर गुणागुण के आधार पर मामला कमजोर हो, तो सरकार प्रतिष्ठा और अन्य तुच्छ बातों की परवाह किए बिना निजी पक्षकारों के विवाद को न्यायालय में निपटाने की इच्छा दर्शाती है । राज्य और उसकी एजेंसियों द्वारा वाद की लागत और कार्यकारी समय पर लेआउट

इन दिनों बहुत चौंका देने वाला है क्योंकि मुकदमों की बड़ी संख्या का यह अर्थ है कि कानूनी मामलों में कमी करने की सकारात्मक और स्वस्थ नीति अपनाई जानी चाहिए ताकि ऐसी जगह न्यायालयिक परीक्षा का सहारा न लेना पड़े जहां एक उचित समायोजन संभव है और सदैव एक लंबित कार्यवाही को उचित शर्तों पर समाप्त करने का प्रयास किया जाए जिससे सरकार के विधिक परामर्शदाताओं को इस संबंध में कुछ शुरुआत करने का प्राधिकार मिले । मैं किसी न्यायिक प्रवचन में शामिल नहीं हूं, बल्कि 1957 में भारत के विधि मंत्रियों के सम्मेलन में विकसित राज्य वाद पर गतिशील राष्ट्रीय नीति की प्रतिध्वनि कर रहा हूं । यह द्वितीय अपील मुझे उस नीति की अवहेलना के उदाहरण के रूप में प्रभावित करती है ।"

(मेरे द्वारा बल दिया गया)

21. **मुंद्रिका प्रसाद सिंह** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार आयोजित किया :–

"5. बिहार राज्य में, देश के कई अन्य राज्यों की तरह, मुकदमों की एक बड़ी संख्या है । किसी भी राज्य के लिए सरकारी वाद नीति अत्यंत महत्वपूर्ण है यदि संसाधनों को न्यायालय की कार्यवाही में अपनी भागीदारी बढ़ाने के बजाय कम करने के लिए पतित किया जाए । यह खेदजनक है कि एक अखिल भारतीय विधि मंत्रियों के सम्मेलन में राज्यों के लिए एक राष्ट्रीय वाद नीति विकसित होने और विवादों के समाधान को बढ़ावा देने के लिए जहां सरकार एक पक्षकार है । केंद्रीय विधि आयोग की सिफारिशों के बावजूद हमारा यह निष्कर्ष है कि ऐसी किसी भी नीति से अंजान न्यायालयों में सरकारी मामलों की संख्या में बढ़ोतरी होगी । वास्तव में, इस देश के संपूर्ण मुकदमों में सरकारी मुकदमों की कुल संख्या का एक बड़ा हिस्सा है और यह महत्वपूर्ण है कि राज्य निपटान पर उच्चारण के साथ एक मॉडल वादी होना चाहिए । विधि आयोग ने केरल के एक निर्णय को दृष्टिगत हुए, 1973 में

[1] (1979) 4 एस. सी. सी. 701 = ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1871.

इस पहलू पर जोर दिया और आदेश 5ख के नियम 27 के रूप में नए उपबंध की सिफारिश करने की सीमा तक कार्य किया । आयोग ने यह मत व्यक्त किया –

> 27.9 हमारा यह मत है कि कुछ ऐसे उपबंध होने चाहिए जिनमें समाधान के लिए सकारात्मक प्रयत्नों की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए, जिसमें सरकार एक पक्षकार है ।
>
> 27.10 उपरोक्त के अंत को ध्यान में रखते हुए, हम निम्नलिखित नियम को अंतःस्थापित करने की सिफारिश करते हैं –
>
> > 5.ख (1) प्रत्येक वाद या कार्यवाही में जिसमें सरकार एक पक्षकार है या अपनी शासकीय क्षमता में कार्य करने वाला एक सार्वजनिक अधिकारी एक पक्षकार है, यह न्यायालय का कर्तव्य होगा कि पहली बार में, प्रत्येक मामले में जहां यह मामले की परिस्थितियों की प्रकृति के साथ लगातार ऐसा करना संभव है, वाद की विषय-सूची के संबंध में समझौता करने में पक्षकारों की सहायता करने के लिए हर संभव प्रयत्न करता है ।
> >
> > (2) यदि, ऐसे किसी वाद या प्रक्रिया में, किसी भी स्तर पर, न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पक्षकारों के मध्य सुलह की उचित संभावना है, तो प्रयत्नों को सक्षम और इस तरह के समझौते को प्रभावी बनाने के लिए न्यायालय ऐसी अवधि के लिए जो वह उचित समझे, कार्यवाही को स्थगित कर सकता है ।
> >
> > (3) उप-नियम (2) द्वारा प्रदत्त शक्ति न्यायालय की कार्यवाही को स्थगित करने की किसी अन्य शक्ति के अतिरिक्त है ।

6. इन व्यापक अवलोकनों की प्रासंगिकता यह है कि परिहार्य वाद, यदि लड़े जाते हैं तब शुल्क और अधिक शुल्क के रूप में

धनराशि बचाते हैं एक अधिवक्ता को देनी पड़ती है और किसी भी अन्य सम-अर्थशास्त्री के जैसे, सट्टा के आधार पर आय की संगणना करने के लिए आकर्षित करती है, क्योंकि यह सरकार के अधिवक्ता ने एक लाख रुपए की प्रत्याशा में कार्य किया है ।

7. हमनें अधीनस्थ न्यायालयों में सरकारी अधिवक्ताओं के शुल्क के लिए बिहार सरकार की जांच का माध्यम लिया है । नियम 115 प्रलोभन देता है और इसमें सम्मिलित कार्य की मात्रा या गुणवत्ता का उल्लेख नहीं है और न ही खर्च किए गए समय से कोई संबंध है । भूमि अधिग्रहण के मामलों के लिए शुल्क निर्धारित करने में मूल्यानुसार संगणना में अधिवक्ताओं के लिए उपार्जित आय को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति होती है । यह याची संभवतः इसी प्रवृत्ति का शिकार हुआ है । अब समय आ गया है कि राज्य सरकारों को न केवल वाद नीति पर बल्कि अधिवक्ता के शुल्क नियमों (जैसे बिहार के दृष्टांत में नियम 115) पर विशेष रूप से सामूहिक वादों में मूल्यानुसार अंतवर्लित विशालता और यांत्रिक व्यवसायिकता पर दूसरा आर्थिक दृष्टिकोण रखना चाहिए । यहां तक कि सार्वजनिक क्षेत्र के स्रोतों से आय की एक सीमा भी व्यवसायिक प्रणाली के नैतिक स्तर को सुदृढ़ बनाने में एक निरामय योगदायी हो सकती है । अंततः, न्याय की लागत पीड़ित लोगों के लिए विधि के नियम का अंतिम उपाय है । सरकार और अन्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को बहुत छूट नहीं दी जानी चाहिए और ऐसी लागत की प्रणाली को बढ़ाना चाहिए । हो सकता है कि यह याचिका फाइल नहीं की गई होती तो बिना प्रयत्न के आय की संभावना सरकारी नियमों द्वारा प्रस्तावित नहीं की जाती।"

(मेरे द्वारा बल दिया गया)

22. नगर सुधार न्यास के मामले में **बीकानेर** बनाम **मोहन लाल**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने सरकारों और राज्य के

[1] (2010) 1 एस. सी. सी. 512= ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (अनु.) 504.

प्राधिकारियों द्वारा अनुचित वादों पर प्रकाश डाला है जो इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"10. सरकारों और कानूनी प्राधिकरणों द्वारा अनुचित वाद मूल रूप से उनके अधिकारियों द्वारा दो साधारण आधारहीन उपधारणाओं से उद्भूत होते हैं । वे इस प्रकार हैं –

(i) सरकार/कानूनी प्राधिकारियों के विरुद्ध सभी दावों को अवैध माना जाना चाहिए और उनका विरोध किया जाना चाहिए तथा यह प्रयास देश के उच्चतम न्यायालय तक किया जाना चाहिए ।

(ii) यदि किसी विवाद्यक पर निर्णय लेने से बचा जा सकता है, तो यह समझदारी होती है कि उस मुद्दे पर निर्णय न लें और व्यथित पक्षकार को न्यायालय में समावेदन करने दें और निर्णय सुरक्षित रखें ।

निर्णय लेने की अनिच्छा, या उनके विरुद्ध सभी आदेशों को चुनौती देने की प्रवृत्ति, सरकारों या कानूनी प्राधिकरणों की नीति नहीं है बल्कि कुछ अधिकारियों के लिए आरोप्य है जो निर्णय लेने के लिए उत्तरदायी हैं और/या वाद के भारसाधक अधिकारी हैं । उनकी अनिच्छा इस प्रवृत्ति से उद्भूत होती है कि वे यह नहीं चाहते हैं कि उन पर अनुचित हेतु के कारण भविष्य में गलत निर्णय पारित करने का आरोप लगे । जब तक उनकी असुरक्षा और भय को दूर नहीं किया जाता तब तक अधिकारी, निर्णय लेने के उत्तरदायित्व न्यायालयों और अधिकरणों को सौंपते रहेंगे ।

11. केंद्रीय सरकार अब सरकार के विरुद्ध फाइल किए गए मामलों की अभिरक्षा के लिए यथार्थवादी और व्यावहारिक मानदंड तैयार करके और प्रतिकूल निर्णयों के विरुद्ध अपील और संशोधन फाइल करने के लिए इस विवाद्यक से निपटने का प्रयत्न कर रही है, जिससे अनावश्यक वादों का अंत हो गया है । लेकिन, यह पर्याप्त नहीं है कि अकेले केंद्रीय सरकार ऐसा कार्य करे । राज्य सरकारों और कानूनी प्राधिकरणों, जिनके पास केंद्रीय सरकार से

अधिक वाद हैं, को भी अनावश्यक वादों को समाप्त करने के लिए वास्तविक प्रयत्न करने चाहिए । तंग करने वाले और अनावश्यक वाद लंबे समय से न्याय की परिक्रमा को रोक रहे हैं, जिससे न्यायालयों और अधिकरणों के लिए स्वाभाविक और जरुरतमंद वादियों की न्याय तक पहुंच आसान और त्वरित करना कठिन हो गया है ।

12. इस मामले में, राज्य आयोग द्वारा जो तथ्य और परिस्थितियों में न्यूनतम अनुतोष प्रदान किया जाता है, वह 5,000/- रुपए के नाममात्र प्रतिकर के साथ वैकल्पिक भूखंड के आबंटन का निदेश देना है । परंतु सुधार न्यास उपभोक्ता मंच के निर्णय का अनुपालन करते हुए त्रुटि दूर करने के बदले अपने अवैध कृत्य को यह कहकर दर्शाने का प्रयास कर रहा है कि जब आबंटनकर्ता ने अपने भूखंड में अवैध रूप से मार्ग बनाया तो उसका विरोध किया जाना चाहिए था । इसने राष्ट्रीय आयोग और फिर इस न्यायालय के समक्ष समावेदन करके अनावश्यक वादों में लिप्त होकर अपने अनुचित और असंगत रुख को कायम रखा है । न्यास को अपने अधिकारियों को उनके तानाशाही कृत्यों को सही ठहराने के बदले जनता की सेवा करने के लिए संवेदनशील बनाना चाहिए । उन्हे ऐसे अनावश्यक वादों से बचना चाहिए ।"

23. **गुड़गांव ग्रामीण बैंक** बनाम **खजानी**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने लघु और तुच्छ मामलों में वाद चलाने के लिए सरकार के दृष्टिकोण पर विचार किया और इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

"2. हमारे देश में वादों की संख्या बढ़ रही है, लघु और तुच्छ मामलों के लिए, लोग और कभी-कभी केंद्रीय और राज्य सरकारें और उनके साधन अर्थात् राष्ट्रीयकृत या निजी बैंक न्यायालयों में आते हैं, जिसका कारण अहंकार या अधिकारियों को अपनी प्रतिष्ठा बचाना हो सकता है । न्यायिक प्रणाली पर अधिक भार है,

[1] (2012) 8 एस. सी. सी. 781 = ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2881.

स्वाभाविक रूप से विवादों के निर्णय में देरी होती है । हमारे देश के विभिन्न हिस्सों में खोले गए मध्यस्थता केंद्रों ने कुछ सीमा तक न्यायालयों के भार को कम किया है लेकिन हम अभी भी अंधकार में हैं और प्रकाश से बहुत दूर हैं । एक से अधिक अवसरों पर, इस न्यायालय ने केंद्रीय सरकार, राज्य सरकारों और अन्य साधनों के साथ-साथ विभिन्न बैंकिंग संस्थानों को अपने अंत में विवादों को हल करने के लिए गंभीर प्रयत्न करने के लिए स्मरण कराया है । कभी-कभी कुछ लेने और देने की रीति अपनाई जानी चाहिए वरना दोनों ही निष्फल हो जाएंगी जब तक साधारण महत्व के विधि के गंभीर प्रश्न विचार करने के लिए उद्भूत नहीं होते हैं या कोई प्रश्न जो बड़ी संख्या में व्यक्तियों को प्रभावित करता है या परिस्थितियां बहुत गंभीर हों, तब न्यायालयों की अधिकारिता का अवलंब लघु या तुच्छ मामलों के समाधान के लिए नहीं लिया जा सकता । जैसे भारत के उच्चतम न्यायालय के स्तर पर भी इस प्रकार के मामलों को न्यायालयों में लाया जा रहा है, उससे हम वास्तव में परेशान हैं और यह मामला उसी श्रेणी में आता है ।"

(मेरे द्वारा बल दिया गया)

24. **पंजाब राज्य विद्युत निगम लिमिटेड** बनाम **आत्मा सिंह ग्रेवाल**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस तथ्य का उल्लेख किया कि न्यायालय प्राथमिक रूप से इस कारण से अनावश्यक मुकदमों के भार से दब जाते हैं कि सरकार या पी.एस.यू., इत्यादि अपील फाइल करने का इरादा कर लेते हैं भले ही उसमें कोई गुणता न हो । माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे इस प्रकार मत व्यक्त किया है :–

"8. यह प्रथम बार नहीं है कि न्यायालय को अपनी व्यथा व्यक्त करनी पड़ी है । हम यह अवलोकन करना चाहेंगे कि अनावश्यक रूप से अपीलें फाइल करने में सरकारी एजेंसियों/उपक्रमों की मानसिकता पर भारत विधि आयोग द्वारा बहुत पहले 1973 में अपनी 54वीं रिपोर्ट में उल्लेख किया गया था । विधि आयोग की

[1] (2014) 13 एस. सी. सी. 666 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 एस. सी. 18.

पूर्वोक्त रिपोर्ट के साथ-साथ राज्यों के लिए राष्ट्रीय वाद नीति का संज्ञान लेते हुए, जिसे वर्ष 1972 में एक अखिल भारतीय विधि मंत्रियों के सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया था, इस न्यायालय को इस बात पर जोर देना था कि इसमें अनावश्यक वाद या अपील नहीं होनी चाहिए । ऐसा मुंद्रिका प्रसाद सिंह **बनाम** बिहार राज्य [(1974) 4 एस. सी. सी. 701 = ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1871] वाले मामले में किया गया था । हम न्यायमूर्ति वी. आर. कृष्ण अय्यर द्वारा व्यक्त बुद्धिमत्ता के निम्नलिखित शब्दों को भी पुर:स्थापित करना चाहेंगे, जिन्होंने दिलबाग राय जरी **बनाम** भारत संघ और अन्य [(1974) 3 एस. सी. सी. 554 = ए. आई. आर. 1974 एस. सी. 130] वाले मामले के पृष्ठ 562 पर पैरा 25 में व्यक्त किया था ।

लेकिन यह याद रखना चाहिए कि राज्य कोई साधारण पक्षकार नहीं है जो अपने ही नागरिकों में से किसी एक के विरुद्ध किसी भी तरह से वाद जीतने का प्रयत्न करता है ; राज्य के हित के लिए सत्य दावों को पूरा करना, पर्याप्त अभिरक्षा प्रदान करना और कभी न्यायसंगत दायित्व से बचने या अनुचित लाभ को सुरक्षित करने के लिए तकनीकी बिन्दुओं का सहारा कमजोर पक्षकार के विरुद्ध नहीं लेना चाहिए । राज्य एक सदाचारी वादी है और अनैतिक न्यायालयिक सफलताओं पर निष्पक्षता के साथ देखता है ताकि अगर गुणागुण के आधार पर मामला कमजोर हो, तो सरकार प्रतिष्ठा और अन्य तुच्छ बातों की परवाह किए बिना निजी पक्षकारों के विवाद को न्यायालय में निपटाने की इच्छा दर्शाती है । राज्य और उसकी एजेंसियों द्वारा वाद की लागत और कार्यकारी समय पर लेआउट इन दिनों बहुत चौंका देने वाला है क्योंकि मुकदमों की बड़ी संख्या का यह अर्थ है कि कानूनी मामलों में कमी करने की सकारात्मक और स्वस्थ नीति अपनाई जानी चाहिए ताकि ऐसी जगह न्यायालयिक परीक्षा का सहारा न लेना पड़े जहां एक उचित समायोजन संभव है और सदैव एक लंबित कार्यवाही को उचित शर्तों पर समाप्त करने का प्रयास किया जाए जिससे सरकार के विधिक परामर्शदाताओं को इस संबंध में कुछ शुरुआत करने का प्राधिकार मिले ।

9. अपनी 126वीं रिपोर्ट (1988) में, भारत के विधि आयोग ने नियमित रूप से अपील फाइल करने की दुस्साहसी रीति पर प्रतिकूल टिप्पणी की । हम सुसंगत भाग को इसमें यहां उद्धृत करते हैं –

> "2.5 इस प्रकार कभी-कभी न्याय के निर्वहन जैसे कर्तव्य का अनुपालन करने में विफल रहने के कारण भी वाद उत्पन्न होता है । शक्ति में एक प्रकार का विश्वास अंतर्निहित होता है । राज्य को लोक संपत्ति से निपटने की शक्ति प्राप्त है । उस शक्ति का प्रयोग न्यास-लाभ हितों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । इस स्थिति पर विफलता से संबंधित न्यायालय द्वारा प्राय: टिप्पणी की गई है, यदि इसे उस भाव से किया जाए जिसमें इसे बनाया गया था, तो सरकार और पब्लिक सेक्टर को अपनी वाद नीति तैयार करने के लिए बहुत पहले सक्रिय किया गया होता । जब पूरी तरह से तुच्छ वाद उच्चतम न्यायालय के दरवाजे तक पहुंच जाता है, तब पक्षकार न्यायालय से आंख बंद करके सबूत की निष्क्रियता और कुछ न करने की नीति से हताशा महसूस करता है । पंजाब राज्य द्वारा एक विशेष इजाजत याचिका को खारिज करते हुए, न्यायालय ने पाया कि निचले न्यायालयों में राज्य की उचित हार, वाद के प्रति प्रशासन की घोर उदासीनता को प्रदर्शित करती है । न्यायालय ने तब प्रभावी उपचार का सुझाव दिया । इसका परिशीलन किया जा सकता है : (एस. सी. सी. पृष्ठ 69, पैरा 4)' 4. हम इस बात पर जोर देना चाहेंगे कि सरकार को संसदीय सामाजिक लेखा परीक्षा द्वारा निष्क्रियता से समुदाय पर किए गए व्यर्थ मुकदमे के व्यय के लिए जवाबदेह बनाया जाना चाहिए । सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 80 के अधीन एक कानूनी नोटिस का आशय राज्य को एक उचित समझौते पर बातचीत करने के लिए सचेत करना है या कम से कम यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि दावे का विरोध क्यों किया जा रहा है । अब धारा 80 एक परम्परा बन गई है क्योंकि प्रशासन अक्सर अनुत्तरदायी होता है और केंद्रीय विधि आयोग की सिफारिशों को हटाने के

बावजूद संहिता में धारा 80 को जारी रखने में संसद् की अपेक्षा पर खरा नहीं उतरता है । मध्यस्थता के माध्यम से विवाद को निपटाने का अवसर भी सरासर निष्क्रियता के आधार पर छीन लिया गया था । राज्य के लिए एक वाद नीति में नागरिकों के साथ सरकारी विवादों का निपटारा, लड़ने के बजाय सुलह की भावना से करना बेहतर है । वास्तव में, यह राज्य को यह निदेश दिया जाना चाहिए कि वह अपने विधि अधिकारी को विवादों को न्यायालय में जारी रखने के बजाय उनका निपटारा करें ।

हम यह अवलोकन करने के लिए इसलिए विवश हैं कि अधिकांश मुकदमे जिनमें सरकारें अंतर्वलित हैं, न्यायालयों में उनका ढेर लगा हुआ था जिसकी सार्वजनिक रूप से आलोचना भी होती है । हम आशा करते हैं कि सरकारी मुकदमों में अधिक प्रतिक्रियाशील भावना से काम किया जाएगा ताकि जनता की धनराशि को बर्बाद होने से बचाया जा सके और न्यायालयों में उन मामलों को शीघ्रता से निपटाने के कार्य पर ध्यान दिया जाना चाहिए ।

अवलोकनों को किए हुए लगभग एक दशक बीत चुका है फिर भी इस संबंध में एक पृष्ठ भी नहीं पलटा गया है और न ही कोई कदम उठाया गया है, और बस विधि आयोग को समस्या से निपटने के लिए कहा गया है ।

2.6. थोड़ी सी सावधानी, मानवतावाद की सोच, सांविधानिक तत्व-ज्ञान लाने और सार्वजनिक मुकदमों की निरर्थकता के बारे में जागरुकता से स्थिति में काफी सुधार होगा जो आज चिंताजनक है । आमतौर पर यह पाया गया है कि सरकारी और पब्लिक सेक्टर के उपक्रमों द्वारा जो प्रतिवाद किए जाते हैं वे तनिक भी चलने योग्य नहीं होते हैं ।

10. यहां तक कि जब न्यायालय, सरकारी प्राधिकारियों द्वारा फ़ाइल की गई तुच्छ अपीलों की बाबत बार-बार विलाप करते हैं, तो नौकरशाही के मानस-पटल पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है ।

ऐसा नहीं है कि अवांछित सरकारी मुकदमों पर अंकुश लगाने के लिए नीति निर्माताओं को कोई अहसास नहीं है बल्कि इस संबंध में समय-समय पर विचार-विमर्श होता रहता है । कुछ वर्ष पूर्व ही, केंद्रीय सरकार ने राज्य सरकारों को एक कुशल और जवाबदेह वादी में बदलने के लिए 'विजन/मिशन' (अर्थात् दूरदृष्टि/उद्देश्य) के साथ राष्ट्रीय वाद नीति, 2010 गठित की गई थी । केंद्रीय सरकार द्वारा गठित की गई यह नीति इस मान्यता पर आधारित है कि नागरिकों के अधिकारों को संरक्षण देना और उनके मौलिक अधिकारों को महत्व देना इसका प्राथमिक उत्तरदायित्व था और इस प्रक्रिया में इसे 'जिम्मेदार वादी' बनना चाहिए । यहां तक कि नीति 'जिम्मेदार वादी' की अभिव्यक्ति को भी परिभाषित करती है, जो इस प्रकार है –

'जिम्मेदार वादी' का अर्थ है –

(i) केवल नाम के लिए मुकदमे का सहारा नहीं लिया जाएगा ।

(ii) झूठे अभिवाकों और तकनीकी बिंदुओं का सहारा नहीं लिया जाएगा और उन्हें हतोत्साहित भी किया जाएगा ।

(iii) यह सुनिश्चित करना होगा कि सही तथ्य और सभी सुसंगत दस्तावेज न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे ।

(iv) न्यायालय से कुछ भी छिपाया नहीं जाएगा और किसी न्यायालय या अधिकरण को गुमराह करने का प्रयत्न नहीं किया जाएगा ।

2. सरकार को बाध्य बनना बंद कर देना चाहिए । यह सिद्धांत त्यक्त किया जाना चाहिए कि अंतिम निर्णय के लिए मामलों को न्यायालयों पर छोड़ दिया जाना चाहिए । आसान समावेदन, 'न्यायालय को निर्णय करने दो' जैसी आराम-तलबी से बचना चाहिए और इसकी निन्दा करनी चाहिए ।

3. इस नीति का प्रयोजन न्यायालयों में सरकारी मुकदमों को कम करना भी है ताकि अन्य लंबित मामलों का समाधान करने में न्यायालय द्वारा मूल्यवान समय का उपयोग किया जा सके जिससे कि राष्ट्रीय विधिक मिशन में

औसत लंबितता समय को 15 वर्ष से कम करके 3 वर्ष किया जा सके । सरकार की ओर से वादियों को न्यायिक सुधारों के राष्ट्रीय मिशन में निगमित सिद्धांतों को ध्यान में रखना होगा जिसमें उन बाधाओं की पहचान करना सम्मिलित है जिनसे सरकार और उसकी एजेंसियां संबंधित हो सकती हैं और अनावश्यक सरकारी मामलों को भी हटा सकती हैं ।

कल्याण संबंधी विधान, समाज सुधार, निर्धन वर्गों और वरिष्ठ नागरिकों तथा सहायता की आवश्यकता वाले अन्य वर्गों पर विशेष जोर देने के आधार पर वाद में प्राथमिकता की जानी चाहिए ।"

11. यह नीति इस तथ्य को स्वीकार करती है कि इसकी सफलता इसके कड़े कार्यान्वयन पर निर्भर करेगी । प्रासंगिक रूप से इसमें अधिकारियों के भाग पर जवाबदेही का भी उपबंध है जिनको इस बाबत अपेक्षित कदम उठाने होते हैं । इस नीति में अपीलों को फाइल करने का भी उपबंध निहित है जो यह दर्शाता है कि किन परिस्थितियों के अधीन अपील फाइल की जानी चाहिए । जहां तक सेवा मामलों का संबंध है, यह उपबंध यह अधिकथित करता है कि आगे की कार्यवाहियों में सेवा मामले मात्र इसलिए फाइल नहीं किए जाएंगे कि प्रशासनिक अधिकरण का आदेश बहुत से कर्मचारियों को प्रभावित करता है । साथ ही, अपीलें कर्मचारियों के एक वर्ग को दूसरे वर्ग के विरुद्ध समर्थन करने के लिए फाइल नहीं की जाएंगी ।

12. पूर्वोक्त वाद नीति को इस न्यायालय द्वारा अर्बन इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट, बीकानेर **बनाम** मोहन लाल, ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (सप्ली.) 504 = (2010) 1 एस. सी. सी. 512 वाले मामले में अनावश्यक वाद समाप्त करने के लिए आशा की किरण के रूप में देखा गया था, जिसका पैरा 11 निम्न प्रकार है –

"11. केंद्रीय सरकार अब सरकार के विरुद्ध मामलों की प्रतिरक्षा करने और प्रतिकूल निर्णयों के विरुद्ध अपील और पुनरीक्षण फाइल करने के लिए यथार्थवादी और व्यावहारिक मानदंड तैयार करके इस समस्या का समाधान करने का प्रयास कर रही है, जिसके द्वारा अनावश्यक वादों का अंत हो

रहा है । परंतु यह अकेले केंद्रीय सरकार का ऐसा प्रयास पर्याप्त नहीं है । राज्य सरकारों और कानूनी प्राधिकरणों, जिनके पास केंद्रीय सरकार से अधिक वाद हैं, को भी अनावश्यक वादों का अंत करने का भरपूर प्रयास करना चाहिए । कष्टप्रद और अनावश्यक वाद बहुत लंबे समय से न्याय के पहिए को रोक रहे हैं जो न्यायालयों और अधिकरणों के लिए सद्भाविक और आवश्यक वादों को न्याय हेतु सरल और त्वरित पहुंच प्रदान करना कठिन बना रहा है ।

13. हमें खेद है कि सरकार की स्वयं की नीति और इस न्यायालय की फटकार के बावजूद, कई अवसरों पर, अनेक सरकारी पदाधिकारियों पर कोई महत्वपूर्ण सकारात्मक प्रभाव दिखाई नहीं देता है, जो लगातार तुच्छ और कष्टप्रद अपील फाइल करने का निर्णय लेते हैं । यह न्यायालयों पर अनावश्यक बोझ अधिरोपित करता है । विपक्षी पक्षकार, जो निचले न्यायालय में सफल हुआ है, फिर भी उससे परिहार्य व्यय कराया जाता है । इसके अतिरिक्त, यह सफल हुए वादी को निचले न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का फल प्राप्त करने में देरी का कारण बनता है ।

14. निःसंदेह, जब कोई मामला किसी पक्षकार के पक्ष में विनिश्चित होता है तो न्यायालय उसके पक्ष में लागत भी अधिनिर्णीत कर सकता है । इस न्यायालय द्वारा इस बात पर जोर दिया गया है कि ऐसी लागत वास्तविक और प्रतिपूरक निबंधनों के अनुसार होनी चाहिए न कि केवल प्रतिकात्मक । अनुकरणीय लागत भी हो सकती है किन्तु तब जब अपील पूरी तरह से सारहीन हो । [देखिए रामेश्वरी देवी **बनाम** निर्मला देवी (2011) 8 एस. सी. सी. 249 = 2011 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 4000] । तथापि, विवादास्पद प्रश्न यह है कि क्या केवल लागतें अधिरोपित करना ही निवारक साबित होगा ? हम ऐसा नहीं सोचते । हमारा यह दृढ़ मत है कि अकेले राज्य/पब्लिक सेक्टर के उपक्रमों पर लागत अधिरोपित करने से अधिक अंतर नहीं पड़ने वाला है क्योंकि अपीलें फाइल करने के लिए ऐसे गैर-जिम्मेदार निर्णय लेने वाले अधिकारी व्यक्तिगत रूप से प्रभावित नहीं होते हैं क्योंकि इस कारण से अधिरोपित की गई लागत सरकार के खजाने

से आती है । इसलिए, अगला कदम उठाने का समय आ गया है अर्थात् ऐसे अधिकारियों से लागत की वसूली की जानी चाहिए जो अपील फाइल करने का तुच्छ निर्णय, यह अच्छी तरह से जानते हुए भी, लेते हैं कि ये पूर्ण रूप से कष्टप्रद और अनुचित हैं । हम स्पष्ट करते हैं कि संबंधित अधिकारी से लागत की वसूली का ऐसा आदेश केवल उन्हीं मामलों में पारित किया जाना चाहिए जहां अपील प्रथमदृष्ट्या तुच्छ पाई गई हो और अपील फाइल करने का निर्णय भी स्पष्ट रूप से तर्कहीन और अनावश्यक पाया गया हो ।"

(मेरे द्वारा बल दिया गया)

25. इस प्रकार, याची बीमा कंपनी एक साधारण वादी नहीं है और विशिष्ट रूप से बीमा संविदा (जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है) बाध्य है, को संविदात्मक रूप से "बाध्यकारी आदेश" को चुनौती देने के लिए वर्तमान तुच्छ रिट याचिका फाइल नहीं करनी चाहिए थी । वर्तमान रिट याचिका फाइल करने में याची के आचरण की निंदा की जानी चाहिए क्योंकि प्रत्यर्थी सं. 1 को, वाद में घसीटने के लिए एक तुच्छ रिट याचिका फाइल की गई है जो एक विधवा है और समाज के आर्थिक रूप से कमजोर और शैक्षणिक रूप से वंचित वर्ग से संबंधित है ।

राष्ट्रीय मुकदमेबाजी नीति की प्रयोज्यता

26. याची को केंद्रीय सरकार के स्वामित्व वाले निगम अर्थात् भारतीय साधारण बीमा निगम की सहायक कंपनी होने के नाते और भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थांतर्गत राज्य होने के नाते, केंद्रीय सरकार द्वारा तैयार की गई राष्ट्रीय वाद नीति, 2009 का पालन करना होगा । राष्ट्रीय वाद नीति का सुसंगत भाग नीचे पुरःस्थापित किया गया है :–

"राष्ट्रीय वाद नीति" प्रस्तावना :

चूंकि 24/25 अक्तूबर, 2009 को लंबित मामलों और उनके विलंबन को कम करने की दिशा में 'न्यायपालिका को सुदृढ़ बनाने के लिए राष्ट्रीय परामर्श' का आयोजन किया गया जिसमें केंद्रीय विधि और न्याय मंत्री ने संकल्प प्रस्तुत किए, जिन्हें पूरे सम्मेलन में सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया ।

उक्त संकल्प के अंतर्गत केंद्रीय सरकार द्वारा महत्वपूर्ण वादों के संचालन को सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय वाद नीति तैयार करने के लिए भारत सरकार द्वारा की गई पहल को स्वीकार किया और प्रत्येक राज्य सरकार से समान नीतियां विकसित करने का आग्रह किया गया । राष्ट्रीय वाद नीति इस प्रकार है –

दूरदृष्टि/पक्का इरादा

1. राष्ट्रीय वाद नीति इस मान्यता पर आधारित है कि सरकार और इसकी अनेक एजेंसियां देश के न्यायालयों और अधिकरणों में अधिकांश रूप से वादी हैं । इसका उद्देश्य सरकार को एक कुशल और जिम्मेदार वादी के रूप में परिवर्तित करना है । यह नीति इस मान्यता पर भी आधारित है कि नागरिकों के अधिकारों का संरक्षण करना, मौलिक अधिकार को महत्व देना, सरकार का उत्तरदायित्व है और सरकारी वाद के संचालन के प्रभारी को इस मूल सिद्धांत को कभी नहीं भूलना चाहिए ।

"दक्ष वादी" का अर्थ, वाद में अंतर्वलित मुख्य विवाद्यकों पर ध्यान केंद्रित करना और उन्हें पूरी तरह से संबोधित करना है । एक समेकित, समन्वित और समयबद्ध रीति से वाद का प्रबंधन और संचालन करना । यह सुनिश्चित करना कि अच्छे मामलों की जीत हो और बुरे मामलों को अनावश्यक रूप से जारी न रखा जाए ।

एक वादी जिसका सक्षम और संवेदनशील विधिक व्यक्तियों द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है वह अपनी निपुणता में सक्षम और इस तथ्य के प्रति संवेदनशील होता है कि एक साधारण वादी नहीं है और ऐसा भी नहीं है कि किसी भी कीमत पर वाद जीतना ही हो ।

"जिम्मेदार वादी" का अर्थ है कि केवल नाम के लिए मुकदमे का सहारा नहीं लिया जाएगा । झूठे अभिवाकों और तकनीकी बिंदुओं का सहारा नहीं लिया जाएगा और उन्हें हतोत्साहित भी किया जाएगा । यह सुनिश्चित करना होगा कि सही तथ्य और सभी सुसंगत दस्तावेज न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे । न्यायालय से कुछ भी छिपाया

नहीं जाएगा और किसी न्यायालय या अधिकरण को गुमराह करने का प्रयत्न नहीं किया जाएगा ।

2. सरकार को बाध्यकारी वादी बनना बंद कर देना चाहिए । यह सिद्धांत त्यक्त किया जाना चाहिए कि अंतिम निर्णय के लिए मामलों को न्यायालयों पर छोड़ दिया जाना चाहिए । आसान समावेदन, 'न्यायालय को निर्णय करने दो' जैसी आराम-तलबी से बचना चाहिए और इसकी निन्दा करनी चाहिए ।

3. इस नीति का प्रयोजन न्यायालयों में सरकारी मुकदमों को कम करना भी है ताकि अन्य लंबित मामलों का समाधान करने में न्यायालय द्वारा मूल्यवान समय का उपयोग किया जा सके जिससे कि राष्ट्रीय विधिक मिशन में औसत लंबितता समय को 15 वर्ष से कम करके 3 वर्ष किया जा सके । सरकार की ओर से वादियों को न्यायिक सुधारों के राष्ट्रीय मिशन में निगमित सिद्धांतों को ध्यान में रखना होगा जिसमें उन बाधाओं की पहचान करना सम्मिलित है जिनसे सरकार और उसकी एजेंसियां संबंधित हो सकती हैं और अनावश्यक सरकारी मामलों को भी हटा सकती हैं । कल्याण संबंधी विधान, समाज सुधार, निर्धन वर्गों और वरिष्ठ नागरिकों तथा सहायता की आवश्यकता वाले अन्य वर्गों पर विशेष जोर देने के आधार पर वाद में प्राथमिकता की जानी चाहिए ।"

27. पूर्वोक्त राष्ट्रीय विधिक योजना के अधीन स्पष्ट रूप से यह उपबंध किया गया है कि सरकार को एक जिम्मेदार वादी होना चाहिए और बेकार की मुकदमेबाजी में नहीं पड़ना चाहिए । कल्याण संबंधी विधान, समाज सुधार, निर्धन वर्गों और वरिष्ठ नागरिकों तथा सहायता की आवश्यकता वाले अन्य वर्गों पर विशेष जोर देने के आधार पर वाद में प्राथमिकता की जानी चाहिए ।

28. इस तथ्य के अतिरिक्त कि याची बीमा की संविदा के निबंधनों के अधीन आक्षेपित बाध्यकारी आदेश से बाध्य था, याची को वाद नीति का भी पालन करना चाहिए था और निष्पक्ष और एक जिम्मेदार वादी के रूप में कार्य करना चाहिए था । राष्ट्रीय वाद नीति यह मान्यता देती है

कि नागरिकों के अधिकारों का संरक्षण, मौलिक अधिकारों को महत्व देना सरकार का उत्तरदायित्व है और वाद के संचालन के प्रभारी को इस मूल सिद्धांत को कभी नहीं भूलना चाहिए । वर्तमान रिट याचिका फाइल करने से पता चलता है कि याची ने न केवल उसके और राज्य-सरकार के बीच बीमा संविदा का अनादर किया है, बल्कि दावेदार अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 1 के अधिकारों के विरुद्ध भी अनुचित तरीके से कार्य किया है ।

बीमा संविदा

29. बीमा की संविदा में, अधिकारों और दायित्वों पर बीमा पॉलिसी के नियम कड़े रूप में लागू होते हैं, देखिए – **देवकर एक्सपोर्ट (प्रा.) लिमिटेड** बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[1] बीमा संविदा के निबंधनों का अर्थ लगाते हुए, इसमें प्रयुक्त शब्दों को सर्वोपरि महत्व दिया जाना चाहिए, और यह न्यायालय के लिए किसी भी शब्द को जोड़ने, हटाने या प्रतिस्थापित करने के लिए स्वतंत्र नहीं है । यह भी सुस्थिर है कि बीमाकर्ता की बीमा पॉलिसी के निबंधनों को बीमाकर्ता के दायित्व के विस्तार को निर्धारित करने के उद्देश्य से समझा जाना चाहिए । न्यायालय का प्रयास हमेशा संविदा में प्रयुक्त शब्दों का निर्वचन इस रीति से किया जाना चाहिए जो पक्षकारों के आशय को उत्तम प्रकार से व्यक्त करे । संविदा को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए । न्यायालय के लिए संविदा के निबंधनों को प्रतिस्थापित करने की अनुमति नहीं है । समानता के आधार पर कोई अपवाद नहीं बनाया जा सकता । ये सिद्धांत सुस्थिर हैं । इस संबंध में **निर्यात ऋण गारंटी निगम** बनाम **मैसर्स गर्ग संस इंटरनेशनल**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों अर्थात् **उड़ीसा औद्योगिक संवर्धन और निवेश निगम** बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[3], **जनरल एश्योरेंस सोसाइटी लिमिटेड** बनाम **चंदुमुल जैन और अन्य**[4], **सूरज मल राम निवास ऑयल मिल्स प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[5], **मैसर्स**

---

[1] (2008) 14 एस. सी. सी. 598 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2026.

[2] (2014) 1 एस. सी. सी. 686 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 एस. सी. 94.

[3] (2016) 15 एस. सी. सी. 315 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 3908.

[4] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 1644.

[5] (2010) 10 एस. सी. सी. 567 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. (अनु.) 23.2.

सुमितोमो हेवी इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम **ऑयल एंड नेचुरल गैस कंपनी**[1] और **विक्रम ग्रीनटेक (आई) लिमिटेड और अन्य** बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[2] वाले मामलों को निर्दिष्ट किया जा सकता है ।

30. हमने याची और राज्य सरकार के मध्य बीमा संविदा के कतिपय सुसंगत भाग का निष्कर्ष निकाला है । पूर्वोक्त संविदा के निबंधनों के अनुसार, किसानों के मामले में आय प्रमाणपत्र अपेक्षित नहीं है । प्रत्यर्थी सं. 1 का पति किसान था । इसके अतिरिक्त, भले ही उसे मजदूर मान लिया जाए, फिर भी पूरे परिवार की आय, याची की तारीख 4 अक्तूबर, 2019 अपनी रिपोर्ट और याची के अन्वेषक की तारीख 25 नवम्बर, 2019 की रिपोर्ट के अनुसार 75,000/- रुपए से अधिक नहीं थी जैसाकि आक्षेपित आदेश में उल्लेख किया गया है । बीमा संविदा के निबंधनों के अनुसार याची, प्रत्यर्थी सं. 3 के आदेश से आबद्ध है और विनिर्दिष्ट समय के भीतर संदाय करने के लिए भी बाध्य है, जिसके न हो सकने पर प्रति सप्ताह 2,500/- रुपए की शास्ति का संदाय दावेदार को किया जाएगा और फिर भी याची ने प्रत्यर्थी सं. 1 को संदाय करने के बदले वर्तमान रिट याचिका फाइल की है । इस प्रकार, वर्तमान रिट याचिका एक तुच्छ रिट याचिका है । परिणामस्वरूप, यह लागत के साथ खारिज किए जाने योग्य है ।

31. उपरोक्त उल्लिखित सभी कारणों से, रिट याचिका 5,000/- रुपए की लागत के साथ खारिज की जाती है । याची आक्षेपित आदेश का अनुपालन करेगा और प्रत्यर्थी सं. 1 को अधिनिर्णीत की गई धन राशि और शास्ति का संदाय तुरंत करेगा ।

याचिका खारिज की गई ।

महीं./अस.

---

[1] (2010) 11 एस. सी. सी. 296 = ए. आई. आर 2010 एस. सी. 3400.

[2] (2009) 5 एस. सी. सी. 599 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 2493.

रंजन कुमार राउत्रे

बनाम

मधु मोहन्ती उर्फ **राउत्रे**

(2015 की वैवाहिक अपील सं. 150)

तारीख 23 सितंबर, 2020

न्यायमूर्ति एस. के. मिश्रा और न्यायमूर्ति बी. पी. राउत्रे

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 25 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 41, नियम 27] – प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा कुटुंब न्यायालय के समक्ष दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की अर्जी फाइल किया जाना – पति द्वारा दूसरा विवाह किया जाना – तत्पश्चात् पत्नी द्वारा प्रत्यास्थापन की अर्जी को विवाह-विच्छेद की अर्जी में परिवर्तन किए जाने का आवेदन फाइल किया जाना – कुटुंब न्यायालय द्वारा पत्नी के पक्ष में 35 लाख रुपए स्थायी निर्वाहिका के रूप में दिए जाने के साथ विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित किया जाना – अपीलार्थी-पति द्वारा निर्वाहिका की राशि को चुनौती दिया जाना तथा साथ ही अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने का आवेदन किया जाना – स्थायी निर्वाहिका प्रदान करने के लिए कोई भी गणितीय सूत्र नहीं अपनाया जा सकता और पति द्वारा कोई भी सुसंगत साक्ष्य प्रस्तुत न किए जाने की स्थिति में निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता किन्तु भरणपोषण की राशि में वृद्धि भी नहीं की जा सकती ।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 3 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 107(1)(घ)] – अतिरिक्त साक्ष्य का प्रस्तुत किया जाना – तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियों का लंबित पाया जाना – दस्तावेजी साक्ष्य का अंतिम रूप में न पाया जाना – पति ने अपनी आय से संबंधित ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं जिनको लेकर तहसीलदार के समक्ष कार्यवाहियां लंबित हैं, अत:, अपील के प्रक्रम

पर अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता ।

इस मामले में अपीलार्थी-पति ने 2010 की सिविल मामला सं. 389 में विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भुवनेश्वर द्वारा पारित तारीख 19 अगस्त, 2015 के उस निर्णय और डिक्री को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान् न्यायाधीश ने विवाह के विघटन का आदेश पारित करते हुए यह निदेश दिया था कि अपीलार्थी-पति स्थायी निर्वाहिका के रूप में प्रत्यर्थी-पत्नी को 35,00,000/- रुपए (केवल पैंतीस लाख रुपए) का संदाय करेगा और आगे यह भी निदेश दिया कि पोशाक सामग्री और बारात व्यय और साड़ियों के व्यय को छोड़कर अपीलार्थी-पति सभी वस्तुओं को वापिस करे और उक्त सामान की कीमत के रूप में प्रत्यर्थी-पत्नी को 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए) का संदाय करें । वर्तमान अपीलार्थी-पति कुटुंब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी था । पत्नी (वर्तमान प्रत्यर्थी) ने वर्तमान अपीलार्थी के साथ हुए विवाह के विघटन की डिक्री की प्रार्थना करते हुए उक्त मामला फाइल किया । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अर्जीदार (पत्नी) का संक्षेप में तथ्य यह है कि अर्जीदार और विरोधी पक्षकार के मध्य तारीख 13 मार्च, 2000 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था । विवाह के कुछ दिनों के बाद दहेज की अतिरिक्त मांग करते हुए अर्जीदार को शारीरिक और मानसिक यातना दी जाने लगी और यहां तक कि उसे भोजन और वस्त्र भी नहीं दिए जाते थे । पति रात्रि में शराब के नशे में आता था और एक बार अर्थात् तारीख 25 मार्च, 2000 को जब वह मलेरिया बुखार से ग्रसित थी तब पति द्वारा दी गई कुछ औषधियों के कारण पत्नी में कुछ गंभीर मानसिक तनाव विकसित हो गया था । तब से पति उसे 'पगली' कहकर बुलाया करता था और जब यातना असहनीय हो गई तो उसे तारीख 3 अगस्त, 2003 को दाम्पत्य गृह को छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा और तब से वह पृथक् रूप से अपने माता-पिता के घर में रह रही है । यह भी अभिकथित किया गया कि अभ्यंतर काल में पति (विरोधी पक्षकार) ने एक अन्य महिला से विवाह कर लिया, जिसका नाम देबकी राउत्रे है और उक्त विवाह से एक पुत्री अर्थात् सुप्रिया राउत्रे का जन्म हुआ है । पति ने कुटुंब न्यायालय,

कटक के समक्ष सिविल अर्जी सं. 766/2003 फाइल की जिसे पोषणीयता के आधार पर खारिज कर दिया गया था । पत्नी ने भी उप खण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट भुवनेश्वर के समक्ष एक आपराधिक मामला जी. आर. सं. 113/2004 तथा कार्यवाही को हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1966 की धारा 18 के अधीन 2004 का सिविल मामला सं. 493 फाइल किया और पति ने 2004 का एक अन्य सिविल मामला सं. 508 फाइल किया । लेकिन दोनों सिविल मामले जो कि कुटुंब न्यायालय, कटक के समक्ष फाइल किए गए थे, अधिकारिता के आधार पर खारिज कर दिए गए । कुटुंब न्यायालय, कटक के इस आदेश से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि कोई भी अंकगणितीय सूत्र अपनाया नहीं जा सकता है, क्योंकि स्थायी निर्वाहिका प्रदान करने के दौरान कोई गणितीय यथातथ्य सटीकता नहीं हो सकती और मामले के वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा जो अपीलार्थी की आय के पहलुओं के साथ-साथ अन्य आय के स्रोतों से संबंधित है और जिन पर विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अच्छी तरह से ध्यान दिया है, हम विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय के द्वारा निश्चित की गई मात्रा से असहमत या अपसारित होने के लिए आनत नहीं हैं । इसके अलावा अन्य कारण यह है कि अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी प्रतीत होता है कि पैतृक भूमि सहित कुल भूमि संपत्ति लगभग 20 एकड़ बनती है और अधिकांश संपत्ति भुवनेश्वर विकास प्राधिकरण क्षेत्र के भीतर स्थित है । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी द्वारा सुसंगत समय के दौरान कब्जे में रखे गए यानों की संख्या से उसकी आय का अधिक पाया जाना दर्शित होता है । पक्षकार (निचले न्यायालय में) अर्जीदार साक्षी-1 और प्रत्यर्थी साक्षी-1 के रूप में पेश हुए हैं जिनके साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात् यह प्रकट होता है कि पत्नी (अर्जीदार साक्षी 1) के सभी कथनों के उत्तर के लिए अपीलार्थी के कथन केवल प्राख्यान की प्रकृति के ही हैं । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा प्रदर्श-30 से 36 के

अधीन प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों के बावजूद पुनर्विवाह करने के बारे में इनकार नहीं किया है । जिससे यह स्पष्ट होता है कि उसने पुनर्विवाह कर लिया है और देवकी राउत्रे से दूसरे विवाह से एक बालिका का पिता भी बन गया है । इसी प्रकार, निर्वाहिका की मात्रा में वृद्धि करने के लिए पत्नी का दावा भी सारभूत कारण से रहित पाया गया है । इस प्रकार, आक्षेपित आदेश और निचले न्यायालय के अभिलेखों पर उपलब्ध सामग्री के साथ-साथ हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के संपूर्ण विश्लेषण के पश्चात्, हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । तथापि, अपीलार्थी की इस दलील पर विचार करते हुए कि उसने अंतरिम भरणपोषण के लिए 5,35,000/- (पांच लाख पैंतीस हजार रुपए) का संदाय किया है जिसे 35,00,000/- रुपए (पैंतीस लाख रुपए) की स्थायी निर्वाहिका से समायोजित किया जाना चाहिए, हम इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हैं और यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी द्वारा अंतरिम भरणपोषण के लिए संदाय की गई राशि को स्थायी निर्वाहिका की राशि से समायोजित किया जाएगा, यदि कोई हो तो । यह भी स्पष्ट किया जाता है कि कुटुंब न्यायालय के द्वारा वस्तुओं की वापसी के बदले में 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए) के संदाय के लिए जारी निदेश की भी पुष्टि की जाती है । (पैरा 20 और 21)

जहां तक आर. आई. बलियांटा की नए सिरे से की गई जांच रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी की वार्षिक आय का संबंध है, इसे भी इस प्रक्रम पर उसकी आय से संबंधित ग्राह्य दस्तावेज नहीं पाया गया है क्योंकि इससे संबंधित कार्यवाही तहसीलदार के समक्ष लंबित हैं और अभी अंतिम नहीं हुई हैं और इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी है कि इसमें अपीलार्थी की अन्य स्रोतों से आय को नहीं जोड़ा गया है और यह आय केवल कृषि भूमि तक सीमित है । यहां पर यह ध्यान में रखना होगा कि प्रत्यर्थी-पत्नी के अनुसार अपीलार्थी के पास कृषि आय से भिन्न आय के कई स्रोत हैं, उदाहरणार्थ मकान का किराया, ठेकेदारी, वाहन आदि । इस प्रकार पूर्वोक्त कारणों से हमें अपीलार्थी की दलील और प्रार्थना में ऐसा कोई सार दिखाई नहीं देता है जिसके आधार पर अपीलार्थी को ऊपर वर्णित दस्तावेजों के माध्यम से अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की जा

सके और तद्नुसार उक्त प्रार्थना को खारिज किया जाता है । यह उल्लेख करना सुसंगत है कि इस न्यायालय के समक्ष इस अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने कुटुंब न्यायालय के 5,00,000/- (पांच लाख) रुपए से संबंधित आदेश को निरस्त कराने का भरपूर प्रयास किया जो प्रत्यर्थी-पत्नी के द्वारा विवाह के दौरान वस्तुओं की वापसी के बदले में दिया गया था । जब प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अभिग्रहण सूची और अपीलार्थी-पति द्वारा जिमा नामा के अभिचालन के संबंध में आक्षेप किया गया तो दस्तावेजों में अभिचालन को सत्यापित करने के लिए इस न्यायालय ने अंततोगत्वा एक पुलिस उप अधीक्षक द्वारा जांच किए जाने का निदेश दिया ताकि दस्तावेजों में की गई हेर-फेर का पता लगाया जा सके और रिपोर्ट के अनुसार इस सत्यता का अनावरण हुआ कि इस अपीलार्थी ने दुर्भावनापूर्ण तारीख 30 अप्रैल, 2004 की अभिग्रहण सूची और जी. आर. मामला सं. 113/2004 में का तारीख 14 जून, 2004 का जिमा नामे को विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी (ओ) भुवनेश्वर को भ्रमित करने और यह दर्शाने के लिए प्रस्तुत किए हैं कि पत्नी ने अपने सोने के आभूषण वापस ले लिए हैं । इस पहलू को यहां बताने का कारण यह है कि अपीलार्थी के आचरण के संबंध में यह बताना है कि उसने न्यायालय को गुमराह करने के लिए दस्तावेजों में हेर-फेर की थी । विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना यह है कि न्यायालय में किए गए अभिवाक् में मिथ्या कथन करना या छलसाधित दस्तावेजों को फाइल करके न्यायालय को गुमराह करते हुए अपने अनुकूल आदेश प्राप्त करना एक आपराधिक अवमानना है क्योंकि इसकी प्रवृत्ति न्याय प्रशासन में अड़चन डालने की है । तथापि, हम अपने को अपीलार्थी-पति के विरुद्ध ऐसी कार्यवाही करने से विरत करने के साथ उसे चेतावनी देते हैं कि वह भविष्य में इस प्रकार के आचरण को नहीं दोहराएगा । (पैरा 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 13 एस. सी. सी. 112 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 2748 : **विन्नी परमवीर परमार** बनाम **परमवीर परमार** ;	19

[2008] ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 56 = 2007 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6084 : **हरियाणा राज्य औद्योगिक विकास निगम** बनाम **मैसर्स कार्क मैन्युफैक्चरिंग कंपनी** ; 13

[2001] ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2802 : **एन. कमालम (मृत) और एक अन्य** बनाम **अय्यासामी और एक अन्य** ; 10

[1965] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 1008 : **ग्रेटर मुम्बई नगर निगम** बनाम **लाला पंचम और अन्य** । 11, 12

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की वैवाहिक अपील सं. 150.

2010 की सिविल कार्यवाही सं. 389 में विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भुवनेश्वर द्वारा तारीख 19 अगस्त, 2015 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री जे. आर. दास, के. एल. दास, एस. सी. सामल और एन. साहू

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अयोध्या रंजन दास, एस. के. नन्दा, बी. महापात्रा, एन. स्वेन, के. एस. साहू और बी. आर. मोहन्ती

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बी. पी. राउत्रे ने दिया ।

न्या. राउत्रे – अपीलार्थी-पति ने 2010 की सिविल मामला सं. 389 में विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भुवनेश्वर द्वारा पारित तारीख 19 अगस्त, 2015 के उस निर्णय और डिक्री को चुनौती दी है जिसके द्वारा विद्वान् न्यायाधीश ने विवाह के विघटन का आदेश पारित करते हुए यह निदेश दिया था कि अपीलार्थी-पति स्थाई निर्वाहिका के रूप में प्रत्यर्थी-पत्नी को 35,00,000/- रुपए (केवल पैंतीस लाख) का संदाय करेगा और आगे यह भी निदेश दिया कि पोशाक सामग्री और बारात व्यय और साड़ियों के व्यय को छोड़कर अपीलार्थी-पति सभी वस्तुओं को वापिस करे और उक्त सामान की कीमत के रूप में प्रत्यर्थी-पत्नी को 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए) का संदाय करें ।

2. वर्तमान अपीलार्थी-पति कुटुंब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी था । पत्नी (वर्तमान प्रत्यर्थी) ने वर्तमान अपीलार्थी के साथ हुए विवाह के विघटन की डिक्री की प्रार्थना करते हुए उक्त मामला फाइल किया । कुटुंब न्यायालय के समक्ष अर्जीदार (पत्नी) का संक्षेप में तथ्य यह है कि अर्जीदार और विरोधी पक्षकार के मध्य तारीख 13 मार्च, 2000 को विवाह अनुष्ठापित हुआ था । विवाह के कुछ दिनों के बाद दहेज की अतिरिक्त मांग करते हुए अर्जीदार को शारीरिक और मानसिक यातना दी जाने लगी और यहां तक कि उसे भोजन और वस्त्र भी नहीं दिए जाते थे । पति रात्रि में शराब के नशे में आता था और एक बार अर्थात् तारीख 25 मार्च, 2000 को जब वह मलेरिया बुखार से ग्रसित थी तब पति द्वारा दी गई कुछ औषधियों के कारण पत्नी में कुछ गंभीर मानसिक तनाव विकसित हो गया था । तब से पति उसे 'पगली' कहकर बुलाया करता था और जब यातना असहनीय हो गई तो उसे तारीख 3 अगस्त, 2003 को दाम्पत्य गृह को छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा और तब से वह पृथक् रूप से अपने माता-पिता के घर में रह रही है । यह भी अभिकथित किया गया कि अभ्यंतर काल में पति (विरोधी पक्षकार) ने एक अन्य महिला से विवाह कर लिया, जिसका नाम देबकी राउत्रे है और उक्त विवाह से एक पुत्री अर्थात् सुप्रिया राउत्रे का जन्म हुआ है । पति ने कुटुंब न्यायालय, कटक के समक्ष सिविल अर्जी सं. 766/2003 फाइल की जिसे पोषणीयता के आधार पर खारिज कर दिया गया था । पत्नी ने भी उपखण्ड न्यायिक मजिस्ट्रेट, भुवनेश्वर के समक्ष एक आपराधिक मामला जी. आर. सं. 113/2004 तथा कार्यवाही को हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1966 की धारा 18 के अधीन 2004 का सिविल मामला सं. 493 फाइल किया और पति ने 2004 का एक अन्य सिविल मामला सं. 508 फाइल किया । लेकिन दोनों सिविल मामले जो कि कुटुंब न्यायालय, कटक के समक्ष फाइल किए गए थे, अधिकारिता के आधार पर खारिज कर दिए गए ।

3. चाहे जैसी भी स्थिति हो, वर्तमान प्रश्नगत विवाद अर्थात् 2010 का सिविल मामला सं. 389 प्रारंभ में अर्जीदार (पत्नी) द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों के

प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किया गया था, लेकिन बाद में अर्जीदार-पत्नी को, विरोधी पक्षकार (पति) द्वारा दूसरे विवाह किए जाने के तथ्य का ज्ञान होने पर उसने एक आवेदन हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1) के अधीन विवाह विघटन की अर्जी में परिवर्तित कराने के लिए फाइल किया ताकि विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की जा सके ।

4. अर्जीदार (पत्नी) के अनुसार विरोधी पक्षकार-पति एक 'बी' श्रेणी का ठेकेदार है, जिसके पास बहुत सारी भू-संपत्ति है और वह दो ट्रकों, एक ट्रैक्टर और एक ट्रेलर का स्वामी है । इन सबके अलावा उसकी आय मकान के किराए से भी होती है और उसकी कुल आय 20,00,000/- रुपए (बीस लाख) प्रतिवर्ष से अधिक है । यह भी दावा किया गया कि विवाह के समय उसके स्वर्ण के आभूषणों और अन्य वस्तुओं को, जिन्हें विवाह के दौरान दिया गया था, उसे पति द्वारा वापिस नहीं किया गया है ।

5. दूसरी ओर विरोधी पक्षकार-पति ने इस मामले में यह प्रकथन करते हुए प्रतिवाद किया कि पत्नी द्वारा फाइल की गई अर्जी में उसके विरुद्ध किया गया अभिकथन सत्य नहीं है, क्योंकि उसने बिना किसी युक्तियुक्त कारण के स्वेच्छा से तारीख 2 अगस्त, 2003 को दाम्पत्य गृह को छोड़ा था और आगे उसने विरोधी पक्षकार-पति और उसके कुटुंब के सदस्यों के विरुद्ध दहेज यातना के लिए आपराधिक मामला दर्ज कराया था । पत्नी की मानसिक स्थिति सामान्य नहीं है और दाम्पत्य गृह में रहने के दौरान वह अत्यंत असामान्य व्यवहार कर रही थी जिसके लिए उसका उपचार चिकित्सक से कराया गया था । पति ने उनके मध्य विवाह के विघटन में अपनी अनापत्ति भी प्रस्तुत की थी । तथापि, उसके अनुसार वह एक नियोजित व्यक्ति है जिसके पास कोई भू-संपत्ति नहीं है और न ही उसके नाम पर कोई वाहन है ।

6. विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने पक्षकारों के मध्य विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए तीन बिन्दुओं को विरचित किया है जो इस प्रभाव के हैं – (i) कि क्या पत्नी द्वारा कोई अपराध या अभित्यजन किया गया है, (ii) यदि विवाह-विच्छेद हो जाता है तब पत्नी को स्थाई

निर्वाहिका का कोई अधिकार है या नहीं और (iii) विवाह के समय दी गई संपत्ति में उसकी हकदारी है या नहीं ।

7. अर्जीदार-पत्नी ने अपनी ओर से एकमात्र साक्ष्य के रूप में स्वयं की परीक्षा कराई है और इसी प्रकार विरोधी पक्षकार (पति) ने भी अपनी ओर से स्वयं की एकमात्र साक्ष्य के रूप में परीक्षा कराई है । यद्यपि अर्जीदार ने साक्ष्य के लिए 36 दस्तावेजों प्रदर्शित किए हैं और पति ने कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया है । पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर कुटुंब न्यायाधीश ने विवाह के विघटन के लिए विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान करते हुए मामले को पत्नी के पक्ष में डिक्रीत किया । कुटुंब न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने आगे पति-विरोधी पक्षकार को स्थायी निर्वाहिका के रूप में 35,00,000/- रुपए (पैंतीस लाख रुपए) का संदाय करने और साथ ही पोशाक सामग्री और अन्य खर्चों को छोड़कर सभी वस्तुओं को वापस करने या उसके बदले में प्रत्यर्थी-पत्नी को 5,00,000/- रुपए (रुपए पांच लाख) का संदाय करने का निदेश दिया ।

8. वर्तमान अपील में दोनों पक्षकारों ने उनके मध्य, विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान किए जाने से हुए विवाह विघटन पर कोई प्रश्न नहीं उठाया और उनका एकमात्र विवाद न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय द्वारा मंजूर की गई स्थाई निर्वाहिका की मात्रा और पत्नी की वस्तुओं को वापस करने के बदले में अतिरिक्त पांच लाख रुपए की राशि के संबंध में है । जब पति ने यह आक्षेप किया कि स्थाई निर्वाहिका की मात्रा उच्चतर है, तो पत्नी ने प्रति आक्षेप फाइल करते हुए दावा किया कि उक्त राशि में वृद्धि करके उसे पचास लाख रुपए कर दिया जाए ।

9. अपीलार्थी-पति द्वारा यह दलील दी गई कि न तो वह 'ख' श्रेणी का ठेकेदार है और न ही उसके नाम पर कोई ट्रक, ट्रैक्टर या ट्रेलर है बल्कि उसके पास एक कार है जिसे उसके पिता के द्वारा क्रय किया गया था और उसे एक टैक्सी के रूप में उपयोग किया गया था । आवेदक का यह भी पक्षकथन है कि उस दौरान अर्थात् वर्ष 2009 में भू-संपत्ति का कुटुंब विभाजन हुआ था और उसके हिस्से में आने वाली भू-संपत्ति लगभग चार एकड़ थी । आगे यह दलील दी गई कि यान अर्थात्

ट्रक, ट्रैक्टर और ट्रेलर को इस दौरान विक्रय कर दिया गया । इस संबंध में सिद्ध करने के लिए अपीलार्थी-पति के द्वारा आदेश 41, नियम 27 के अधीन उक्त दस्तावेजों को अतिरिक्त साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करने की प्रार्थना करते हुए आवेदन किया गया है ।

10. अब अतिरिक्त साक्ष्य देने के संबंध में अपीलार्थी की प्रार्थना पर विचार करने पर पता चलता है कि विधि इस बिन्दु पर स्पष्ट है कि आदेश 41, नियम 27 के उपबंधों को संहिता में इसलिए सम्मिलित नहीं किया गया है कि वे अपील न्यायालय में मामले के दुर्बल बिन्दुओं को ठीक करें और लोप की पूर्ति करें । यह साक्ष्य में किसी कमी या लोप को दूर करने के लिए प्राधिकृत नहीं करता है । नए सिरे से साक्ष्य लेने के लिए अपील न्यायालय को प्रदत्त किया गया प्राधिकार और अधिकारिता एक विशिष्ट रूप से निर्णय को सुनाए जाने के उद्देश्य से निर्बंधित हैं । **एन. कमालम (मृत) और एक अन्य** बनाम **अय्यासामी और एक अन्य**[1] वाला मामला देखिए ।

11. आगे उच्चतम न्यायालय ने **ग्रेटर मुम्बई नगर निगम** बनाम **लाला पंचम और अन्य**[2] वाले मामले में यह व्यक्त किया है कि उच्च न्यायालय की अपेक्षा उन मामलों तक सीमित होनी चाहिए, जहां उसे निर्णय सुनाने के लिए समर्थ बनाने हेतु ऐसे साक्ष्य को अभिप्राप्त करना आवश्यक लगता है । इसे पैरा 9 में निम्नानुसार लेखबद्ध किया गया है –

> ".....यह उपबंध अपील न्यायालय को अपीली स्तर पर नए साक्ष्य लेने का हकदार नहीं बनाता है जहां मामले में बिना ऐसे साक्ष्य के भी वह निर्णय दिया जा सकता हो । यह अपील न्यायालय को केवल एक विशिष्ट रूप से निर्णय सुनाने के उद्देश्य से नया साक्ष्य लेने का अधिकार नहीं देता है । दूसरे शब्दों में, साक्ष्य में कमी को दूर करने के लिए अपील न्यायालय अतिरिक्त साक्ष्य स्वीकार करने के लिए सशक्त है । उच्च न्यायालय यह नहीं कर रहा है कि इस मामले में ऐसी कोई कमी है । दूसरी ओर, यह

[1] ए. आई. आर. 2001 एस. सी. 2802.

[2] ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 1008.

जो कहता है वह यह है कि अभिलेख पर कुछ दस्तावेजी साक्ष्य से, कपट और दुर्भावना से संबंधित वादी की दलील का भरपूर समर्थन होता है । हम इन दस्तावेजों पर वर्तमान में कार्यवाही करेंगे लेकिन उससे पहले हमें बताना होगा कि नियम 27 के उपनियम (1) के खंड (ख) के अधीन शक्ति का प्रयोग, उपबंध में विनिर्दिष्ट आधार के सिवाय अभिलेख पर पहले से मौजूद साक्ष्य में किसी साक्ष्य को जोड़ने के लिए नहीं किया जा सकता है।" इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाता है कि संहिता के आदेश 41, नियम 27 की परिधि के अधीन पक्षकार/या तो मौखिक या दस्तावेजी रूप में तब तक अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए हकदार नहीं होगा जब तक कि वह यह दर्शित नहीं कर देते हैं कि सम्यक् तत्परता के बावजूद वह दस्तावेज प्रस्तुत नहीं कर सका और यह कि ऐसे दस्तावेज न्यायालय को उचित निर्णय सुनाने में समर्थ बनाने में आवश्यक हैं ।

12. मामले के वर्तमान तथ्यों को ध्यान में रखते हुए अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने पर जोर देने के दौरान यह दलील दी गई कि अपीलार्थी (पति) के वकील के द्वारा अनवधानता के कारण इन साक्ष्यों को विचारण न्यायालय में प्रस्तुत नहीं किया जा सका था और सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41, नियम 27(1)(ख) के उपबंध की शर्तों के अधीन इस न्यायालय द्वारा इसे स्वीकार किया जा सकता है । अब उन साक्ष्यों पर विचार करते हैं जिन्हें अपीलार्थी प्रस्तुत करना चाहता है जो इस प्रकार है – तारीख 13 नवंबर, 2009 का कुटुंब विभाजन विलेख, अपीलार्थी की आय के संबंध में 2013 के प्रकीर्ण मामला सं. 61 में आर. आई. बलियान्टा की नए सिरे से जांच रिपोर्ट की प्रति, अपीलार्थी के ठेकेदार की अनुज्ञप्ति की प्रति (यह दर्शित करने के लिए कि वह वर्ष 2006 तक 'सी' श्रेणी का ठेकेदार था) और यानों के रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्रों की प्रति (उन अंतरितियों के नामों को दर्शित करते हुए जिनके पक्ष में यान बेचे गए थे) । संहिता के आदेश 41, नियम 27 सपठित धारा 107 के अधीन नियम 37 के उप नियम (1) के खंड (क)(कक) और (ख) में प्रगणित तीन आधारों को छोड़कर अपील न्यायालय के समक्ष अतिरिक्त साक्ष्य स्वीकार नहीं किए जा सकते हैं । स्पष्ट है कि

अपीलार्थी ने पहले दो आधारों के लिए जोर नहीं दिया है क्योंकि उसका मामला उन दो आधारों की परिधि में नहीं आता है । उन्होंने कुटुंब न्यायालय के समक्ष तत्कालीन वकील से हुई भूल को प्रोद्धरित करते हुए उप-नियम (1) के खंड (ख) के अधीन विचार करने के लिए निवेदन किया है । लेकिन जैसाकि पूर्व में चर्चा की गई थी कि उच्चतम न्यायालय ने **ग्रेटर मुम्बई नगर निगम** (उपरोक्त) वाले मामले में कहा है कि इस उपबंध के अधीन अपील न्यायालय किसी निर्णय को अलग तरीके से सुनाने के उद्देश्य से नए सिरे से साक्ष्य लेने का हकदार नहीं है ।

13. **हरियाणा राज्य औद्योगिक विकास निगम** बनाम **मैसर्स कार्क मैन्युफैक्चरिंग कंपनी**[1] वाले मामले के पैरा 17 में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उचित विधिक सलाह की कमी या साक्ष्य के रूप में दस्तावेज प्रस्तुत करने में अनवधानता के कारण यह नहीं माना जा सकता है कि यह अतिरिक्त साक्ष्य स्वीकार करने का पर्याप्त कारण है । इसलिए अपीलार्थी स्वयं अपने द्वारा दिए गए कारण को साबित करने में असफल रहा है ।

14. इसके अलावा तारीख 27 अप्रैल, 2017 की याचिका के साथ फाइल किए गए उन दस्तावेजों का परिशीलन करने पर यह प्रकट होता है कि वह उन्हीं की कुछ फोटो प्रतियां थीं जिनके बाबत कोई प्रमाणपत्र या पृष्ठांकन इस संबंध में नहीं किया गया है कि वे उन्हीं मूल दस्तावेजों की सही प्रतियां हैं । उक्त दस्तावेजों के मात्र परिशीलन से, यहां तक कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 की परिधि के भीतर भी, साक्ष्य की ग्राह्यता की कसौटी का समाधान नहीं होता है । इसके अतिरिक्त दस्तावेजों के परिशीलन से प्रकट होता है कि तारीख 13 नवंबर, 2019 के अभिकथित विभाजन विलेख में इस वर्तमान अपीलार्थी को पक्षकार के रूप में उल्लिखित नहीं किया गया है जबकि अपीलार्थी के पिता, और उसके पुत्रों सहित कुटुंब के अन्य सभी सदस्य इसमें पक्षकार थे । इसलिए ऐसे किसी भी विभाजन विलेख की विशुद्धता प्रथमदृष्ट्या शंकास्पद प्रतीत होती है ।

---

[1] ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 56 = ए. आई. आर. 2007 एस. सी. डब्ल्यू. 6084.

15. इसी प्रकार, हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए ट्रकों, ट्रैक्टर और ट्रेलर के रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्रों की प्रतियों से विक्रय की तारीख और स्वामित्व के अंतरण की तारीख व्यक्त नहीं होती है । यहां यह उल्लिखित करना सुसंगत है कि मूल रूप से विवाह विषयक विवाद वर्ष 2007 में फाइल किया गया था और अंतरिम भरणपोषण का आदेश तारीख 28 अगस्त, 2009 को पारित किया गया था जिसमें अपीलार्थी को प्रतिमाह 5,000/- (पांच हजार रुपए) पत्नी को संदाय करने का निदेश दिया गया था । इसलिए विभाजन के इन अभिकथित दस्तावेजों के साथ-साथ वाहनों के विक्रय को पक्षकारों के मध्य विवाद के लंबित रहने के दौरान प्रभाव में लाया गया है और ऐसा प्रतीत होता है कि यह सब पत्नी के भरणपोषण के दावे को साशय विफल करने के लिए किया गया है ।

16. आगे प्रत्यर्थी-पत्नी के इस दावे का, कि अपीलार्थी एक 'ख' श्रेणी का ठेकेदार है, विरोध करते हुए अपीलार्थी-पति ने कुछ दस्तावेज फाइल किए हैं । अपीलार्थी-पति द्वारा यह कहा गया कि वह 'ख' श्रेणी का ठेकेदार नहीं है । किसी तरह से वह 2006 तक 'ग' श्रेणी का ठेकेदार था और उसके बाद से वह ठेकेदारी नहीं कर रहा है । अपीलार्थी द्वारा यह दर्शित करने के लिए फाइल किए गए दस्तावेज, कि वह 'ख' श्रेणी का ठेकेदार नहीं है किन्तु वह पूर्वतर में 'ग' श्रेणी का ठेकेदार केवल 2006 तक था, इस स्थिति में ग्राह्य नहीं लग रहे हैं क्योंकि निचले न्यायालय के अभिलेख से यह पता चलता है कि इसे प्रदर्श 'क' के रूप में अंतरिम आवेदन सं. 17/2007 (भरणपोषण के लिए फाइल की गई 2010 की सिविल अर्जी सं. 3897) में दिया गया है । तथापि, उक्त दस्तावेज इस प्रक्रम पर सुसंगत नहीं है क्योंकि प्रत्यर्थी-पत्नी की दलील के अनुसार अपीलार्थी ने बाद में अर्थात् वर्ष 2007 में 'ग' श्रेणी ठेकेदार की अपनी परिस्थिति को 'ख' ठेकेदार में परिवर्तित कर लिया था और इस बाबत उसने विद्वान् सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ उपखंड), भुवनेश्वर के न्यायालय में फाइल किए गए वादपत्र अर्थात् 2007 के सिविल वाद सं. 109 (प्रदर्श 10) में यह स्वीकार किया था कि वह एक 'ख' श्रेणी का ठेकेदार है । 2007 के सिविल वाद सं. 109 में दस्तावेजों को देखने के

बाद यह तथ्यात्मक रूप से प्रतीत होता है कि अपीलार्थी-पति ने स्वयं उक्त वादपत्र में यह घोषित किया है कि वह 'ख' श्रेणी का ठेकेदार है ।

17. जहां तक आर. आई. बलियांटा की नए सिरे से की गई जांच रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी की वार्षिक आय का संबंध है, इसे भी इस प्रक्रम पर उसकी आय से संबंधित ग्राह्य दस्तावेज नहीं पाया गया है क्योंकि इससे संबंधित कार्यवाही तहसीलदार के समक्ष लंबित हैं और अभी अंतिम नहीं हुई हैं और इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी है कि इसमें अपीलार्थी की अन्य स्रोतों से आय को नहीं जोड़ा गया है और यह आय केवल कृषि भूमि तक सीमित है । यहां पर यह ध्यान में रखना होगा कि प्रत्यर्थी-पत्नी के अनुसार अपीलार्थी के पास कृषि आय से भिन्न आय के कई स्रोत हैं, उदाहरणार्थ मकान का किराया, ठेकेदारी, वाहन आदि । इस प्रकार पूर्वोक्त कारणों से हमें अपीलार्थी की दलील और प्रार्थना में ऐसा कोई सार दिखाई नहीं देता है जिसके आधार पर अपीलार्थी को ऊपर वर्णित दस्तावेजों के माध्यम से अतिरिक्त साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की जा सके और तद्नुसार उक्त प्रार्थना को खारिज किया जाता है ।

18. यह उल्लेख करना सुसंगत है कि इस न्यायालय के समक्ष इस अपील के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने कुटुंब न्यायालय के 5,00,000/- (पांच लाख) रुपए से संबंधित आदेश को निरस्त कराने का भरपूर प्रयास किया जो प्रत्यर्थी-पत्नी के द्वारा विवाह के दौरान वस्तुओं की वापसी के बदले में दिया गया था । जब प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अभिग्रहण सूची और अपीलार्थी-पति द्वारा जिमा नामा के अभिचालन के संबंध में आक्षेप किया गया तो दस्तावेजों में अभिचालन को सत्यापित करने के लिए इस न्यायालय ने अंततोगत्वा एक पुलिस उप अधीक्षक द्वारा जांच किए जाने का निदेश दिया ताकि दस्तावेजों में की गई हेर-फेर का पता लगाया जा सके और रिपोर्ट के अनुसार इस सत्यता का अनावरण हुआ कि इस अपीलार्थी ने दुर्भावनापूर्ण तारीख 30 अप्रैल, 2004 की अभिग्रहण सूची और जी. आर. मामला सं. 113/2004 में का तारीख 14 जून, 2004 का जिमा नामा को विद्वान् न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी (ओ) भुवनेश्वर को भ्रमित करने और यह दर्शाने के लिए

प्रस्तुत किए हैं कि पत्नी ने अपने सोने के आभूषण वापस ले लिए हैं । इस पहलू को यहां बताने का कारण यह है कि अपीलार्थी के आचरण के संबंध में यह बताना है कि उसने न्यायालय को गुमराह करने के लिए दस्तावेजों में हेर-फेर की थी । विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना यह है कि न्यायालय में किए गए अभिवाक् में मिथ्या कथन करना या छलसाधित दस्तावेजों को फाइल करके न्यायालय को गुमराह करते हुए अपने अनुकूल आदेश प्राप्त करना एक आपराधिक अवमानना है क्योंकि इसकी प्रवृत्ति न्याय प्रशासन में अड़चन डालने की है । तथापि, हम अपने को अपीलार्थी-पति के विरुद्ध ऐसी कार्यवाही करने से विरत करने के साथ उसे चेतावनी देते हैं कि वह भविष्य में इस प्रकार के आचरण को नहीं दोहराएगा ।

19. अब कुटुंब न्यायालय द्वारा दी गई स्थाई निर्वाहिका की मात्रा की जांच करने के लिए, जो कि इस न्यायालय के समक्ष पक्षकारों के मध्य विवाद की एकमात्र विषयवस्तु है, अपीलार्थी की दलील अधिक सटीक है जबकि पत्नी-प्रत्यर्थी ने उपर्युक्त में वृद्धि करके 50,00,000/- (पचास लाख) करने के लिए प्रति आक्षेप फाइल किया है । यहां इस बिन्दु पर सुसंगत तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करने से पूर्व सिद्धांतों को प्रारंभ में ही प्रतिपादित करने की आवश्यकता है । **विन्नी परमवीर परमार** बनाम **परमवीर परमार**[1] वाले मामले का संप्रेक्षण उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित रूप से किया है :–

> "12. धारा 25 के अनुसार, स्थाई निर्वाहिका और पति या पत्नी दोनों में से किसी एक पति या पत्नी के भरणपोषण के दावे पर विचार करते समय प्रत्यर्थी की स्वयं की आय और अन्य संपत्ति तथा आवेदक की आय और अन्य संपत्ति, पक्षकारों के आचरण और अन्य परिस्थितियों के अतिरिक्त सभी सुसंगत सामग्री है । आगे यह देखा गया है कि इस प्रकार के दावे पर विचार करने वाले न्यायालय को उपरोक्त सभी सुसंगत सामग्री पर विचार करना होगा और उस राशि का निर्धारण करना होगा जो जीवन के स्तर के

[1] (2011) 13 एस. सी. सी. 112 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 2748.

लिए उचित है । भरणपोषण की राशि को तय करने के लिए कोई निश्चित सूत्र नहीं हो सकता है । इसे सामान्य प्रकृति का होना चाहिए जो कि प्रत्येक मामले के विभिन्न तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है । न्यायालय को पक्षकारों की प्रतिस्थिति, उनकी अपनी आवश्यकताओं, पति की संदाय करने की क्षमता, उसके स्वयं के भरणपोषण के लिए युक्तियुक्त व्ययों और विधि तथा कानून जिसके अधीन वह अन्य लोगों के भरणपोषण के लिए बाध्य है, को ध्यान में रखते हुए विचार करना होगा । न्यायालय को इस तथ्य पर भी ध्यान देना होगा कि पत्नी के भरणपोषण के लिए निश्चित की गई राशि इतनी होनी चाहिए कि वह उसमें युक्तियुक्त रूप से रह सके और जब वह अपने पति के साथ रहा करती थी तब उसकी हैसियत और जीवनयापन के ढंग पर विचार करते हुए विनिश्चित करना चाहिए । साथ ही तय राशि जो निश्चित की गई थी वह इतनी अधिक न हो कि दूसरे पक्षकार के रहने की परिस्थिति को प्रभावित नहीं कर सकती है । ये सभी व्यापक सिद्धांत हैं जिन्हें भरणपोषण या स्थाई निर्वाहिका को अवधारित करते समय न्यायालयों को ध्यान में रखना होगा ।" उच्चतम न्यायालय ने यू. श्री **बनाम** यू. श्रीनिवास, [(2013) 2 एस. सी. सी. 114 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 415] वाले मामले में यह स्पष्ट कर दिया है कि स्थाई निर्वाहिका प्रदान करने के दौरान कोई अंकगणितीय सूत्र नहीं अपनाया जा सकता है । निर्णय के पैरा 33 में माननीय न्यायालय के विनिर्दिष्ट प्रेक्षणों को निम्नानुसार पढ़ा जा सकता है –

"33. .....जैसे ही डिक्री पारित की जाती है, पत्नी अपने संपोषण के लिए स्थाई निर्वाहिका की हकदार हो जाती है । स्थाई निर्वाहिका प्रदान करने के दौरान यह कहा जा सकता है कि इसमें अंकगणित का सूत्र नहीं अपनाया जा सकता है, क्योंकि अंकगणितीय सूत्र यथातथ्य सटीक नहीं हो सकता । यह पक्षकारों की हैसियत और उनकी अपनी-अपनी सामाजिक आवश्यकताओं, पति की वित्तीय क्षमता और अन्य बाध्यताओं पर निर्भर करेगा ।

विन्नी परमवीर परमार **बनाम** परमवीर परमार, [(2011) एस. सी. सी. 112 = (2012) 3 एस. सी. सी. (सिविल) 290] में स्थाई निर्वाहिका की संकल्पना पर विचार करते हुए इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि स्थाई निर्वाहिका प्रदान करने के दौरान न्यायालय से इस तथ्य पर ध्यान देना अपेक्षित है कि पत्नी के लिए भरणपोषण हेतु निश्चित की गई राशि इतनी होनी चाहिए कि वह उसमें युक्तियुक्त रूप से रह सके और जब वह अपने पति के साथ रह रहा करती थी तब उस हैसियत और जीवन स्तर के आधार पर इसे तय करना चाहिए .....।"

20. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि कोई भी अंकगणितीय सूत्र अपनाया नहीं जा सकता है, क्योंकि स्थाई निर्वाहिका प्रदान करने के दौरान कोई गणितीय यथातथ्य सटीकता नहीं हो सकती और मामले के वर्तमान तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा जो अपीलार्थी की आय के पहलुओं के साथ-साथ अन्य आय के स्रोतों से संबंधित है और जिन पर विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में अच्छी तरह से ध्यान दिया है, हम विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय के द्वारा निश्चित की गई मात्रा से असहमत या अपसारित होने के लिए आनत नहीं हैं । इसके अलावा अन्य कारण यह है कि अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी प्रतीत होता है कि पैतृक भूमि सहित कुल भूमि संपत्ति लगभग 20 एकड़ बनती है और अधिकांश संपत्ति भुवनेश्वर विकास प्राधिकरण क्षेत्र के भीतर स्थित है । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी द्वारा सुसंगत समय के दौरान कब्जे में रखे गए यानों की संख्या से उसकी आय का अधिक पाया जाना दर्शित होता है । पक्षकार (निचले न्यायालय में) अर्जीदार साक्षी-1 और प्रत्यर्थी साक्षी-1 के रूप में पेश हुए हैं जिनके साक्ष्य का परिशीलन करने के पश्चात् यह प्रकट होता है कि पत्नी (अर्जीदार साक्षी 1) के सभी कथनों के उत्तर के लिए अपीलार्थी के कथन केवल प्रख्यान की प्रकृति के ही हैं । अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा प्रदर्श-30 से 36 के अधीन प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों के बावजूद पुनर्विवाह करने के बारे में इनकार नहीं किया

है । जिससे यह स्पष्ट होता है कि उसने पुनर्विवाह कर लिया है और देवकी राउत्रे से दूसरे विवाह से एक बालिका का पिता भी बन गया है । इसी प्रकार, निर्वाहिका की मात्रा में वृद्धि करने के लिए पत्नी का दावा भी सारभूत कारण से रहित पाया गया है ।

21. इस प्रकार, आक्षेपित आदेश और निचले न्यायालय के अभिलेखों पर उपलब्ध सामग्री के साथ-साथ हमारे समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के संपूर्ण विश्लेषण के पश्चात्, हमें इसमें हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । तथापि, अपीलार्थी की इस दलील पर विचार करते हुए कि उसने अंतरिम भरणपोषण के लिए 5,35,000/- रुपए (पांच लाख पैंतीस हजार रुपए) का संदाय किया है जिसे 35,00,000/- रुपए (पैंतीस लाख रुपए) की स्थाई निर्वाहिका से समायोजित किया जाना चाहिए, हम इसे स्वीकार करने के लिए तैयार हैं और यह निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी द्वारा अंतरिम भरणपोषण के लिए संदाय की गई राशि को स्थायी निर्वाहिका की राशि से समायोजित किया जाएगा, यदि कोई हो तो । यह भी स्पष्ट किया जाता है कि कुटुंब न्यायालय के द्वारा वस्तुओं की वापसी के बदले में 5,00,000/- रुपए (पांच लाख रुपए) के संदाय के लिए जारी निदेश की भी पुष्टि की जाती है ।

22. परिणामस्वरूप, अपील खारिज की जाती है और 2010 की सिविल कार्यवाही सं. 389 में तारीख 19 अगस्त, 2015 को विद्वान् न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भुवनेश्वर द्वारा पारित निर्णय और डिक्री की पुष्टि अंतरिम भरणपोषण, यदि कोई संदत्त हो, के समायोजन के साथ, की जाती है । अपील खारिज की जाती है । खर्चे के विषय में कोई आदेश नहीं दिया जाता है ।

23. न्या. एस. के. मिश्रा – मैं सहमत हूं ।

अपील खारिज की गई ।

अम./अस.

(2021) 1 सि. नि. प. 785 उत्तराखंड

राकेश कांडपाल

बनाम

नीलम कांडपाल

तारीख 12 अप्रैल, 2021

न्यायमूर्ति राघवेन्द्र सिंह चौहान और न्यायमूर्ति आलोक कुमार वर्मा

साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 73 और 47 [सपठित सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 7, नियम 14(1), आदेश 13, नियम 1 और आदेश 18, नियम 2] – हस्तलेख का मिलान – पति द्वारा विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पत्नी पर विवाह पूर्व प्रेम-प्रसंग का आरोप – पति द्वारा पत्नी के हस्तलेख में प्रेम-प्रसंग संबंधी उल्लेख का डायरी में पाए जाने का अभिकथन किया जाना – वादपत्र के साथ डायरी के पृष्ठों का प्रस्तुत न किया जाना – अपीलार्थी-पति ने अपने वादपत्र के साथ न डायरी के पृष्ठों को और न ही दस्तावेजों की कोई सूची फाइल की है तथा साथ ही दस्तावेजों को समुचित प्रक्रम पर फाइल न करने का कोई भी कारण नहीं दिया गया है, अत: इससे प्रेम-प्रसंग का आरोप साबित नहीं होता है जिससे निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-क) [सपठित कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 14] – क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद का वाद फाइल किया जाना – पत्नी का विवाह के लिए सहमत न होने का आरोप पति द्वारा लगाया जाना – पति का यह अभिवाक् न किया जाना कि पत्नी अभी भी प्रेम-प्रसंग में अन्तर्वलित है – विवाह-विच्छेद के लिए पति या पत्नी की ओर से वाद तब लाया जा सकता है जब दूसरे पक्षकार ने विवाह के पश्चात् वादी के साथ क्रूरता कारित की हो और अपीलार्थी का मामला यह नहीं है कि प्रतिवादी का अभी भी किसी अन्य व्यक्ति के साथ प्रेम-प्रसंग चल रहा है, अत: प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा पति के प्रति क्रूरता कारित नहीं होती है, इसलिए, निचले न्यायालय का निर्णय न्यायोचित है ।

यह अपील राकेश कांडपाल बनाम नीलम कांडपाल नामक 2015 के वाद सं. 462 में तारीख 12 मार्च, 2021 को विद्वान् न्यायाधीश द्वारा पारित उस आदेश के विरुद्ध कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के अधीन फाइल की गई है जिसके अनुसार अपीलार्थी-वादी द्वारा प्रस्तुत की गई डायरी के पृष्ठों में प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के हस्तलेख का मिलान किए जाने के लिए अपीलार्थी-वादी की ओर से फाइल किया गया आवेदन जिसके साथ मुख्य परीक्षा का शपथपत्र भी फाइल किया गया था, खारिज कर दिया गया । संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी का विवाह तारीख 29 नवंबर, 2011 को हुआ था तथा उनके विवाह से वर्ष 2013 में एक पुत्री का जन्म हुआ था । अपीलार्थी-पति ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन उपलब्ध क्रूरता के आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए प्रत्यर्थी-पत्नी के विरुद्ध विवाह-विच्छेद करने के लिए वाद फाइल किया था । वादी द्वारा वादपत्र में यह अभिकथन किया गया है कि उसकी पत्नी का, विवाह से पूर्व किसी अन्य के साथ प्रेम संबंध था । कुटुंब के सदस्यों के दबाव में वह उससे विवाह करने के लिए सहमत हुई थी । उसकी पत्नी और उसके पैतृक कुटुंब के सदस्यों का व्यवहार उसके प्रति क्रूर है । वे प्राय: उससे धन की मांग करते थे । तारीख 15 दिसंबर, 2013 को उसकी पत्नी अपनी अप्राप्तवय पुत्री आभूषण, नकदी आदि के साथ वैवाहिक गृह से चली गई थी । प्रत्यर्थी-प्रतिवादी ने जो अपीलार्थी-वादी की पत्नी है, अपना लिखित कथन फाइल किया । उसने वादी द्वारा किए गए इन सभी अभिकथनों से इनकार किया है । इन विवाद्यकों के परिनिर्धारण के पश्चात् वादी ने मुख्य परीक्षा के अपने शपथपत्र के साथ डायरी के पृष्ठों जो उसकी पत्नी के तात्पर्यित हस्तलेख में हैं, यह साबित करने के लिए संलग्न किया है कि उसके साथ विवाह करने के लिए उसकी पत्नी सहमत नहीं थी । प्रतिवादी-पत्नी ने अपनी मुख्य परीक्षा के शपथपत्र में वादी के सभी अभिकथनों से इनकार किया है । इसलिए वादी ने अपनी पत्नी के हस्तलेख की तुलना करने के लिए लिखावट-विशेषज्ञ को बुलाने के लिए एक आवेदन फाइल किया है । प्रत्यर्थी ने इस पर अपना आक्षेप फाइल किया है । दोनों पक्षकारों के

विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा उक्त आवेदन खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर अपीलार्थी-वादी ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय के निरीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया दस्तावेज स्वीकार्य हो जाने पर साक्ष्य बन जाता है । दस्तावेजी साक्ष्य की ग्राह्यता और सबूत के प्रकार में विभेद होना चाहिए । दूसरे शब्दों में जिस दस्तावेज का अवलंब पक्षकार के द्वारा लिया गया है उसे वैध रूप से अभिलेख पर लाना चाहिए । यदि संहिता के आदेश 7, नियम 14 के अधीन वादपत्र के साथ कोई दस्तावेज या उसकी प्रति फाइल नहीं की जा सकी थी तो उसे वाद की सुनवाई के दौरान वादी की ओर से साक्ष्य के रूप में प्राप्त किए जाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । तथापि, न्यायालय की इजाजत से उस दस्तावेज को साक्ष्य के रूप में प्राप्त किया जा सकता है । आदेश 13, नियम 1 यह उपबंध करता है कि पक्षकारों को विवाद्यक के परिनिर्धारण से पूर्व सभी मूल दस्तावेजी साक्ष्यों को प्रस्तुत करना होगा । सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 7, नियम 14 केवल उन दस्तावेजों के संबंध में अपवाद प्रदान करता है जिन्हें वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत किया गया हो या साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिया गया हो । संहिता का आदेश 13, नियम 1(3) केवल उन दस्तावेजों के संबंध में अपवाद प्रदान करता है जो साक्षी को स्मृति को ताजा करने के लिए दिए जाते हैं या जिससे प्रतिपरीक्षा के दौरान साक्षी का मुकाबला किया जा सके । पक्षकार की तुलना साक्षी से नहीं की जा सकती है । संहिता का आदेश 1, वादी के पक्षकारों के बारे में है । वाद को लाने वाले व्यक्ति को वादी कहा जाता है और जिस व्यक्ति पर वाद लाया जा रहा है उसे प्रतिवादी कहा जाता है । इस प्रकार वादी और प्रतिवादी दोनों एक वाद के पक्षकार कहलाते हैं । विचारण के दौरान, पक्षकार सामान्यतया अपने दावे का समर्थन करने के लिए एक या अधिक साक्षियों को बुलाते हैं । इस विभेद की पुष्टि संहिता के आदेश 7, नियम 14(1) की भाषा से होती है जिसके अधीन वादी को उसके द्वारा वादपत्र प्रस्तुत किए जाने

पर दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए बाध्य किया गया है । इसलिए नियम यह है कि यदि वादी के द्वारा कोई दस्तावेज प्रस्तुत किया जाना है तो वह वादपत्र के साथ ही प्रस्तुत किया जाएगा । किसी भी दस्तावेज को बाद में तभी प्रस्तुत किया जा सकता है जब न्यायालय दस्तावेज को प्रस्तुत न करने के लिए स्पष्ट किए गए आधारों से संतुष्ट हो । वर्तमान मामले में अपीलार्थी ने अपने वादपत्र के साथ न तो डायरी के उक्त पृष्ठों को फाइल किया और न ही उक्त दस्तावेजों की कोई सूची फाइल की थी । उक्त दस्तावेजों को समुचित प्रक्रम पर उसकी मुख्य परीक्षा के शपथपत्र के साथ फाइल न करने का कोई कारण बताए बिना ही संलग्न किया गया था । कुटुंब न्यायालय साक्ष्य प्राप्त कर सकता है चाहे वह अन्यथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 के अधीन सुसंगत या ग्राह्य हो या न हो, परंतु ऐसा तब किया जा सकता है जब उनकी राय में, ऐसा साक्ष्य विवाद से निपटारा करने में प्रभावी रूप से सहायक होगा । किसी कुटुंब न्यायालय के लिए अपने व्यक्तिपरक समाधान में दस्तावेजी साक्ष्य प्राप्त और ग्रहण करने की कसौटी यह है कि वह साक्ष्य विवाद का निपटारा करने में प्रभावी रूप से सहायक हो । (पैरा 13, 14, 15, 16 और 17)

अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए वाद फाइल किया है । हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (i-क) के अनुसार, विवाह-विच्छेद के लिए वाद पति या पत्नी की ओर से तब लाया जा सकता है जब दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापित होने के पश्चात् वादी के साथ क्रूरता का व्यवहार किया हो । अपीलार्थी का मामला यह नहीं है कि प्रतिवादी का अभी भी किसी अन्य के साथ प्रेम-प्रसंग चल रहा है और यह कि इसी कारण से वह अभी भी उसके साथ नहीं रहना चाहती है जिससे उसके प्रति क्रूरता कारित होती है । इन परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपनी व्यक्तिपरक तुष्टि को अभिव्यक्त इस प्रकार से किया है कि वाद का विनिश्चय प्रस्थापित दस्तावेजों पर निर्भर नहीं करता है । (पैरा 18)

अपीली (सिविल) अधिकारिता के आदेश सं. 74 के विरुद्ध अपील ।

2015 के वैवाहिक वाद सं. 462 में कुटुंब न्यायालय कांशीपुर, जिला ऊधमसिंह नगर के तारीख 12 मार्च, 2021 के आदेश के विरुद्ध कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री योगेश उपाध्याय

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति आलोक कुमार वर्मा ने दिया ।

न्या. वर्मा – यह अपील राकेश कांडपाल बनाम नीलम कांडपाल नामक 2015 के वाद सं. 462 में तारीख 12 मार्च, 2021 को विद्वान् न्यायाधीश द्वारा पारित उस आदेश के विरुद्ध कुटुंब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के अधीन फाइल की गई है जिसके अनुसार अपीलार्थी-वादी द्वारा प्रस्तुत की गई डायरी के पृष्ठों में प्रत्यर्थी-प्रतिवादी के हस्तलेख का मिलान किए जाने के लिए अपीलार्थी-वादी की ओर से फाइल किया गया आवेदन जिसके साथ मुख्य परीक्षा का शपथपत्र भी फाइल किया गया था, खारिज कर दिया गया ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी का विवाह तारीख 29 नवंबर, 2011 को हुआ था तथा उनके विवाह से वर्ष 2013 में एक पुत्री का जन्म हुआ था । अपीलार्थी-पति ने हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन उपलब्ध क्रूरता के आधार पर विवाह के विघटन की ईप्सा करते हुए प्रत्यर्थी-पत्नी के विरुद्ध विवाह-विच्छेद करने के लिए वाद फाइल किया था । वादी द्वारा वादपत्र में यह अभिकथन किया गया है कि उसकी पत्नी का, विवाह से पूर्व किसी अन्य के साथ प्रेम संबंध था । कुटुंब के सदस्यों के दबाव में वह उससे विवाह करने के लिए सहमत हुई थी । उसकी पत्नी और उसके पैतृक कुटुंब के सदस्यों का व्यवहार उसके प्रति क्रूर है । वे प्राय: उससे धन की मांग करते थे । तारीख 15 दिसंबर, 2013 को उसकी पत्नी अपनी अप्राप्तवय पुत्री आभूषण, नकदी आदि के साथ वैवाहिक गृह से चली गई थी ।

3. प्रत्यर्थी-प्रतिवादी ने जो अपीलार्थी-वादी की पत्नी है, अपना लिखित कथन फाइल किया । उसने वादी द्वारा किए गए इन सभी अभिकथनों से इनकार किया है ।

4. इन विवाद्यकों के परिनिर्धारण के पश्चात् वादी ने मुख्य परीक्षा के अपने शपथपत्र के साथ डायरी के पृष्ठों जो उसकी पत्नी के तात्पर्यित हस्तलेख में हैं, यह साबित करने के लिए संलग्न किया है कि उसके साथ विवाह करने के लिए उसकी पत्नी सहमत नहीं थी । प्रतिवादी-पत्नी ने अपनी मुख्य परीक्षा के शपथपत्र में वादी के सभी अभिकथनों से इनकार किया है । इसलिए वादी ने अपनी पत्नी के हस्तलेख की तुलना करने के लिए हस्तलेख-विशेषज्ञ को बुलाने के लिए एक आवेदन फाइल किया है । प्रत्यर्थी ने इस पर अपना आक्षेप फाइल किया है । दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने आक्षेपित आदेश द्वारा उक्त आवेदन खारिज कर दिया । इससे व्यथित होकर अपीलार्थी-वादी ने वर्तमान अपील प्रस्तुत की ।

5. विद्वान् विचारण न्यायालय ने उक्त आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया था कि उक्त दस्तावेजों को समुचित प्रक्रम पर फाइल न करने का कोई कारण बताए बिना फाइल किया गया था । वादी यह स्पष्ट नहीं कर सका कि उसे उक्त दस्तावेज कब और कहां से प्राप्त हुए, वादी यह भी स्पष्ट नहीं कर सका कि उसने अपने वादपत्र में उक्त दस्तावेजों के संबंध में कोई कथन क्यों नहीं किया । वाद का विनिश्चय प्रस्तावित दस्तावेजों पर निर्भर नहीं करता है ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री योगेश उपाध्याय को सुना और संबंधित प्रश्नगत दस्तावेजों की प्रतियों का परिशीलन किया जो अभिलेख पर उपलब्ध हैं ।

7. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री योगेश उपाध्याय ने दलील दी है कि अपीलार्थी ने अपने वादपत्र में इस तथ्य का उल्लेख किया है कि अपीलार्थी के साथ विवाह होने से पूर्व प्रत्यर्थी का अन्य किसी व्यक्ति के साथ प्रेम प्रसंग था तथा वह अपने कुटुंब के सदस्यों के दबाव में उससे विवाह करने के लिए सहमत हुई थी । अपीलार्थी ने अपनी मुख्य परीक्षा

के शपथपत्र के साथ एक डायरी के पृष्ठों को फाइल किया है । डायरी के उक्त पृष्ठों को प्रत्यर्थी द्वारा लिखा गया था तथा प्रत्यर्थी ने उस हस्तलेख से इनकार किया है । डायरी के पृष्ठों की विषयवस्तु स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित यह करती है कि प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी से कुटुंब के सदस्यों के दबाव में आकर विवाह किया था तथा अपीलार्थी के मामले को साबित करने के लिए हस्तलेख-विशेषज्ञ की राय अभिप्राप्त करना आवश्यक है ।

8. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (जिसे इसमे इसके पश्चात् "संहिता" कहा गया है) का आदेश 7, नियम 14 "उन दस्तावेजों को प्रस्तुत करने के बारे में है जिनके आधार पर वादी वाद लाता है या निर्भर करता है" और आदेश 13 "दस्तावेजों को पेश किए जाने, परिबद्ध किए जाने और लौटाए जाने के बारे में है ।" इससे संबंधित उपबंध नीचे दिए जा रहे हैं ।

9. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 7, नियम 14 इस प्रकार है :–

> "14. **उन दस्तावेजों की प्रस्तुति जिन पर वादी वाद लाता है या निर्भर करता है** – (1) जहां वादी किसी दस्तावेज के आधार पर वाद लाता है या अपने दावे के समर्थन में अपने कब्जे या शक्ति में की दस्तावेज पर निर्भर करता है वहां वह उन दस्तावेजों को एक सूची में प्रविष्ट करेगा और उसके द्वारा वादपत्र में उपस्थित किए जाने के समय वह उसे न्यायालय में पेश करेगा और उसी समय दस्तावेज और उसकी प्रति को वादपत्र के साथ फाइल किए जाने के लिए परिदत्त करेगा ।
>
> (2) जहां ऐसा कोई दस्तावेज वादी के कब्जे या शक्ति में नहीं है वहां वह जहां तक संभव हो सके यह कथन करेगा कि वह किसके कब्जे में या शक्ति में है ।
>
> (3) ऐसा दस्तावेज जिसे वादी द्वारा न्यायालय में तब प्रस्तुत किया जाना चाहिए । जब वादपत्र प्रस्तुत किया जाता है, या वादपत्र में जोड़ी जाने वाली या उपाबद्ध की जाने वाली सूची में प्रविष्ट

किया जाना है, किंतु तद्नुसार, प्रस्तुत तथा प्रविष्ट नहीं किया जाता है तो उसे न्यायालय की अनुमति के बिना वाद की सुनवाई के समय उसकी ओर से साक्ष्य में ग्रहण नहीं किया जाएगा ।

(4) इस नियम की कोई बात ऐसे दस्तावेजों पर लागू नहीं होगी जो वादी के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के लिए पेश किए गए हों या किसी साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिए गए हों ।"

10. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 13, नियम 1 को नीचे उत्कथित किया गया है :–

"1. **मूल दस्तावेजों का विवाद्यकों के स्थिरीकरण के समय या उसके पूर्व पेश किया जाना** – (1) पक्षकार या उसके प्लीडर मूल सभी दस्तावेजी साक्ष्य जहां उनकी प्रतियां वादपत्र या लिखित कथन के साथ फाइल की गई हैं, विवाद्यकों के स्थिरीकरण के समय या उसके पूर्व पेश करेगा ।

(2) न्यायालय इस प्रकार पेश किए गए दस्तावेजों को ले लेगा : परन्तु यह तब जबकि उनके साथ ऐसे प्ररूप में तैयार की गई एक सही-सही सूची हो जो उच्च न्यायालय ने निर्दिष्ट किया हो ।

(3) उपनियम (1) की कोई भी बात ऐसे दस्तावेजों पर लागू नहीं होगी, जो –

(क) दूसरे पक्षकारों के साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए पेश किए गए हैं, अथवा

(ख) किसी साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिए गए हैं ।"

11. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 के अधीन शब्द 'दस्तावेजों' और 'साक्ष्य' का निर्वचन खंड के द्वारा किया गया है :–

"दस्तावेज" – 'दस्तावेज' से ऐसा कोई विषय अभिप्रेत है जिसको किसी पदार्थ पर अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा

या उनमें से एक से अधिक साधनों द्वारा अभिव्यक्त या वर्णित किया गया है जो उस विषय के अभिलेखन के प्रयोजन से उपयोग किए जाने को आशयित हो या उपयोग किया जा सके ।

"साक्ष्य" – साक्ष्य शब्द से अभिप्रेत है और उसके अन्तर्गत आते हैं –

(1) वे सभी कथन जिनके, जांचाधीन तथ्य के विषयों के संबंध में न्यायालय अपने सामने साक्षियों के द्वारा किए जाने की अनुज्ञा देता है, या अपेक्षा करता है, ऐसे कथन मौखिक साक्ष्य कहलाते हैं ;

(2) न्यायालय के निरीक्षण के लिए पेश किए गए सभी दस्तावेज, जिनके अंतर्गत इलेक्ट्रानिक अभिलेख भी हैं ; ऐसी दस्तावेजें दस्तावेजी साक्ष्य कहलाती हैं ।

12. साक्ष्य को दो शीर्षों में वर्गीकृत किया गया है (i) मौखिक साक्ष्य (ii) दस्तावेजी साक्ष्य ।

13. न्यायालय के निरीक्षण के लिए प्रस्तुत किया गया दस्तावेज स्वीकार्य हो जाने पर साक्ष्य बन जाता है । दस्तावेजी साक्ष्य की ग्राह्यता और सबूत के प्रकार में विभेद होना चाहिए । दूसरे शब्दों में जिस दस्तावेज का अवलंब पक्षकार के द्वारा लिया गया है उसे वैध रूप से अभिलेख पर लाना चाहिए ।

14. यदि संहिता के आदेश 7, नियम 14 के अधीन वादपत्र के साथ कोई दस्तावेज या उसकी प्रति फाइल नहीं की जा सकी थी तो उसे वाद की सुनवाई के दौरान वादी की ओर से साक्ष्य के रूप में प्राप्त किए जाने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता । तथापि, न्यायालय की इजाजत से उस दस्तावेज को साक्ष्य के रूप में प्राप्त किया जा सकता है । आदेश 13, नियम 1 यह उपबंध करता है कि पक्षकारों को विवाद्यक के परिनिर्धारण से पूर्व सभी मूल दस्तावेजी साक्ष्यों को प्रस्तुत करना होगा । सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश 7, नियम 14 केवल उन दस्तावेजों के संबंध में अपवाद प्रदान करता है जिन्हें वादी के साक्षियों

की प्रतिपरीक्षा के लिए प्रस्तुत किया गया हो या साक्षी को केवल उसकी स्मृति को ताजा करने के लिए दिया गया हो । संहिता का आदेश 13, नियम 1(3) केवल उन दस्तावेजों के संबंध में अपवाद प्रदान करता है जो साक्षी को स्मृति को ताजा करने के लिए दिए जाते हैं या जिससे प्रतिपरीक्षा के दौरान साक्षी का मुकाबला किया जा सके ।

15. पक्षकार की तुलना साक्षी से नहीं की जा सकती है । संहिता का आदेश 1, वादी के पक्षकारों के बारे में है । वाद को लाने वाले व्यक्ति को वादी कहा जाता है और जिस व्यक्ति पर वाद लाया जा रहा है उसे प्रतिवादी कहा जाता है । इस प्रकार वादी और प्रतिवादी दोनों एक वाद के पक्षकार कहलाते हैं । विचारण के दौरान, पक्षकार सामान्यतया अपने दावे का समर्थन करने के लिए एक या अधिक साक्षियों को बुलाते हैं । इस विभेद की पुष्टि संहिता के आदेश 7, नियम 14(1) की भाषा से होती है जिसके अधीन वादी को उसके द्वारा वादपत्र प्रस्तुत किए जाने पर दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए बाध्य किया गया है । इसलिए नियम यह है कि यदि वादी के द्वारा कोई दस्तावेज प्रस्तुत किया जाना है तो वह वादपत्र के साथ ही प्रस्तुत किया जाएगा । किसी भी दस्तावेज को बाद में तभी प्रस्तुत किया जा सकता है जब न्यायालय दस्तावेज को प्रस्तुत न करने के लिए स्पष्ट किए गए आधारों से संतुष्ट हो ।

16. वर्तमान मामले में अपीलार्थी ने अपने वादपत्र के साथ न तो डायरी के उक्त पृष्ठों को फाइल किया और न ही उक्त दस्तावेजों की कोई सूची फाइल की थी । उक्त दस्तावेजों को समुचित प्रक्रम पर उसकी मुख्य परीक्षा के शपथपत्र के साथ फाइल न करने का कोई कारण बताए बिना ही संलग्न किया गया था ।

17. कुटुंब न्यायालय साक्ष्य प्राप्त कर सकता है चाहे वह अन्यथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 के अधीन सुसंगत या ग्राह्य हो या न हो, परंतु ऐसा तब किया जा सकता है जब उनकी राय में, ऐसा साक्ष्य विवाद से निपटारा करने में प्रभावी रूप से सहायक होगा । किसी कुटुंब न्यायालय के लिए अपने व्यक्तिपरक समाधान में दस्तावेजी साक्ष्य प्राप्त

और ग्रहण करने की कसौटी यह है कि वह साक्ष्य विवाद का निपटारा करने में प्रभावी रूप से सहायक हो ।

18. अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी के विरुद्ध क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद के लिए वाद फाइल किया है । हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 की उपधारा (1) के खंड (i-क) के अनुसार, विवाह-विच्छेद के लिए वाद पति या पत्नी की ओर से तब लाया जा सकता है जब दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापित होने के पश्चात् वादी के साथ क्रूरता का व्यवहार किया हो । अपीलार्थी का मामला यह नहीं है कि प्रतिवादी का अभी भी किसी अन्य के साथ प्रेम-प्रसंग चल रहा है और यह कि इसी कारण से वह अभी भी उसके साथ नहीं रहना चाहती है जिससे उसके प्रति क्रूरता कारित होती है । इन परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपनी व्यक्तिपरक तुष्टि को अभिव्यक्त इस प्रकार से किया है कि वाद का विनिश्चय प्रस्थापित दस्तावेजों पर निर्भर नहीं करता है ।

19. उपर्युक्त विस्तृत चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि वर्तमान अपील में कोई सार नहीं है । इसलिए अपील ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर ही खारिज किए जाने योग्य है ।

20. उपरोक्त कथित कारणों के आधार पर अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की जाती है ।

अम./अस.

नटवरलाल रणछोड़दास पटेल और अन्य

बनाम

हरेन्द्रभाई सोमजीभाई पटेल और अन्य

(2018 की अपील सं. 57)

तारीख 27 अप्रैल, 2021

मुख्य न्यायमूर्ति अशोक कुमार सी. जोशी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 39, नियम 1 [सपठित संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52] – अस्थायी व्यादेश – अंतरिम निपटारे तक यथास्थिति बनाए रखने का आदेश – अविभाजित संपत्ति – वाद लंबित रहने के दौरान संपत्ति का अंतरण – 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के अधीन वाद के पक्षकार का हस्तांतरण बातिल नहीं किया जा सकता किंतु यह मुकदमे के अन्य पक्षकारों के अधिकारों के लिए मात्र सहायक ही है – अतः जहां तक वाद के अन्य पक्षकारों का सम्बन्ध है, धारा 52 वाद के लंबित रहने के दौरान वाद संपत्ति से संबंधित संव्यवहार को शून्य नहीं कर सकती – वाद के लंबित रहने के दौरान, वाद संपत्ति के किसी भी अधिकार, हक़ या हित का अंतरण या किसी भी अधिकार, हक़ या हित का पारिणामिक अर्जन, वाद में विनिश्चय किए जाने के अध्यधीन होगा, अतः निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

यह अपील 2014 के विशेष सिविल वाद सं. 145 में 16वें अपर वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, सूरत द्वारा तारीख 28 नवंबर, 2017 को पारित उस एक ही आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43, नियम 1 के अधीन फाइल की गई है जिसके द्वारा मूल वादी द्वारा प्रस्तुत किए गए अंतरिम व्यादेश आवेदन मंजूर किए गए और मूल प्रतिवादियों को यह निदेश दिया गया कि वे वाद का अंतिम रूप से निपटारा होने तक ग्राम बमरौली, उपखंड सूरत, नगर मजूरा, जिला सूरत में स्थित भूमि (राजस्व सर्वेक्षण सं. 70/2, ब्लॉक सं. 105, टी. पी. योजना सं. 58 बमरौली, भूखंड सं. 6, क्षेत्रफल 5807 वर्ग मीटर)

को लेकर यथास्थिति बनाए रखेंगे । अपीलार्थी मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28 हैं जबकि प्रत्यर्थी सं. 102 मूल वादी हैं और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18, मूल प्रतिवादी सं. 1 से 16 हैं । सुविधा के लिए इसमें इसके पश्चात् पक्षकारों को उनकी मूल हैसियत से निर्दिष्ट किया जाएगा । संक्षेप में वर्तमान मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने विद्वान् प्रधान वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, सूरत के समक्ष 2014 का विशेष सिविल वाद सं. 145 प्रतिवादियों के विरुद्ध फाइल किया जिसमें विशेषकर प्रतिवादी सं. 1 और 2 के विरुद्ध वाद के पैरा 11(1) से पैरा 11(6) के रूप में प्रार्थना की । पैरा 11(7) में की गई प्रार्थना बाद में जोड़ी गई । वादियों का दावा संपूर्ण भूमि के संबंध में नहीं अपितु 967.83 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले भूखंड के अविभाजित हिस्से के संबंध में था । यह वाद विशेष रूप से तारीख 16 जनवरी, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय-करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन और स्थाई व्यादेश की घोषणा के लिए फाइल किया गया था । वादियों के पास 967.83 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले भूखंड का विक्रय-करार है । अपीलार्थियों का यह पक्षकथन है कि प्रतिवादी सं. 1 और 2 संपूर्ण संपत्ति (राजस्व सर्वेक्षण सं. 70/2, ब्लॉक सं. 105, मजूरा, ग्राम बमरौली, क्षेत्रफल 8296 वर्ग मीटर) के संयुक्त स्वामी हैं । उक्त भूमि नया टैनियोर भूखंड है जो वर्तमान अपीलार्थियों द्वारा बाद में पुराने टैनियोर भूखंड में परिवर्तित कर दिया गया । उक्त वाद में प्रत्यर्थियों ने अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन (प्रदर्श-5) फाइल किया । इस वाद के लंबित रहने के दौरान संपूर्ण संपत्ति प्रतिवादी सं. 3 से 28 (अपीलार्थियों सहित) के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा तारीख 10 मार्च, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से बेच दी गई जो कि संपूर्ण भूमि का बृहत्तर भाग था जिसमें से 967.83 वर्ग मीटर के विवादित भूखंड को अलग रखा गया था । विचारण न्यायालय ने इस आवेदन (प्रदर्श-5) की सुनवाई के पश्चात् नोटिस जारी किया, तथापि, वाद के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने वर्तमान अपीलार्थियों को तारीख 3 जून, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से वाद भूमि (क्षेत्रफल 967.83 वर्ग मीटर) विक्रय कर दी । तारीख 4 अक्तूबर, 2014 को वादियों ने आवेदन (प्रदर्श-22) फाइल किया जिसमें प्रतिवादियों को यह निदेश दिए जाने की प्रार्थना की गई कि वे किसी भी तृतीय पक्षकार के पक्ष में वाद संपत्ति (967.83 वर्ग मीटर का अविभाजित भूखंड) का विक्रय, अंतरण या

संव्यवहार तारीख 3 जून, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा नहीं करेंगे । चूंकि प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने प्रश्नगत भूखंड अपीलार्थियों को विक्रय कर दिया था, इसलिए वादियों ने वर्तमान अपीलार्थियों को प्रतिवादी सं. 17 से 28 के रूप में पक्षकार बनाने और पश्चात्वर्ती परिवर्तन को दृष्टिगत करते हुए वाद तथा आवेदन (प्रदर्श-5) में संशोधन किए जाने के लिए, आवेदन (प्रदर्श-27) फाइल किया । पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने आवेदन (प्रदर्श-5 और 22) में, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, तारीख 28 सितम्बर, 2017 का आक्षेपित आदेश सम्पूर्ण भूमि पर यथास्थिति बनाए रखने के लिए पारित किया और इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थियों ने वर्तमान अपील फाइल की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख का परिशीलन करने पर प्रथमदृष्ट्या यह प्रकट होता है कि प्रश्नगत वाद तारीख 13 मार्च, 2014 को फाइल किया गया था और प्रतिवादी सं. 1 से 16 (जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 हैं) को तारीख 19 मार्च, 2014 को नोटिस तामील हुआ जबकि अपीलार्थियों के पक्ष में वाद भूमि से संबंधित विक्रय विलेख तारीख 3 जून, 2014 को निष्पादित हुआ प्रतीत होता है । इस प्रकार यह पूर्णतया स्पष्ट है कि वाद संपत्ति वाद के लंबित रहने के दौरान अंतरित की गई है जो 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के विपरीत है । न्यायालय विधि के इस सुस्थापित सिद्धांत से अवगत है कि 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के अधीन वाद के पक्षकार का हस्तांतरण बातिल नहीं किया जा सकता किंतु यह मुकदमे के अन्य पक्षकारों के अधिकारों के लिए मात्र सहायक ही है । अतः, जहां तक वाद के अन्य पक्षकारों का संबंध है धारा 52 वाद के लंबित रहने के दौरान वाद संपत्ति से संबंधित संव्यवहार को शून्य नहीं कर सकती । वाद के लंबन के दौरान, वाद संपत्ति के किसी भी अधिकार, हक़ या हित का अंतरण या किसी भी अधिकार, हक़ या हित का पारिणामिक अर्जन, वाद में विनिश्चय किए जाने के अध्यधीन होगा । जैसाकि पहले ही विचार किया गया है यह निर्विवादित तथ्य है कि संपूर्ण संपत्ति अविभाजित है और मूल स्वामियों के बीच अभी तक इसका विभाजन नहीं हुआ है और इन परिस्थितियों में इस न्यायालय की सुविचारित राय में, जैसाकि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, यदि संपूर्ण संपत्ति पर यथास्थिति कायम

रखने का आदेश नहीं किया जाता है, तब मूल वादियों को अपरिहार्य हानि हो सकती है । इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी सामने आया है कि वाद के परिणाम से व्यथित पक्षकार विधि के अधीन उपलब्ध उपचार का अवलंब भलीभांति ले सकता है, अत: वर्तमान अपील पर विचार किए जाने हेतु कोई सार नहीं है । वर्तमान मामले में वाद लंबित रहने के दौरान अपीलार्थियों के पक्ष में संपत्ति का अंतरण किया गया है । इसके अतिरिक्त यह मूल स्वामियों की अविभाजित संपत्ति है और अभी तक इसका विभाजन नहीं किया गया है और इन परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने ठीक ही मत व्यक्त किया है । इसके अतिरिक्त पूर्व में विक्रय-करार निष्पादित किए जाने से संबंधित कोई भी अभिवाक् वादियों के पक्ष में किए गए अभिवाक् संबद्ध निचले न्यायालय के समक्ष किया गया प्रतीत नहीं होता है और न ही आक्षेपित आदेश से ऐसा कुछ प्रतिबिम्बित होता है । इसके अतिरिक्त जैसाकि पूर्वोक्त निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है । विचाराधीन वाद का सिद्धांत इस पर आधारित है कि न्याय प्रशासन के लिए यह आवश्यक है कि किसी वाद में न्यायालय का विनिश्चय मुकदमे के पक्षकारों पर ही बाध्यकारी नहीं होगा अपितु उन पर भी लागू होगा जो विलंब करते हैं । तथापि, धारा 52 वाद के दौरान निष्पादित किसी दस्तावेज़ को शून्य या व्यर्थ नहीं करती है बल्कि उसे किसी मुक़दमे के पक्षकारों के अधिकारों के अधीन लाती है जैसा कि न्यायालय द्वारा परिणामस्वरूप निर्धारित किया जाए । अतः, पश्चात्वर्ती क्रेता के पक्ष में किया गया अंतरण शर्तों और न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिषेध आदेशों, यदि कोई पारित किया गया हो, के अध्यधीन होता है । इसलिए हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए पूर्वोक्त विनिश्चय अपीलों के लिए किसी भी प्रयोजन का नहीं है । (पैरा 8.4, 8.5 और 8.7)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2013] (2013) 5 एस. सी. सी. 397 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389 :
थॉमसन प्रैस (इंडिया) लिमिटेड बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इनवेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य** । 6.2

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की अपील सं. 57.

2014 के विशेष सिविल वाद सं. 145 में अपर वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, सूरत द्वारा तारीख 28 नवंबर, 2017 को पारित एक ही आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43, नियम 1 के अधीन अपील ।

अपीलार्थियों की ओर से श्री परसी कवीना (ज्येष्ठ अधिवक्ता) और श्री ए. बी. मुंशी

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री के. जे. ब्रह्मभट्ट, सुश्री बर्षा ब्रह्मभट्ट और सुश्री पूजा एच. भारद्वाज

आदेश

यह अपील 2014 के विशेष सिविल वाद सं. 145 में 16वें अपर वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, सूरत द्वारा तारीख 28 नवंबर, 2017 को पारित उस एक ही आदेश के विरुद्ध सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 43, नियम 1 के अधीन फाइल की गई है जिसके द्वारा मूल वादी द्वारा प्रस्तुत किए गए अंतरिम व्यादेश आवेदन मंजूर किए गए और मूल प्रतिवादियों को यह निदेश दिया गया कि वे वाद का अंतिम रूप से निपटारा होने तक ग्राम बमरौली, उपखंड सूरत, नगर मजूरा, जिला सूरत में स्थित भूमि (राजस्व सर्वेक्षण सं. 70/2, ब्लॉक सं. 105, टी. पी. योजना सं. 58 बमरौली, भूखंड सं. 6, क्षेत्रफल 5807 वर्ग मीटर) को लेकर यथास्थिति बनाए रखेंगे ।

2. अपीलार्थी मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28 हैं जबकि प्रत्यर्थी सं. 102 मूल वादी हैं और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18, मूल प्रतिवादी सं. 1 से 16 हैं । सुविधा के लिए इसमें इसके पश्चात् पक्षकारों को उनकी मूल हैसियत से निर्दिष्ट किया जाएगा ।

3. संक्षेप में वर्तमान मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि वादियों ने विद्वान् प्रधान वरिष्ठ सिविल न्यायाधीश, सूरत के समक्ष 2014 का विशेष सिविल वाद सं. 145 प्रतिवादियों के विरुद्ध फाइल किया जिसमें विशेषकर प्रतिवादी सं. 1 और 2 के विरुद्ध वाद के पैरा 11(1) से पैरा

11(6) के रूप में प्रार्थना की । पैरा 11(7) में की गई प्रार्थना बाद में जोड़ी गई । वादियों का दावा संपूर्ण भूमि के संबंध में नहीं अपितु 967.83 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले भूखंड के अविभाजित हिस्से के संबंध में था । यह वाद विशेष रूप से तारीख 16 जनवरी, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय-करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन और स्थाई व्यादेश की घोषणा के लिए फाइल किया गया था । वादियों के पास 967.83 वर्ग मीटर क्षेत्रफल वाले भूखंड का विक्रय-करार है । अपीलार्थियों का यह पक्षकथन है कि प्रतिवादी सं. 1 और 2 संपूर्ण संपत्ति (राजस्व सर्वेक्षण सं. 70/2, ब्लॉक सं. 105, मजूरा, ग्राम बमरौली, क्षेत्रफल 8296 वर्ग मीटर) के संयुक्त स्वामी हैं । उक्त भूमि नया टैनियोर भूखंड है जो वर्तमान अपीलार्थियों द्वारा बाद में पुराने टैनियोर भूखंड में परिवर्तित कर दिया गया । उक्त वाद में प्रत्यर्थियों ने अंतरिम व्यादेश के लिए आवेदन (प्रदर्श-5) फाइल किया । इस वाद के लंबित रहने के दौरान संपूर्ण संपत्ति प्रतिवादी सं. 3 से 28 (अपीलार्थियों सहित) के पक्ष में प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा तारीख 10 मार्च, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से बेच दी गई जो कि संपूर्ण भूमि का बृहत्तर भाग था जिसमें से 967.83 वर्ग मीटर के विवादित भूखंड को अलग रखा गया था । विचारण न्यायालय ने इस आवेदन (प्रदर्श-5) की सुनवाई के पश्चात् नोटिस जारी किया, तथापि, वाद के लंबित रहने के दौरान प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने वर्तमान अपीलार्थियों को तारीख 3 जून, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से वाद भूमि (क्षेत्रफल 967.83 वर्ग मीटर) विक्रय कर दी । तारीख 4 अक्तूबर, 2014 को वादियों ने आवेदन (प्रदर्श-22) फाइल किया जिसमें प्रतिवादियों को यह निदेश दिए जाने की प्रार्थना की गई कि वे किसी भी तृतीय पक्षकार के पक्ष में वाद संपत्ति (967.83 वर्ग मीटर का अविभाजित भूखंड) का विक्रय, अंतरण या संव्यवहार तारीख 3 जून, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख द्वारा नहीं करेंगे । चूंकि प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने प्रश्नगत भूखंड अपीलार्थियों को विक्रय कर दिया था, इसलिए वादियों ने वर्तमान अपीलार्थियों को प्रतिवादी सं. 17 से 28 के रूप में पक्षकार बनाने और पश्चात्वर्ती परिवर्तन को दृष्टिगत करते हुए वाद तथा आवेदन (प्रदर्श-5) में संशोधन किये जाने के लिए, आवेदन (प्रदर्श-27) फाइल किया ।

3.1 पक्षकारों को सुनने के पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने आवेदन प्रदर्श 5 और 22 में, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है, तारीख 28 सितम्बर, 2017 का आक्षेपित आदेश सम्पूर्ण भूमि पर यथास्थिति बनाये रखने के लिए पारित किया और इस आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थियों ने वर्तमान अपील फाइल की है ।

4. तारीख 19 मार्च, 2018 को इस न्यायालय द्वारा जारी नोटिस के अनुसरण में विद्वान् अधिवक्ता सुश्री के. जे. ब्रह्मभट्ट प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से हाजिर हुई हैं । प्रत्यर्थी सं. 5 से 18 नोटिस तामील कराए जाने के बावजूद न्यायालय के समक्ष पेश नहीं हुए हैं जबकि प्रत्यर्थी सं. 3 और 4 ने नोटिस प्राप्त करने से इनकार किया है इसलिए यह माना जाएगा कि उन्हें नोटिस तामील हो गया है ।

5. स्वीकार किया जाता है ।

6. अपीलार्थियों की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता सुश्री परसी कवीना के साथ विद्वान् अधिवक्ता श्री ए. बी. मुंशी हाजिर हुए जिन्होंने दृढ़तापूर्वक यह दलील दी है कि वर्तमान मामले में प्रश्नगत वाद में वादियों (जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 हैं) का मामला यह है कि प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने मूल वादियों (जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 हैं) के पक्ष में तारीख 27 अप्रैल, 2012 को विक्रय-करार निष्पादित किया है जो ग्राम बमरौली, उपखंड सूरत नगर मजूरा, जिला सूरत में स्थित भूखंड (राजस्व सर्वेक्षण सं. 70/2, ब्लॉक सं. 105, टी. पी. योजना सं. 58 (बमरौली) के संबंध में है जिसे अंतिम प्लाट सं. 6, क्षेत्रफल 967.83 वर्ग मीटर) कहा गया है और संपूर्ण भूमि के संबंध में कोई विवाद नहीं किया गया, तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने आक्षेपित आदेश द्वारा संपूर्ण भूमि पर यथास्थिति बनाए रखने का आदेश किया जो अवैध, मनमाना और अनुचित है और वादियों (इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 1 और 2) ने संपूर्ण भूमि पर यथास्थिति का आदेश दुर्भावनापूर्ण पारित कराया है । यह दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी सं. 17 से 28 (इस मामले में के अपीलार्थी) प्रश्नगत भूमि के

रजिस्ट्रीकृत स्वामी अर्थात् विक्रय विलेख धारक हैं क्योंकि प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने वाद भूमि वर्तमान अपीलार्थियों के पक्ष में तारीख 3 जून, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से विक्रय की है । अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि कोई अपनी स्वयं की गलती का लाभ नहीं ले सकता ।

6.1 अपीलार्थियों (मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28) की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई है कि जब किसी भूमि में से किसी भूखंड का विक्रय-करार निष्पादित किया गया है, तब ऐसी स्थिति में विद्वान् विचारण न्यायाधीश को संपूर्ण भूमि पर यथास्थिति बनाए रखने का आदेश पारित नहीं करना चाहिए था । यह भी दलील दी गई है कि वादियों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे संपूर्ण भूमि को लेकर वाद फाइल करें जो कि यहां ऐसा मामला नहीं है और तदनुसार विचारण न्यायालय उस सीमा से परे आदेश नहीं कर सकता था जिसकी वाद में प्रार्थना ही नहीं की गई है ।

6.2 अपीलार्थियों (मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28) की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी है कि अपीलार्थी सं. 1 से 7 और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 तथा चन्द्रकांतभाई के बीच विक्रय-करार नोटरीकृत कराया गया था जो पहले ही हो गया था और **थॉमसन प्रैस (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **नानक बिल्डर्स एंड इनवेस्टर्स प्राइवेट लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अवलंब लेते हुए विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि वास्तव में अपीलार्थियों के पक्ष में पहले से विक्रय-करार निष्पादित किया जा चुका था ।

6.3 विद्वान् काउंसेल ने उपरोक्त का उल्लेख करते हुए यह दलील दी कि वर्तमान अपील मंजूर की जा सकती है और आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाए ।

7. इसके प्रतिकूल प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (मूल वादी) की ओर से विद्वान् अधिवक्ता सुश्री के. जे. ब्रह्मभट्ट ने वर्तमान अपील का

[1] (2013) 5 एस. सी. सी. 397 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389.

दृढ़तापूर्वक विरोध करते हुए यह दलील दी कि प्रतिवादी सं. 1 और 2 (इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 और 4) प्रश्नगत भूमि में से अपना अविभाजित हिस्सा (967.83 वर्ग मीटर) वादियों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2) को विक्रय करने के लिए सहमत हो गए जिसके लिए तारीख 27 अप्रैल, 2012 को विक्रय-करार नोटरीकृत किया गया और वह तारीख 16 जनवरी, 2014 को इन वादियों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2) के पक्ष में सम्यक् रूप से रजिस्ट्रीकृत किया गया । यह दलील दी गई है कि इसके पश्चात् प्रतिवादी सं. 1 और 2 (इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 3 और 4) पीछे हट गए और उन्होंने वादियों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2) के पक्ष में विक्रय-करार निष्पादित नहीं किया और इस प्रकार वादी अर्थात् इस मामले में के प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को प्रश्नगत वाद फाइल करने के लिए विवश होना पड़ा जिसमें इस वाद भूमि को लेकर अपीलार्थियों (प्रतिवादी सं. 7 और 28) के पक्ष में विक्रय-करार निष्पादित किए जाने की जानकारी प्राप्त होने पर वर्तमान अपीलार्थी पक्षकार बने । विद्वान् काउंसेल सुश्री ब्रह्मभट्ट ने यह दलील दी कि दोनों पक्षकारों को सुनने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने संपूर्ण संपत्ति पर यथास्थिति बनाए रखने का आदेश पारित किया । यह भी दलील दी गई है कि जहां तक अपीलार्थी सं. 1 से 7 और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 तथा चन्द्रकांतभाई के बीच 17 फरवरी, 2012 को नोटरीकृत किए गए विक्रय-करार का संबंध है, उक्त करार पर विचार नहीं किया जा सकता क्योंकि वह करार विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है । यह भी दलील दी गई है कि संपूर्ण भूमि तथा 4839.16 वर्ग मीटर के भूखंड से संबंधित तारीख 10 मार्च, 2014 वाले विक्रय विलेख (जो तारीख 21 मार्च, 2014 को रजिस्ट्रीकृत किया गया था) और 967.83 वर्ग मीटर वाले भूखंड से संबंधित तारीख 14 मार्च, 2014 वाले विक्रय विलेख (जो तारीख 3 जून, 2014 को निष्पादित किया गया था) में, 17 फरवरी, 2012 को नोटरीकृत किए गए उक्त विक्रय-करार का तनिक भी उल्लेख नहीं है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि वादियों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2) ने तारीख 13 मार्च, 2014 को वाद फाइल किया था और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 (अर्थात् प्रतिवादी सं. 1 से 16) को तारीख 19

मार्च, 2014 को नोटिस तामील कराए गए और इसके पश्चात् तारीख 3 जून, 2014 को वाद भूमि के संबंध में विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किया गया । इस प्रकार यद्यपि प्रतिवादी सं. 1 और 2 (प्रत्यर्थी सं. 3 और 4) वाद फाइल किए जाने से अवगत थे, इसलिए उन्होंने विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत कराया । तद्नुसार विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि अपीलार्थियों (मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28) और प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 (मूल प्रतिवादी सं. 1 से 16) के आचरण पर विचार करते हुए आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता और यदि ऐसा किया गया तो प्रत्यर्थी वाद भूमि में अपने अधिकार का दावा करेंगे जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (इस मामले में के मूल वादी) का अधिकार प्रभावित हो सकता है और कई-कई मुकदमे आरंभ हो सकते हैं ।

7.1 प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि वाद संपत्ति पैतृक अविभाजित संपत्ति है और अभी तक मूल स्वामी अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 (जो इस मामले में मूल प्रतिवादी सं. 1 से 16 हैं) के बीच विभाजन नहीं हुआ है, इसलिए आक्षेपित आदेश कायम रखे जाने योग्य है ।

7.2 इस प्रकार, उपरोक्त दलीलों के आधार पर विद्वान् अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि इस अपील में कोई सार नहीं है और यह खारिज की जाए ।

8. पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों और अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों तथा तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् यह पता चलता है कि अपीलार्थी, मूल प्रतिवादी सं. 17 से 28 हैं जो प्रश्नगत वाद में तारीख 7 जनवरी, 2016 के आदेश (प्रदर्श-27) के आधार पर पक्षकार बने थे । इसके अतिरिक्त अपीलार्थियों को प्रश्नगत भूमि का क्रेता बताया गया है जिसके लिए तारीख 3 जून, 2014 को विक्रय विलेख रजिस्ट्रीकृत किया गया था । यह भी बताया गया है कि अपीलार्थियों ने शेष भूमि (967.83 वर्ग मीटर वाले भूखंड से अन्यथा) भी क्रय कर ली थी जो उन्हें मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 द्वारा तारीख 10 मार्च, 2014 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के

माध्यम से विक्रय की गई थी । इस प्रकार संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अपीलार्थी संपूर्ण भूमि के क्रेता हैं । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 मूल वादी हैं जिन्होंने विनिर्दिष्ट अनुपालन, घोषणा और स्थाई व्यादेश के संबंध में प्रश्नगत वाद इस आधार पर फाइल किया है कि मूल प्रतिवादी सं. 1 और 2 ने तारीख 16 जनवरी, 2014 का विक्रय-करार उनके पक्ष में निष्पादित किया है ।

8.1 इस समागम पर यह उल्लेखनीय है कि वाद संपत्ति निर्विवादित रूप से पैतृक संपत्ति है और उसका विभाजन अभी तक नहीं किया गया है और न ही किसी भी न्यायालय में इससे संबंधित कोई मुकदमा लंबित है ।

8.2 मामले के उपरोक्त तथ्यों और परिस्थितियों से यह प्रतीत होता है कि प्रश्नगत संपत्ति के दो हितधारक अर्थात् वर्तमान अपीलार्थी तथा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 (मूल वादी) हैं जिनमें से एक पक्ष रजिस्ट्रीकृत विक्रय-करार और दूसरा पक्ष रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के आधार पर हितधारक बने हैं जैसाकि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है । अपीलार्थियों का यह भी दावा है कि उन्होंने संपूर्ण भूखंड दो अलग-अलग रजिस्ट्रीकृत विक्रय-विलेखों के माध्यम से क्रय किया है ।

8.3 उपरोक्त पृष्ठभूमि के आधार पर भूमि अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 52 को निर्दिष्ट करना सुसंगत होगा जो निम्न प्रकार है :–

> "52. **संपत्ति संबंधी वाद के लंबित रहते हुए संपत्ति का अंतरण** – [जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर भारत की सीमाओं के अंदर] प्राधिकारवान या [केन्द्र सरकार ***] द्वारा [ऐसी सीमाओं के परे स्थापित] किसी न्यायालय में [ऐसे] वाद या कार्यवाही के [लंबित रहते हुए], [जो दुस्संधिपूर्ण न हो और] जिसमें स्थावर संपत्ति का कोई अधिकार प्रत्यक्षत: और विनिर्दिष्टत: प्रश्नगत हो, वह संपत्ति उस वाद या कार्यवाही के किसी भी पक्षकार द्वारा उस न्यायालय के प्राधिकार के अधीन और ऐसे निबंधनों के साथ, जैसे वह अधिरोपित करे अंतरित या व्ययनित की जाने के सिवाय ऐसे

अंतरित या अन्यथा व्ययनित नहीं की जा सकती कि उसके किसी अन्य पक्षकार के किसी डिक्री या आदेश के अधीन, जो उसमें दिया जाए, अधिकारों पर प्रभाव पड़े ।

[स्पष्टीकरण – किसी वाद या कार्यवाही का लंबन इस धारा के प्रयोजनों के लिए उस तारीख से प्रारंभ हुआ समझा जाएगा जिस तारीख को सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय में वह वादपत्र प्रस्तुत किया गया या वह कार्यवाही संस्थित की गई और तब तक चलता हुआ समझा जाएगा जब तक उस वाद या कार्यवाही का निपटारा अंतिम डिक्री या आदेश द्वारा न हो गया हो और ऐसी डिक्री या आदेश की पूरी पुष्टि या उन्मोचन अभिप्राप्त न कर लिया गया हो या तत्समय-प्रवृत्त-विधि द्वारा उसके निष्पादन के लिए विहित किसी अवधि के अवसार के कारण वह अनभिप्राप्य न हो गया हो ।]

8.4 अभिलेख का परिशीलन करने पर प्रथमदृष्टया यह प्रकट होता है कि प्रश्नगत वाद तारीख 13 मार्च, 2014 को फाइल किया गया था और प्रतिवादी सं. 1 से 16 (जो इस मामले में प्रत्यर्थी सं. 3 से 18 हैं) को तारीख 19 मार्च, 2014 को नोटिस तामील हुआ जबकि अपीलार्थियों के पक्ष में वाद भूमि से संबंधित विक्रय विलेख तारीख 3 जून, 2014 को निष्पादित हुआ प्रतीत होता है । इस प्रकार यह पूर्णतया स्पष्ट है कि वाद संपत्ति वाद के लंबित रहने के दौरान अंतरित की गई है जो 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के विपरीत है । न्यायालय विधि के इस सुस्थापित सिद्धांत से अवगत है कि 'विचाराधीन वाद के सिद्धांत' के अधीन वाद के पक्षकार का हस्तांतरण बातिल नहीं किया जा सकता किंतु यह मुकदमे के अन्य पक्षकारों के अधिकारों के लिए मात्र सहायक ही है । अत:, जहां तक वाद के अन्य पक्षकारो का सम्बन्ध है धारा 52 वाद के लंबित रहने के दौरान वाद संपत्ति से सम्बंधित संव्यवहार को शून्य नहीं कर सकती । वाद के लंबन के दौरान, वाद संपत्ति के किसी भी अधिकार, हक़ या हित का अंतरण या किसी भी अधिकार, हक़ या हित का पारिणामिक अर्जन, वाद में विनिश्चय किये जाने के अध्यधीन होगा ।

8.5 जैसाकि पहले ही विचार किया गया है यह निर्विवादित तथ्य है कि संपूर्ण संपत्ति अविभाजित है और मूल स्वामियों के बीच अभी

तक इसका विभाजन नहीं हुआ है और इन परिस्थितियों में इस न्यायालय की सुविचारित राय में, जैसाकि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा मत व्यक्त किया गया है, यदि संपूर्ण संपत्ति पर यथास्थिति कायम रखने का आदेश नहीं किया जाता है, तब मूल वादियों को अपरिहार्य हानि हो सकती है । इसके अतिरिक्त यह तथ्य भी सामने आया है कि वाद के परिणाम से व्यथित पक्षकार विधि के अधीन उपलब्ध उपचार का अवलंब भलीभांति ले सकता है, अत: वर्तमान अपील पर विचार किए जाने हेतु कोई सार नहीं है ।

8.6 जहां तक तारीख 17 फरवरी, 2012 के विक्रय-करार का संबंध है, जिसकी ओर अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा ध्यान दिलाया गया है, अभिलेख के परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि विचारण न्यायालय के समक्ष अपीलार्थियों द्वारा ऐसा कोई प्रतिवाद नहीं किया गया है और यह कि इसके संबंध में आक्षेपित आदेश में तनिक भी इसका उल्लेख नहीं है । **थॉमसन प्रैस (इंडिया) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अवलंब अपीलार्थियों के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा लिया गया है जिसका परिशीलन न्यायालय द्वारा किया गया है और इस निर्णय का शीर्ष टिप्पण 'ख' और 'घ' निम्न प्रकार है :–

> "ख. विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 – धारा 19(ख) – विक्रय-करार/वाद लंबित रहने के दौरान विक्रय हेतु संविदा के पूर्व करार का विनिर्दिष्ट अनुपालन – विक्रय हेतु पूर्व-संविदा के अधीन क्रेता को कब उपलब्ध हो सकता है – स्पष्ट किया गया – अभिनिर्धारित – स्थावर संपत्ति का विक्रय हेतु पूर्व-संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन से प्रतिरक्षित है यदि अंतरिती ने सद्भावपूर्वक और विक्रय के लिए की गई संविदा के पूर्व बिना किसी सूचना के मूल्यवान प्रतिफल के बदले स्वत्व अर्जित कर लिया है – वर्तमान मामले में अपीलार्थी-अंतरिती ने वाद के लंबन के दौरान यह अभिनिर्धारित किया है कि वह प्रत्यर्थी-1/वादी अर्थात क्रेता की तरफ से विक्रय के लिए संविदा के पूर्ववर्ती विनिर्दिष्ट अनुपालन के विरुद्ध संरक्षित नहीं है, चूंकि अपीलार्थी के पक्ष में मूल्यवान

प्रतिफल के बदले अंतरण सद्भावपूर्ण नहीं था और न ही यह विक्रय के लिए उक्त पूर्व संविदा के नोटिस के बिना था – संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 – धारा 40, पैरा 2 और 3, धारा 3 और 54, न्यास अधिनियम, 1882, धारा 91 ।"

घ. विचाराधीन वाद का सिद्धांत – विचाराधीन वाद के दौरान अंतरण – विधिमान्यता – धारा 52 का प्रभाव – विचाराधीन वाद का सिद्धांत इस पर आधारित है कि न्याय के प्रशासन के लिए यह आवश्यक है कि किसी वाद में किसी न्यायालय को विनिश्चय न केवल मुक़दमेबाजी में संलिप्त पक्षों पर बाध्यकारी होना चाहिए बल्कि उन सभी पर बाध्यकारी होना चाहिए जो वाद के लंबन के दौरान स्वत्व प्राप्त करते हैं – तथापि, धारा 52 वाद के लंबन के दौरान निष्पादित किये गए किसी हस्तांतरण या अंतरण को शून्य नहीं करता है या उसको व्यर्थ नहीं बनाता है बल्कि उसको मुक़दमेबाजी के पक्षकारों के अधिकारों के लिए सहायक बना देता है जैसाकि न्यायालय द्वारा परिस्थितियों के आधार पर निर्धारित किया जाए – अतः, किसी पश्चात्वर्ती क्रेता के पक्ष में किया गया अंतरण न्यायालय द्वारा पारित शर्तों और प्रतिषेध आदेशों, यदि कोई हों, के अध्यधीन होता है ।

8.7 वर्तमान मामले में वाद लंबित रहने के दौरान अपीलार्थियों के पक्ष में संपत्ति का अंतरण किया गया है । इसके अतिरिक्त यह मूल स्वामियों की अविभाजित संपत्ति है और अभी तक इसका विभाजन नहीं किया गया है और इन परिस्थितियों में विद्वान् विचारण न्यायालय ने ठीक ही मत व्यक्त किया है । इसके अतिरिक्त पूर्व में विक्रय-करार निष्पादित किए जाने से संबंधित कोई भी अभिवाक् वादियों के पक्ष में किए गए अभिवाक् संबद्ध निचले न्यायालय के समक्ष किया गया प्रतीत नहीं होता है और न ही आक्षेपित आदेश से ऐसा कुछ प्रतिबिम्बित होता है । इसके अतिरिक्त जैसाकि पूर्वोक्त निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है । विचाराधीन वाद का सिद्धांत इस पर आधारित है कि न्याय प्रशासन के लिए यह आवश्यक है

कि किसी वाद में न्यायालय का विनिश्चय मुकदमे के पक्षकारों पर ही बाध्यकारी नहीं होगा अपितु उन पर भी लागू होगा जो विलंब करते हैं । तथापि, धारा 52 वाद के दौरान निष्पादित किसी दस्तावेज़ को शून्य या व्यर्थ नहीं करती है बल्कि उसे किसी मुक़दमे के पक्षकारों के अधिकारों के अधीन लाती है जैसा कि न्यायालय द्वारा परिणामस्वरूप निर्धारित किया जाए । अतः, पश्चात्वर्ती क्रेता के पक्ष में किया गया अंतरण शर्तों और न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिषेध आदेशों, यदि कोई पारित किया गया हो, के अध्यधीन होता है । इसलिए हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करते हुए पूर्वोक्त विनिश्चय अपीलों के लिए किसी भी प्रयोजन का नहीं है ।

9. उपरोक्त चर्चा और संप्रेक्षणों को दृष्टिगत करते हुए वर्तमान अपील निष्फल होती है और तद्नुसार खारिज की जाती है । ग्रहण किए जाने संबंधित नोटिस बिना लागत के आदेश के उन्मोचित किया जाता है ।

9.1 तथापि, यह वाद वर्ष 2014 से चल रहा है, इसलिए यह प्रत्याशा की जाती है कि संबंधित विचारण न्यायालय इस वाद का यथाशीघ्र निपटारा करने का प्रयास करेगा और वाद के पक्षकार विचारण में सहयोग करेंगे और अनावश्यक स्थगन की मांग नहीं करेंगे ।

9.2 यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि विचारण न्यायालय वाद में निपटारे की कार्यवाही गुणागुण के आधार पर विधि के अनुसरण में करेगा ।

9.3 मुख्य अपील को दृष्टिगत करते हुए इसके साथ फाइल किया गया सिविल आवेदन भी खारिज किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

ज्योत्सना पवार और अन्य

बनाम

दौलत राम पवार और अन्य

(2021 की लेटर्स पेटेन्ट अपील सं. 155, 2021 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15094 और 2021 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15097)

तारीख 3 मई, 2021

मुख्य न्यायमूर्ति डी. एन. पटेल और न्यायमूर्ति जसमीत सिंह

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) – धारा 17 और 19 [सपठित माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 की धारा 23] – अपीलार्थी पुत्रवधू द्वारा साझी गृहस्थी में निवास करने के अधिकार का दावा किया जाना – पुत्र और पुत्रवधू द्वारा बेदखली के आदेश को चुनौती दिया जाना – सास-श्वसुर (प्रत्यर्थी) द्वारा फाइल किया गया बेदखली का वाद मंजूर किया जाना – अपीलार्थियों को वाद परिसर खाली करने का दो बार समय दिया जाना – अपीलार्थियों ने परिसर खाली करने की अवधि 6-6 मास दो बार बढ़ाए जाने का लाभ उठाया और उनके द्वारा घरेलू हिंसा की शिकायत मात्र दिखावा है जो प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किए गए बेदखली के मामले में पारित आदेश को निष्फल बनाने के लिए फाइल की गई प्रतीत होती है, अत: निचले न्यायालय के बेदखली के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील 2021 की सिविल रिट याचिका सं. 4669 (दौलत राम पवार बनाम राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार और अन्य) में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2021 को पारित निर्णय और आदेश को अपास्त कराने के लिए लेटर्स पेटेन्ट के खंड 10 के अधीन फाइल की गई है । प्रत्यर्थी सं. 1 ने माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष बी-7, प्रथम तल, एक्सटेंशन 75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "परिसर" कहा गया है) के खाली कराने की ईप्सा करते हुए रिट याचिका

फाइल की है । इस रिट याचिका के फाइल किए जाने के पूर्व लंबी मुकदमेबाजी चली है । प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने पुत्र (वर्तमान अपील में प्रत्यर्थी सं. 6 के विरुद्ध) माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 के अधीन बेदखली की अर्जी फाइल की थी । विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट, (दक्षिण) ने अपने तारीख 18 दिसंबर, 2017 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 का आवेदन खारिज कर दिया । विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट, (दक्षिण) के तारीख 18 दिसंबर, 2017 के इस आदेश के विरुद्ध प्रत्यर्थी सं. 1 ने 2018 की अपील सं. 17 फाइल की जिसका निपटारा उपखंड कमिश्नर, सचिव सह-उपखंड कमिश्नर, राजस्व विभाग के अपील न्यायालय द्वारा तारीख 23 मार्च, 2018 को किया गया । विद्वान् अपील न्यायालय ने अपील मंजूर की और प्रत्यर्थी सं. 6 को इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से 15 दिन की अवधि के भीतर परिसर खाली करने का निदेश दिया । विद्वान् उपखंड आयुक्त के आदेश को सुनील पवार बनाम विद्वान् अपील प्राधिकरण उपखंड आयुक्त और अन्य नाम से रिट याचिका संख्या 3413/2018 फाइल करते हुए प्रत्याशी द्वारा चुनौती दी गई जिसका निपटारा तारीख 10 मई, 2018 को इस न्यायालय की माननीय एकल न्यायपीठ द्वारा किया गया । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी सं. 6 को 6 माह का समय दिया ताकि वह संपत्ति सं. बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 के प्रथम तल का रिक्त और शांतिपूर्ण कब्जा तारीख 8 अक्तूबर, 2018 को या उसके पूर्व सौंप सके । प्रत्यर्थी संख्या 6 से यह अपेक्षा की गई कि वह रिट न्यायालय के समक्ष शपथपत्र/वचनबंध फाइल करे । यह कि इस रिट याचिका में इस माननीय न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 4 को तारीख 9 अप्रैल, 2018 के आदेश द्वारा नोटिस जारी किया जिसमें याची और उसके परिवार को प्रश्नगत संपत्ति अर्थात् बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 का प्रथम तल को खाली करने से संबंधित समय बढ़ाने को कहा गया । याची/ शपथकर्ता का यह कथन 9 अप्रैल, 2018 के पूर्वोक्त आदेश द्वारा अभिलेख पर लिया गया कि उसके लिए प्रश्नगत संपत्ति को खाली करने हेतु 6 मास का समय आवश्यक होगा । तद्नुसार, याची ने इस न्यायालय के समक्ष यह वचनबंध किया है कि याची और उसका परिवार उक्त संपत्ति अर्थात् बी-7 एक्सटेंशन-75,

सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 के प्रथम तल का शान्ति पूर्ण कब्जा, तारीख 8 अगस्त, 2018 या उसके पूर्व अर्थात् 6 मास की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी सं. 4 को सौंप देगा । याची शपथकर्ता अपने शपथपत्र में दिए वचन पर कायम रहने के लिए सहमत है और इस बात की पुष्टि भी करता है कि याची/शपथकर्ता अपने वचनबंध के अननुपालन/भंग के विधिक परिणाम से अवगत भी है । प्रत्यर्थी सं. 6 में वचनबंध करने और 6 माह की अवधि पूरी कर लेने के बाद भी माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2538, 6/2018 (सुनील कुमार पवार बनाम राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार और एक अन्य) फाइल की जिसमें इस माननीय न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 10 मई, 2018 को पारित निर्णय को चुनौती दी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने विशेष इजाजत याचिका खारिज कर दी किंतु 10 मई, 2018 के आदेश को उपान्तरित करते हुए प्रत्यर्थी सं. 6 को 30 मई, 2019 तक का समय इस शर्त के अधीन दिया कि वह नया वचनबंध निष्पादित करेगा । प्रत्यर्थी सं. 6 ने माननीय उच्चतम न्यायालय के तारीख 8 अक्तूबर, 2018 के आदेश के निबंधनों में एक अन्य वचनबंध उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया कि इस मामले में का याची अन्य किसी व्यक्ति को वाद संपत्ति में प्रतिष्ठापित नहीं करेगा और तारीख 30 अप्रैल, 2019 को या उसके पूर्व उक्त परिसर का रिक्त और शांतिपूर्ण कब्जा प्रतियों को सौंपेगा । इसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 6 ने वाद परिसर खाली करने की समय सीमा बढ़ाने के लिए एक अन्य आवेदन फाइल किया जो तारीख 8 मई, 2019 को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया । यह कि अपीलार्थी सं. 2 और 3 ने इस न्यायालय के समक्ष मूल वाद संख्या 350/2020 (नंदिता पवार और एक अन्य बनाम दौलत राम पवार और अन्य) फाइल किया जिसमें बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 वाली संपूर्ण संपत्ति, अर्थात् भूतल से लेकर टॉप फ्लोर तक, का विभाजन किए जाने की ईप्सा की गई । अपीलार्थी सं. 2 और 3 ने संहिता के आदेश 39, नियम 1 और 2 के अधीन एक आवेदन सं. 1-ए 10623/20 फाइल किया जिसमें इस संबंध में अंतरिम एक पक्षीय व्यादेश जारी किए जाने की यह ईप्सा की गई कि वाद संपत्ति का वह भाग जिसमें अपीलार्थी सं. 2 और

3 रहते थे, खाली करने के लिए अपीलार्थी सं. 2 और 3 को विवश करने से प्रत्यर्थी सं. 1 को रोका जाए । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उक्त अंतरिम आवेदन की सुनवाई करते हुए तारीख 17 नवंबर, 2020 के आदेश द्वारा प्रथमदृष्ट्या यह मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी सं. 2 और 3 प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा पक्षकार बनाए गए हैं ताकि इस न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को निष्फल किया जा सके । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह भी मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी सं. 2 और 3, प्रत्यर्थी सं. 6 अर्थात् सुनील पवार जो कि उनका पिता है, के लिए काम करते हैं । प्रथमदृष्ट्या मत व्यक्त करने के पश्चात् विद्वान् एकल न्यायाधीश ने वाद परिसर खाली करने से संबंधित अपीलार्थी सं. 2 और 3 द्वारा ईप्सा किए गए अनुतोष को खारिज कर दिया । स्वीकृततः, इस आदेश के विरुद्ध कोई भी अपील फाइल नहीं की गई है । मुकदमे की संपूर्ण पृष्ठभूमि का परिशीलन करने के पश्चात्, विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 9 अप्रैल, 2021 के आक्षेपित आदेश में यह निदेश दिया कि अपीलार्थी सं. 1, 2 और 3 को तारीख 25 अप्रैल, 2021 को या उसके पूर्व वाद परिसर खाली करना है । प्रत्यर्थी सं. 6 को यह निदेश दिया जाता है कि वह अपीलार्थी सं. 1, 2 और 3 को 15,000/- रुपए प्रतिमाह का संदाय करेगा ताकि वे विकल्प के रूप में कोई अन्य परिसर ले सकें । अपीलार्थियों द्वारा वर्तमान अपील फाइल की गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – ऊपर कथित तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बेदखली की कार्यवाही वर्ष 2017 से चल रही है और अपीलार्थियों ने परिसर खाली करने की अवधि 6-6 मास 2 बार बढ़ाए जाने का लाभ उठाया है जिसमें एक बार यह अवधि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा और दूसरी बार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा बढ़ाई गई थी । हमारा यह मत है कि महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन शिकायत मात्र एक दिखावा है और यह केवल माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन पारित बेदखली के आदेश को निष्फल बनाने के लिए फाइल की गई है । न्यायालय का यह मत है की घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन अपीलार्थियों द्वारा तारीख 23 दिसंबर, 2020 को अर्थात् सभी संभव प्रयास करने के पश्चात्

फाइल की गई कार्यवाही स्पष्ट रूप से एक दिखावा है ताकि माननीय न्यायालय तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को निष्प्रभावी बनाया जा सके । अपीलार्थी वाद परिसर में प्रत्यर्थी सं. 6 के साथ निवास कर रहे थे और वे माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन लंबित कार्यवाही से अवगत थे और परिसर खाली करने के लिए 6-6 महीने की दो बार छूट दिए जाने का लाभ उठाने के पश्चात् उन्हें अब घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन निवास करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता और इस अधिनियम के अधीन फाइल की गई शिकायत मात्र एक दिखावा है । (पैरा 7, 11 और 12)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की लेटर्स पेटेन्ट अपील सं. 155, 2021 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15094 और 2021 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15097.

2021 की रिट याचिका सं. 4469 में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2021 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री माधव गुप्ता

प्रत्यर्थी की ओर से श्री रीतेश कुमार और श्री समीर वशिष्ठ की ओर से सुश्री उरवी कपूर

आदेश

इस मामले में विडियो कॉन्फ्रेंसिंग द्वारा सुनवाई की गई है ।

2021 की सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15095 और 15096 छूट लेने के लिए फाइल की गई हैं ।

केवल छूट दिए जाने के अध्यधीन इन आवेदनों को मंजूर किया जाता है ।

अपीलों का निपटारा किया जाता है । 2021 की लेटर्स पेटेन्ट अपील सं. 155 और 2021 का सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 15094 और 15097 विस्तृत सेनोप्सिस और तारीखों की सूची फाइल करने की अनुज्ञा के लिए ईप्सा की गई है ।

वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील 2021 की सिविल रिट याचिका सं.

4669 (दौलत राम पवार बनाम राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार और अन्य) में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2021 को पारित निर्णय और आदेश को अपास्त कराने के लिए लेटर्स पेटेन्ट के खंड 10 के अधीन फाइल की गई है ।

मामले के संक्षिप्त तथ्य, जिनके आधार पर वर्तमान अपील फाइल की गई है, निम्न प्रकार है :–

(क) प्रत्यर्थी सं. 1 ने माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष बी-7, प्रथम तल, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "परिसर" कहा गया है) के खाली कराने की ईप्सा करते हुए रिट याचिका फाइल की है । इस रिट याचिका के फाइल किए जाने के पूर्व लंबी मुकदमेबाजी चली है ।

(ख) प्रत्यर्थी सं. 1 ने अपने पुत्र (वर्तमान अपील में प्रत्यर्थी सं. 6 के विरुद्ध) माता-पिता और वरिष्ठ नागरिकों का भरणपोषण तथा कल्याण अधिनियम, 2007 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007" कहा गया है) के अधीन बेदखली की अर्जी फाइल की थी । विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट, (दक्षिण) ने अपने तारीख 18 दिसंबर, 2017 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 का आवेदन खारिज कर दिया । विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट, (दक्षिण) के तारीख 18 दिसंबर, 2017 के इस आदेश के विरुद्ध प्रत्यर्थी सं. 1 ने 2018 की अपील सं. 17 फाइल की जिसका निपटारा उपखंड कमिश्नर, सचिव सह-उपखंड कमिश्नर, राजस्व विभाग के अपील न्यायालय द्वारा तारीख 23 मार्च, 2018 को किया गया । विद्वान् अपील न्यायालय ने अपील मंजूर की और प्रत्यर्थी सं. 6 को इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से 15 दिन की अवधि के भीतर परिसर खाली करने का निदेश दिया ।

(ग) विद्वान् उपखंड आयुक्त के आदेश को (सुनील पवार बनाम विद्वान् अपील प्राधिकरण उपखंड आयुक्त और अन्य) नाम से रिट याचिका संख्या 3413/2018 फाइल करते हुए प्रत्याशी द्वारा चुनौती दी गई जिसका निपटारा तारीख 10 मई, 2018 को

इस न्यायालय की माननीय एकल न्यायपीठ द्वारा किया गया । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने प्रत्यर्थी सं. 6 को 6 माह का समय दिया ताकि वह संपत्ति सं. बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 के प्रथम तल का रिक्त और शांतिपूर्ण कब्जा तारीख 8 अक्तूबर, 2018 को या उसके पूर्व सौंप सके ।

(घ) प्रत्यर्थी संख्या 6 से यह अपेक्षा की गई कि वह रिट न्यायालय के समक्ष शपथपत्र/वचनबंध फाइल करे जिसके सुसंगत पैरा निम्न प्रकार हैं –

> 2. यह कि इस रिट याचिका में इस माननीय न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 4 को तारीख 9 अप्रैल, 2018 के आदेश द्वारा नोटिस जारी किया जिसमें याची और उसके परिवार को प्रश्नगत संपत्ति अर्थात् बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 का प्रथम तल को खाली करने से संबंधित समय बढ़ाने को कहा गया ।
>
> 3. याची/शपथकर्ता का यह कथन 9 अप्रैल, 2018 के पूर्वोक्त आदेश द्वारा अभिलेख पर लिया गया कि उसके लिए प्रश्नगत संपत्ति को खाली करने हेतु 6 मास का समय आवश्यक होगा ।
>
> 4. तद्नुसार, याची ने इस न्यायालय के समक्ष यह वचन दिया है कि याची और उसका परिवार उक्त संपत्ति अर्थात् बी-7 एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 के प्रथम तल का शान्ति पूर्ण कब्जा, तारीख 8 अगस्त, 2018 या उसके पूर्व अर्थात् 6 मास की अवधि के भीतर प्रत्यर्थी सं. 4 को सौंप देगा ।
>
> 5. याची/शपथकर्ता अपने शपथपत्र में दिए वचन पर कायम रहने के लिए सहमत हैं और इस बात की पुष्टि भी करता है कि याची/शपथकर्ता अपने वचनबंध के अननुपालन/भंग के विधिक परिणाम से अवगत भी है ।

(ङ) प्रत्यर्थी सं. 6 में वचनबंध करने और 6 माह की अवधि

पूरी कर लेने के बाद भी माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका (सिविल) सं. 2538, 6/2018 (सुनील कुमार पवार बनाम राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार और एक अन्य) फाइल की जिसमें इस माननीय न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 10 मई, 2018 को पारित निर्णय को चुनौती दी ।

(च) माननीय उच्चतम न्यायालय ने विशेष इजाजत याचिका खारिज कर दी किंतु 10 मई, 2018 के आदेश को उपान्तरित करते हुए प्रत्यर्थी सं. 6 को 30 मई, 2019 तक का समय इस शर्त के अधीन दिया कि वह नया वचनबंध निष्पादित करेगा । प्रत्यर्थी सं. 6 ने माननीय उच्चतम न्यायालय के तारीख 8 अक्तूबर, 2018 के आदेश के निबंधनों में एक अन्य वचनबंध उच्चतम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जिसका पैरा 2 सुसंगत है और निम्न प्रकार उद्धृत किया जा रहा है –

> "2. यह कि इस मामले में का याची अन्य किसी व्यक्ति को वाद संपत्ति में प्रतिष्ठापित नहीं करेगा और तारीख 30 अप्रैल, 2019 को या उसके पूर्व उक्त परिसर का रिक्त और शांतिपूर्ण कब्जा प्रतियों को सौंपेगा ।"

(छ) इसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 6 ने वाद परिसर खाली करने की समय सीमा बढ़ाने के लिए एक अन्य आवेदन फाइल किया जो तारीख 8 मई, 2019 को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया ।

(ज) यह कि अपीलार्थी सं. 2 और 3 ने इस न्यायालय के समक्ष मूल वाद संख्या 350/2020 (नंदिता पवार और एक अन्य बनाम दौलत राम पवार और अन्य) फाइल किया जिसमें बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 वाली संपूर्ण संपत्ति, अर्थात् भूतल से लेकर टॉप फ्लोर तक, का विभाजन किए जाने की ईप्सा की गई । अपीलार्थी सं. 2 और 3 ने संहिता के आदेश 39, नियम 1 और 2 के अधीन एक आवेदन सं. 1-ए 10623/20 फाइल किया जिसमें इस संबंध में अंतरिम एक पक्षीय

व्यादेश जारी किए जाने की यह ईप्सा की गई कि वाद संपत्ति का वह भाग जिसमें अपीलार्थी सं. 2 और 3 रहते थे, खाली करने के लिए अपीलार्थी सं. 2 और 3 को विवश करने से प्रत्यर्थी सं. 1 को रोका जाए ।

(झ) विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उक्त अंतरिम आवेदन की सुनवाई करते हुए तारीख 17 नवंबर, 2020 के आदेश द्वारा प्रथमदृष्ट्या यह मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी सं. 2 और 3 प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा पक्षकार बनाए गए हैं ताकि इस न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को निष्फल किया जा सके ।

(ञ) विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह भी मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी सं. 2 और 3, प्रत्यर्थी सं. 6 अर्थात् सुनील पवार जो कि उनका पिता है, के लिए काम करते हैं । प्रथमदृष्ट्या मत व्यक्त करने के पश्चात् विद्वान् एकल न्यायाधीश ने वाद परिसर खाली करने से संबंधित अपीलार्थी सं. 2 और 3 द्वारा ईप्सा किए गए अनुतोष को खारिज कर दिया ।

स्वीकृततः, इस आदेश के विरुद्ध कोई भी अपील फाइल नहीं की गई है ।

2. मुकदमे की संपूर्ण पृष्ठभूमि का परिशीलन करने के पश्चात्, विद्वान् एकल न्यायाधीश ने तारीख 9 अप्रैल 2021 के आक्षेपित आदेश में यह निदेश दिया :–

अपीलार्थी सं. 1, 2 और 3 को तारीख 25 अप्रैल, 2021 को या उसके पूर्व वाद परिसर खाली करना है । प्रत्यर्थी सं. 6 को यह निदेश दिया जाता है कि वह अपीलार्थी सं. 1, 2 और 3 को 15,000/- रुपए प्रतिमाह का संदाय करेगा ताकि वे विकल्प के रूप में कोई अन्य परिसर ले सकें ।

3. अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील में निम्न मुद्दे उठाए गए हैं :–

(i) यह कि विद्वान् एक न्यायाधीश इस पर विचार नहीं कर सके कि अपीलार्थी, माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा संस्थित कार्यवाही में कभी भी पक्षकार नहीं थे और उन्हें सुनवाई का कोई भी अवसर नहीं दिया गया है । अपीलार्थियों ने यह भी दलील दी है कि बेदखली के सभी आदेश उनकी अनुपस्थिति में अर्थात् सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित किए गए हैं और प्रत्यर्थी सं. 6 ने ही प्रत्यर्थी सं. 1 के साथ मिलीभगत की है ताकि अपीलार्थियों को उक्त परिसर अर्थात् बी-7 से बेदखल किया जा सके ।

(ii) अपीलार्थियों को, महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "महिला संरक्षण अधिनियम, 2005" कहा गया है) के अधीन वाद परिसर में वास करने का कानूनी अधिकार प्राप्त है । निवास का अधिकार इस अधिनियम की धारा 17 और 19 के साथ पठित धारा 2(एस) के अधीन उपबंधित है क्योंकि अपीलार्थी सं. 6 के साथ घरेलू साझेदारी के अंतर्गत रह रहे थे ।

(iii) अपीलार्थियों ने यह भी कथन किया है कि इस माननीय न्यायालय के समक्ष सिविल रिट याचिका संख्या 3413/2018 और माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका सं. 25386/2018 प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा फाइल किए गए सभी वचनबंध व्यक्तिगत हैसियत से फाइल किए गए हैं जो कि अपीलार्थियों के लिए या अपीलार्थियों की ओर से फाइल नहीं किए गए हैं और इसलिए अपीलार्थी इन वचनबंधों के लिए आबद्ध नहीं हैं ।

(iv) अपीलार्थियों ने यह भी कथन किया है कि उन्हें महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन अधिकार प्राप्त है और उन अधिकारों को प्रत्यर्थी सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा मिलीभगत से फाइल की गई कार्यवाहियों के कारण अनदेखा नहीं किया जा सकता ।

(v) अंत में अपीलार्थी ने माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा तारीख 15 दिसंबर, 2020 को विनिश्चित एस. वनीता **बनाम**

उपायुक्त [(2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 1023 = ए. आई. आर. 2021 एस. सी. 177] और **सतीश चंद्र आहूजा** [(2021) 1 एस. सी. सी. 414 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 5397] वाले मामलों में अधिकथित विधि का अवलंब यह दलील देते हुए लिया है कि महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन घरेलू साझेदारी में रहने के कानूनी अधिकार से वरिष्ठ नागरिक अधिनियम के अधीन संक्षिप्त आदेश द्वारा वंचित नहीं किया जा सकता और यह भी दलील दी है कि घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन घरेलू साझेदारी में रहने के कानूनी अधिकार और वरिष्ठ नागरिक अधिनियम के अधीन प्राप्त अधिकार के बीच संतुलन बना होना चाहिए ।

4. हमने अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा प्रस्तुत की गई पेपर बुक और उद्धृत किए गए निर्णयों का परिशीलन किया है । प्रत्यर्थी सं. 1 ने वर्ष 2017 में प्रत्यर्थी की बेदखली के लिए आवेदन फाइल किया था । उक्त आवेदन विद्वान् जिला मजिस्ट्रेट (दक्षिण) द्वारा तारीख 18 दिसंबर, 2017 को खारिज किया गया था । खारिजी के इस आदेश के विरुद्ध खंड आयुक्त के समक्ष अपील की गई और खंड आयुक्त ने तारीख 23 मार्च, 2018 को प्रत्यर्थी सं. 6 को वाद संपत्ति अर्थात् बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 को 15 दिनों के भीतर खाली करने का निर्देश दिया । तारीख 23 मार्च, 2018 के आदेश को प्रत्यर्थी सं 6 द्वारा फाइल की गई सिविल रिट याचिका सं. 3413/ 2018 में चुनौती दी गई और इस न्यायालय के माननीय न्यायाधीश ने तारीख 10 मई, 2018 के आदेश द्वारा बाद संपत्ति को तारीख 8 अक्तूबर, 2018 तक खाली करने का समय प्रदान किया । तारीख 8 अक्तूबर, 2018 तक दिए गए समय को पुनः विशेष इजाजत याचिका (सिविल) संख्या 2538, 6/2018 में माननीय उच्चतम न्यायालय के तारीख 8 अक्तूबर, 2018 के आदेश के अनुसार तारीख 30 अप्रैल, 2019 तक के लिए बढ़ाया गया ।

5. यह उल्लेख और विचार करना महत्वपूर्ण होगा कि वर्ष 2017 से तारीख 30 अप्रैल, 2019 तक अपीलार्थी सं. 1 और प्रत्यर्थी सं. 6 के

बीच घरेलू हिंसा की कोई घटना सामने नहीं आई है और महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन अपीलार्थी सं. 1 द्वारा कोई भी शिकायत फाइल नहीं की गई है । वास्तव में, प्रत्यर्थी सं. 6 द्वारा फाइल किए गए वचनबंधों में उसने स्पष्ट रूप से यह कथन किया है कि वह अपने परिवार सहित परिसर खाली करेगा ।

6. तारीख 29 अक्तूबर, 2020 को अपीलार्थी सं. 2 और 3 ने विभाजन का वाद फाइल किया जिसमें संपत्ति, बी-7, एक्सटेंशन-75, सफदरजंग एन्क्लेव, नई दिल्ली-110029 के प्रथम तल में हिस्सा पाने की ईप्सा की । उक्त वाद अपीलार्थी सं. 3 के लिए और उसकी ओर से अपीलार्थी सं. 1 द्वारा हस्ताक्षरित किया गया जो कि इस पेपर बुक में उपाबंध पी-9 के रूप में आदेश 39, नियम 1 और 2 के अधीन फाइल किए गए आवेदन से भी स्पष्ट है । इस आवेदन में भी अपीलार्थी सं. 1 और/या प्रत्यर्थी सं. 1 या प्रत्यर्थी सं. 6 के बीच घरेलू हिंसा का कोई उल्लेख नहीं है । सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज जिसके आधार पर अपीलार्थी अपने अधिकार का दावा कर रहे हैं, वह महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन फाइल की गई शिकायत है । स्वीकृतत:, उक्त शिकायत पेपर बुक के साथ फाइल नहीं की गई है । तारीख और घटनाओं की सूची के अनुसार उक्त कार्यवाही प्रत्यर्थी सं. 1 के विरुद्ध तारीख 23 दिसंबर, 2020 को ही आरंभ की गई है ।

7. ऊपर कथित तथ्यों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बेदखली की कार्यवाही वर्ष 2017 से चल रही है और अपीलार्थियों ने परिसर खाली करने की अवधि 6-6 मास 2 बार बढ़ाए जाने का लाभ उठाया है जिसमें एक बार यह अवधि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा और दूसरी बार माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा बढ़ाई गई थी । हमारा यह मत है कि महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 के अधीन शिकायत मात्र एक दिखावा है और यह केवल माता-पिता और वरिष्ठ नागरिक भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन पारित बेदखली के आदेश को निष्फल बनाने के लिए फाइल की गई है ।

8. हमने एस. वनीता वाले मामले में पारित किए गए माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर विचार किया है । इस मामले के तथ्य

वर्तमान मामले के तथ्यों से पूर्णतया भिन्न हैं । एस. वनीता वाले मामले में संपत्ति आरंभ में पति की थी और विवाह के तत्काल पश्चात् पति-पत्नी के बीच वैवाहिक विवाद आरंभ हो गया । पति ने भूमि अपने पिता को बेच दी और उसके पश्चात् पिता ने वह भूमि, मकान सहित अपनी पत्नी को दान कर दी और इसके पश्चात् उसकी पत्नी ने पुत्रवधू के विरुद्ध माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन अर्जी फाइल की । माननीय उच्चतम न्यायालय ने एस. वनीता वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया कि वैवाहिक विवाद को अनदेखा करते हुए हक का अंतरण नहीं किया जा सकता । चूंकि प्रश्नगत संपत्ति का हक वैवाहिक विवाद के लंबित रहते सद्भावपूर्ण नहीं था इसलिए माननीय उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि ऐसी स्थिति में संपत्ति का अंतरण नहीं किया जा सकता जहां बेदखली के आदेश से पुत्रवधू घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन दावा करने से वंचित हो जाए । वर्तमान मामले में, प्रश्नगत संपत्ति प्रत्यर्थी सं. 6 की नहीं है, इसलिए इस अधिनियम के अधीन कार्यवाही 23 दिसंबर, 2020 से पहले आरंभ नहीं की जा सकी । इसलिए एस. वनीता निर्णय को लागू नहीं होगा पैरा 9 हमने सतीश चंद्र आहूजा उपरोक्त वाला निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू नहीं होगा ।

9. हमने सतीश चन्द्र आहूजा वाले मामले में दिए गए निर्णय का भी परिशीलन किया है और इस निर्णय का पैरा 90 सुसंगत है जो निम्न प्रकार है :–

> "इसके पूर्व कि हम धारा 2(एस) से संबंधित चर्चा का समापन करें, हमें यह देखना होगा कि धारा 19 के अधीन निवास का अधिकार साझी गृहस्थी में अभेद्य नहीं है विशेषकर ऐसी स्थिति में जब पुत्रवधू वृद्ध सास और ससुर के विरुद्ध खड़ी हो । वरिष्ठ नागरिक सायंकाल के दौरान शांतिपूर्वक वातावरण चाहते हैं ना कि पुत्र और पुत्रवधू के वैवाहिक झगड़ों से दूर रहना चाहते हैं । घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 12 और सिविल कार्यवाही दोनों के अधीन न्यायालय को दोनों पक्षकारों के अधिकारों के बीच संतुलन बनाए रखना चाहिए । निर्णय के पैरा 56 में उच्च

न्यायालय द्वारा जारी निदेशों के अधीन दोनों पक्षकारों के अधिकारों के बीच समुचित संतुलन बनाया गया है ।"

10. उपरोक्त दोनों निर्णयों से यह स्पष्ट हो जाता है कि घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन अधिकार और माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन अधिकारों के बीच अधिकार संतुलित बना होना चाहिए ।

11. हमारा यह मत है की घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन अपीलार्थियों द्वारा तारीख 23 दिसंबर, 2020 को अर्थात् सभी संभव प्रयास करने के पश्चात् फाइल की गई कार्यवाही स्पष्ट रूप से एक दिखावा है ताकि माननीय न्यायालय तथा माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को निष्प्रभावी बनाया जा सके ।

12. अपीलार्थी वाद परिसर में प्रत्यर्थी सं. 6 के साथ निवास कर रहे थे और वे माता-पिता भरणपोषण अधिनियम, 2007 के अधीन लंबित कार्यवाही से अवगत थे और परिसर खाली करने के लिए 6-6 महीने की दो बार छूट दिए जाने का लाभ उठाने के पश्चात् उन्हें अब घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन निवास करने के लिए अनुज्ञात नहीं किया जा सकता और इस अधिनियम के अधीन फाइल की गई शिकायत मात्र एक दिखावा है ।

13. इस प्रकार हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए किसी भी प्रतिवाद में कोई सार नहीं है और यह खारिज किए जाते हैं । परिणामत: हमें दौलत राम पवार बनाम राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली सरकार और अन्य नामक सिविल रिट याचिका सं. 4469/2021 में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा तारीख 9 अप्रैल, 2021 को पारित निर्णय और आदेश में हस्तक्षेप करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है । वर्तमान अपील में कोई सार नहीं है अत: यह लंबित आवेदनों के साथ खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

संतोष कुमार गुप्ता

बनाम

राधा देवी

(2015 की प्रकीर्ण अपील सं. 235)

तारीख 28 सितंबर, 2020

न्यायमूर्ति दिनेश कुमार सिंह

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 9 – दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन – विवाह-विच्छेद वाद खारिज होने पर पति द्वारा पत्नी का अधित्यजन किया जाना – पत्नी के विकृत-चित्त होने का पति द्वारा अभिवाक् किया जाना – चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा विकृत-चित्त होने की पुष्टि न होना – पति का पत्नी के साथ न रहना अयुक्तियुक्त पाया जाना – अपीलार्थी-पति यह साबित करने में असफल रहा है कि पत्नी का मानसिक विकार इस सीमा तक है कि वह उसके साथ नहीं रह सकता तथा अपीलार्थी का बातिलकरण का वाद भी निचले न्यायालय द्वारा खारिज किया गया था जिसे अपीलार्थी ने चुनौती नहीं दी है, अत: निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता और पत्नी दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की हकदार है ।

अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल को सुना । वर्तमान प्रकीर्ण अपील, 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 में विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा तारीख 2 जून, 2015 के उस निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों की प्रत्यास्थापन के लिए प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा फाइल किए गए वैवाहिक वाद में प्रतिवाद पर बिना खर्च के प्रत्यर्थी के पक्ष में डिक्री पारित की गई है । मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि यह है कि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-

पत्नी के बीच विवाह स्वीकृत रूप से हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार तारीख 20 जून, 1997 को हुआ था । प्रत्यर्थी तारीख 21 जून, 1997 को वैवाहिक गृह गई और कुछ दिनों तक वहां रही और उसके पश्चात् वह अपने माता-पिता के घर वापस आ गई । प्रत्यर्थी-पत्नी पुन: अपने वैवाहिक गृह चली गई और वहीं पर रहने लगी और इसके तत्पश्चात् मार्च, 1998 में विवाहित दंपत्ति के यहां पुत्री ने जन्म लिया । तत्पश्चात् उनके रिश्ते में मन-मुटाव होने लगा । अपीलार्थी-पति ने इस आधार पर विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 फाइल किया कि प्रत्यर्थी-पत्नी चित्त-विकृति से ग्रसित थी और इन सभी तथ्यों को छिपाकर विवाह के लिए उसकी सहमति प्राप्त की गई थी जबकि प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 को दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु 2005 का विवाह विषयक मामला सं. 4821 यह दावा करते हुए प्रस्तुत किया कि पुत्री का जन्म होने पर अपीलार्थी-पति का व्यवहार बदल गया था और उसने क्रूरता प्रारंभ कर दी थी । प्रत्यर्थी-पत्नी पर हमला किया गया और तारीख 1 मई, 2014 को उसके हस्ताक्षर कोरे कागज पर धमकी देते हुए लिए गए कि अपीलार्थी-पति दूसरा विवाह कर लेगा । उसके बाद परिवार के सदस्यों और मित्रों के अनुनय पर मामले में मेल-मिलाप कर लिया गया लेकिन उसके बाद भी अपीलार्थी-पति की ओर से यातना की घटनाएं जारी रही थीं । प्रत्यर्थी-पत्नी ने तारीख 8 फरवरी, 2005 को अपीलार्थी-पति को यातना देने और दाम्पत्य जीवन के प्रत्यावर्तन के लिए विधिक नोटिस भेजा । अपीलार्थी-पति के अधिवक्ता द्वारा इसका उत्तर तारीख 17 फरवरी, 2005 को यह दावा करते हुए दिया गया कि प्रत्यर्थी-पत्नी मानसिक रोग से ग्रसित है । उसे वेल्लूर ले जाया गया जहां चिकित्सक ने उसे कम विवेक वाली एक सामान्य महिला के रूप में पाया जिसके परिणामस्वरूप दाम्पत्य अधिकारों की प्रत्यास्थापन के लिए अधिनियम की धारा 9 के अधीन 2005 का विवाह मामला सं. 48 फाइल किया गया । अपीलार्थी-पति द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 फाइल किया गया और दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए

प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अधिनियम की धारा 9 के अधीन 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 फाइल किया गया तथा दोनों मामलों को विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा एक पृथक् निर्णय से विनिश्चित किया गया जिसके अनुसार रांची इंस्टीट्यूट न्यूरोसाइकियाट्री एंड एलाइड साइंसेज, कांके के चिकित्सक द्वारा जारी तारीख 24 दिसंबर, 2005 की चिकित्सा रिपोर्ट सं. 6643 के आधार पर तारीख 2 जनवरी, 2006 को इसलिए खारिज कर दिया गया कि प्रत्यर्थी-पत्नी किसी भी मनोरोग आदि से ग्रसित नहीं थी । कुटुम्ब न्यायालय के उसी प्रधान न्यायाधीश ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 को तारीख 30 अगस्त, 2006 का निर्णय इस वर्तमान निष्कर्ष के साथ खारिज कर दिया कि अपीलार्थी-पति के पास प्रत्यर्थी-पत्नी से पृथक् रहने का पर्याप्त कारण है । अपीलार्थी-पति ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 17 के खारिज किए जाने के आदेश को चुनौती नहीं दी । तथापि, प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2009 की प्रकीर्ण अपील सं. 741 में 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 के खारिज किए जाने को चुनौती दी । इस न्यायालय की एक खण्डपीठ ने उक्त प्रकीर्ण अपील में पारित निर्णय तारीख 11 अप्रैल, 2014 द्वारा विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा पारित निर्णय तारीख 30 अगस्त, 2006 को अपास्त कर दिया जिसमें प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किया गया । 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 खारिज कर दिया गया था और उक्त मामले को अधिकतम दो माह के भीतर नए सिरे से विनिश्चित करने के लिए निचले विद्वान् न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया । विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किए गए मामले को खारिज करने के निष्कर्ष पर पहुंचना और साथ ही प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किए गए मामले को इस आधार पर खारिज करना कि अपीलार्थी-पति के पास प्रत्यर्थी-पत्नी से पृथक् रहने का वैध कारण था, बेतुका पाया गया है । रिमांड पर 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 पुनर्जीवित किया गया जिसमें अपीलार्थी-पति हाजिर हुआ और उसने

तारीख 28 नवंबर, 2005 को लिखित कथन फाइल किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य को छोड़ने के आरोप से इनकार किया और प्रत्यास्थापन वाद बनाए रखने को प्रश्नगत किया जो अपीलार्थी-पति द्वारा प्रत्यर्थी-पत्नी की चित्त-विकृति के आधार पर विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 के वैवाहिक मामला सं. 17 में प्रतिवाद के रूप में फाइल किया था । प्रत्यर्थी-पत्नी के पिता ने अपीलार्थी-पति के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन अभियोग के साथ 2005 का शिकायत मामला सं. 405 फाइल किया । प्रत्यर्थी-पत्नी विवाह के पश्चात् तारीख 21 जून, 1997 से वैवाहिक गृह में रह रही थी और अपीलार्थी-पति का परिवार पुत्री के जन्म से प्रसन्न था । पुत्री सर्वाधिक समय पिता और दादा के साथ रहती थी और इसके आगे दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी । प्रत्यर्थी-पत्नी अलग रहना चाहती थी और अपीलार्थी-पति अपने माता-पिता को छोड़ने के लिए तैयार नहीं था । प्रत्यर्थी-पत्नी को सी. एम. सी., वेल्लूर में विकृत-चित्त पाया गया था क्योंकि जब चिकित्सकों द्वारा उसका परीक्षण किया गया, तो उसे अल्प बुद्धि की महिला पाया गया था और इसलिए यातना देने का एक मिथ्या मामला दर्ज कराया गया था । अत:, यह प्रार्थना की जाती है कि प्रत्यास्थापन के मामले को खर्चे के साथ खारिज किया जाए । प्रत्यर्थी-पत्नी ने छह साक्षियों की परीक्षा कराई जबकि अपीलार्थी-पति ने सात साक्षियों की । दोनों पक्षों की ओर से मामला फाइल कराने से संबंधित दस्तावेजी साक्ष्य के साथ-साथ सी. एम. सी. वेल्लूर और रांची इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूरोसाइकियाट्री एंड एलाइड साइंसेज, कांके की चिकित्सा-उपचार पर्ची प्रदर्शित की । प्रत्यर्थी-पत्नी अभी भी दाम्पत्य जीवन को पुन: प्रारंभ करने के लिए तैयार है । मुख्य विवाद्यक सं. 3 और 4 जो कि क्या अपीलार्थी-पति ने बिना किसी तुक और कारण के प्रत्यर्थी-पत्नी की संगति से स्वयं को प्रत्याहृत कर लिया, यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव हुआ है और क्या प्रत्यर्थी-पत्नी चित्त-विकृति की है । दोनों विवाद्यक का निर्णय प्रत्यर्थी-पत्नी के पक्ष में दिया गया है । उपरोक्त निष्कर्षों से यह प्रतिबिंबित होता है कि अपीलार्थी-पति ने समझते हुए

और जानबूझकर प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य का अभित्यजन किया और अपीलार्थी-पति द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किया गया 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 खारिज किए जाने के बाद भी प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से हट गया और इसे अपील में कभी चुनौती भी नहीं दी गई, जैसाकि ऊपर उत्कथित 2004 के प्रकीर्ण अपील सं. 741 में पारित किया खंडपीठ के आदेश से प्रतिबिंबित होता है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य यह इंगित नहीं होता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी किसी असामान्यता से ग्रसित है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यास्थापन हेतु वाद प्रत्यर्थी-पत्नी के पक्ष में डिक्रीत किया जिसे वर्तमान प्रकीर्ण अपील में चुनौती दी गई है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए, वर्तमान मामले में अपीलार्थी-पति यह साबित करने में असफल रहा है कि प्रत्यर्थी-पत्नी का मानसिक विकार इस प्रकार का है कि और इस हद तक का है कि उससे युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ रहें । इस पर विवाद नहीं है कि 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 अपीलार्थी-पति द्वारा प्रत्यर्थी-पत्नी के चित्त-विकृति के आधार विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किया गया था किंतु वह यह साबित करने में असफल रहा था जिसके परिणामस्वरूप वैवाहिक वाद, प्रतिवाद किए जाने पर खारिज कर दिया गया था । उक्त आदेश की खारिजी को आज तक चुनौती नहीं दी गई है । इसलिए उसी आधार पर अपीलार्थी से आशा की जाती है कि वह दाम्पत्य जीवन को फिर से प्रारंभ करे । अतः, तकनीकी और गुणागुण के आधार पर भी विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय, भागलपुर ने इस मुद्दे को ठीक परिप्रेक्ष्य में विनिश्चित किया है । इस प्रकार, अपीलार्थी-पति से प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य को प्रत्याहृत करने के युक्तियुक्त प्रतिहेतु को साबित करने में पूर्णतया से असफल रहा है । (पैरा 16 और 18)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2015 की प्रकीर्ण अपील सं. 235.

2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 में विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा तारीख 2 जून, 2015 को पारित निर्णय के विरुद्ध प्रकीर्ण अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सुनील कुमार

प्रत्यर्थी की ओर से श्री मृत्युंजय प्रसाद सिंह

न्यायमूर्ति दिनेश कुमार सिंह – अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल को सुना ।

2. वर्तमान प्रकीर्ण अपील, 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 में विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा तारीख 2 जून, 2015 के उस निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् "अधिनियम" निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 9 के अधीन दाम्पत्य अधिकारों की प्रत्यास्थापन के लिए प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा फाइल किए गए वैवाहिक वाद में प्रतिवाद पर बिना खर्च के प्रत्यर्थी के पक्ष में डिक्री पारित की गई है ।

3. मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि यह है कि अपीलार्थी-पति और प्रत्यर्थी-पत्नी के बीच विवाह स्वीकृत रूप से हिंदू रीति-रिवाज के अनुसार तारीख 20 जून, 1997 को हुआ था । प्रत्यर्थी तारीख 21 जून, 1997 को वैवाहिक गृह गई और कुछ दिनों तक वहां रही और उसके पश्चात् वह अपने माता-पिता के घर वापस आ गई । प्रत्यर्थी-पत्नी पुन: अपने वैवाहिक गृह चली गई और वहीं पर रहने लगी और इसके तत्पश्चात् मार्च, 1998 में विवाहित दंपत्ति के यहां पुत्री ने जन्म लिया । तत्पश्चात् उनके रिश्ते में मन-मुटाव होने लगा । अपीलार्थी-पति ने इस आधार पर विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 फाइल किया कि प्रत्यर्थी-पत्नी चित्त-विकृति से ग्रसित थी और इन सभी तथ्यों को छिपाकर विवाह के लिए उसकी सहमति प्राप्त की गई थी जबकि प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 को दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु 2005 का विवाह विषयक मामला सं. 4821 यह दावा करते हुए प्रस्तुत किया कि पुत्री का जन्म होने पर अपीलार्थी-पति का व्यवहार बदल गया था और उसने क्रूरता प्रारंभ कर दी थी । प्रत्यर्थी-पत्नी पर हमला किया गया और तारीख 1 मई, 2014 को उसके हस्ताक्षर कोरे कागज पर धमकी देते हुए लिए गए कि अपीलार्थी-पति दूसरा विवाह कर लेगा । उसके बाद परिवार के सदस्यों और मित्रों के

अनुनय पर मामले में मेल-मिलाप कर लिया गया लेकिन उसके बाद भी अपीलार्थी-पति की ओर से यातना की घटनाएं जारी रही थीं । प्रत्यर्थी-पत्नी ने तारीख 8 फरवरी, 2005 को अपीलार्थी-पति को यातना देने और दाम्पत्य जीवन के प्रत्यावर्तन के लिए विधिक नोटिस भेजा । अपीलार्थी-पति के अधिवक्ता द्वारा इसका उत्तर तारीख 17 फरवरी, 2005 को यह दावा करते हुए दिया गया कि प्रत्यर्थी-पत्नी मानसिक रोग से ग्रसित है । उसे वेल्लूर ले जाया गया जहां चिकित्सक ने उसे कम विवेक वाली एक सामान्य महिला के रूप में पाया जिसके परिणामस्वरूप दाम्पत्य अधिकारों की प्रत्यास्थापन के लिए अधिनियम की धारा 9 के अधीन 2005 का विवाह मामला सं. 48 फाइल किया गया । अपीलार्थी-पति द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 फाइल किया गया और दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा अधिनियम की धारा 9 के अधीन 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 फाइल किया गया तथा दोनों मामलों को विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा एक पृथक् निर्णय से विनिश्चित किया गया जिसके अनुसार रांची इंस्टीट्यूट न्यूरोसाइकियाट्री एंड एलाइड साइंसेज, कांके के चिकित्सक द्वारा जारी तारीख 24 दिसंबर, 2005 की चिकित्सा रिपोर्ट सं. 6643 के आधार पर तारीख 2 जनवरी, 2006 को इसलिए खारिज कर दिया गया कि प्रत्यर्थी-पत्नी किसी भी मनोरोग आदि से ग्रसित नहीं थी । कुटुम्ब न्यायालय के उसी प्रधान न्यायाधीश ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 को तारीख 30 अगस्त, 2006 का निर्णय इस वर्तमान निष्कर्ष के साथ खारिज कर दिया कि अपीलार्थी-पति के पास प्रत्यर्थी-पत्नी से पृथक् रहने का पर्याप्त कारण है । अपीलार्थी-पति ने 2005 के वैवाहिक मामला सं. 17 के खारिज किए जाने के आदेश को चुनौती नहीं दी । तथापि, प्रत्यर्थी-पत्नी ने 2009 की प्रकीर्ण अपील सं. 741 में 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 के खारिज किए जाने को चुनौती दी । इस न्यायालय की एक खण्डपीठ ने उक्त प्रकीर्ण अपील में पारित निर्णय तारीख 11 अप्रैल, 2014 द्वारा विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा पारित निर्णय तारीख 30 अगस्त, 2006 को अपास्त कर दिया जिसमें प्रत्यर्थी-

पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किया गया । 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 खारिज कर दिया गया था और उक्त मामले को अधिकतम दो माह के भीतर नए सिरे से विनिश्चित करने के लिए निचले विद्वान् न्यायालय को प्रतिप्रेषित कर दिया । विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किए गए मामले को खारिज करने के निष्कर्ष पर पहुंचना और साथ ही प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किए गए मामले को इस आधार पर खारिज करना कि अपीलार्थी-पति के पास प्रत्यर्थी-पत्नी से पृथक् रहने का वैध कारण था, बेतुका पाया गया है । इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष इस प्रकार है :–

> "दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के वाद में निकाला गया यह निष्कर्ष कि प्रत्यर्थी के पास अपीलार्थी से पृथक् रहने का वैध कारण है, बेतुका और आदेश के सार से असंगत है । दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन से इनकार संबंधी ससुर द्वारा किया गया आचरण पूर्ण रूप से अप्रासंगिक है । हमारी राय में, यदि विवाह-विच्छेद के लिए वैवाहिक वाद पूर्णतया खारिज कर दिया जाता है, तो यह स्वाभाविक था कि पक्षकारों को पुरुष और पत्नी के रूप में एक साथ रहने की आवश्यकता होती है, जिसके लिए दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु किया गया आवेदन मंजूर किया जाता । विवाह-विच्छेद के लिए दिया गया आवेदन पूर्व में ही तारीख 2 जनवरी, 2006 को खारिज कर दिया गया था । बाद में तारीख 30 अगस्त, 2006 को दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन हेतु किया गया आवेदन खारिज करना, वह भी उसी न्यायालय द्वारा, न्याय किए जाने की कोटि में नहीं आ सकता है ।"

4. रिमांड पर 2005 का वैवाहिक मामला सं. 48 पुनर्जीवित किया गया जिसमें अपीलार्थी-पति हाजिर हुआ और उसने तारीख 28 नवंबर, 2005 को लिखित कथन फाइल किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य को छोड़ने के आरोप से इनकार किया और प्रत्यास्थापन वाद

बनाए रखने को प्रश्नगत किया जो अपीलार्थी-पति द्वारा प्रत्यर्थी-पत्नी की चित्त-विकृति के आधार पर विवाह के बातिलकरण के लिए 2005 के वैवाहिक मामला सं. 17 में प्रतिवाद के रूप में फाइल किया था । प्रत्यर्थी-पत्नी के पिता ने अपीलार्थी-पति के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 498क के अधीन अभियोग के साथ 2005 का शिकायत मामला सं. 405 फाइल किया । प्रत्यर्थी-पत्नी विवाह के पश्चात् तारीख 21 जून, 1997 से वैवाहिक गृह में रह रही थी और अपीलार्थी-पति का परिवार पुत्री के जन्म से प्रसन्न था । पुत्री सर्वाधिक समय पिता और दादा के साथ रहती थी और इसके आगे दहेज की कोई मांग नहीं की गई थी । प्रत्यर्थी-पत्नी अलग रहना चाहती थी और अपीलार्थी-पति अपने माता-पिता को छोड़ने के लिए तैयार नहीं था । प्रत्यर्थी-पत्नी को सी. एम. सी., वेल्लूर में विकृत-चित्त पाया गया था क्योंकि जब चिकित्सकों द्वारा उसका परीक्षण किया गया, तो उसे अल्प बुद्धि की महिला पाया गया था और इसलिए यातना देने का एक मिथ्या मामला दर्ज कराया गया था । अतः, यह प्रार्थना की जाती है कि प्रत्यास्थापन के मामले को खर्चे के साथ खारिज किया जाए ।

5. पक्षकारों के अभिवचन और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर कुटुंब न्यायालय के विद्वान् प्रधान न्यायाधीश ने पांच विवाद्यक विरचित किए हैं जो निम्न प्रकार हैं :–

"(i) क्या विरचित किया गया वाद पोषणीय है ?

(ii) क्या आवेदक राधा देवी के पास वाद के लिए कोई वाद-हेतुक था ?

(iii) क्या प्रत्यर्थी संतोष कुमार गुप्ता ने बिना किसी तुक और कारण के आवेदक राधा देवी की संगति से स्वयं को प्रत्याहृत कर लिया, यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव हुआ है ?

(iv) क्या आवेदक राधा देवी चित्त-विकृति की रोगी है जैसाकि लिखित कथन में अभिकथित किया गया है, यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव है ?

(v) क्या आवेदक राधा देवी किस अनुतोष की हकदार है ?"

6. प्रत्यर्थी-पत्नी ने छह साक्षियों की परीक्षा कराई जबकि अपीलार्थी-पति ने सात साक्षियों की । दोनों पक्षों की ओर से मामला फाइल कराने से संबंधित दस्तावेजी साक्ष्य के साथ-साथ सी. एम. सी., वेल्लूर और रांची इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूरोसाइकियाट्री एंड एलाइड साइंसेज, कांके की चिकित्सा-उपचार पर्ची प्रदर्शित की । प्रत्यर्थी-पत्नी अभी भी दाम्पत्य जीवन को पुन: प्रारंभ करने के लिए तैयार है ।

7. मुख्य विवाद्यक सं. 3 और 4 जो कि क्या अपीलार्थी-पति ने बिना किसी तुक और कारण के प्रत्यर्थी-पत्नी की संगति से स्वयं को प्रत्याहृत कर लिया, यदि ऐसा है तो इसका क्या प्रभाव हुआ है और क्या प्रत्यर्थी-पत्नी चित्त-विकृति की है । दोनों विवाद्यक का निर्णय प्रत्यर्थी-पत्नी के पक्ष में दिया गया है ।

8. आक्षेपित निर्णय के पैरा सं. 30 में दोनों विवाद्यकों के निष्कर्ष को लेखबद्ध किया गया है जिसके सुसंगत भाग को निम्नलिखित रूप से पढ़ा जाता है :–

> "यह सुस्पष्ट है कि विरोधी पक्षकार ने समझते हुए और जानबूझकर याची के साहचर्य का अभित्यजन कर दिया था, तथा उस विवाह विषयक मामला (विवाह-विच्छेद) सं. 17/2005 को पहले ही तत्कालीन विद्वान् प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर द्वारा खारिज कर दिया गया था और उसके पश्चात् क्या हुआ, यह अभी तक स्पष्ट नहीं है, बाद में तत्कालीन विद्वान् निचले न्यायालय ने विवाह विषयक (प्रत्यास्थापन) मामला सं. 48/2005 को भी खारिज कर दिया और माननीय उच्च न्यायालय पटना द्वारा प्रकीर्ण अपील सं. 741/2009 में किए गए प्रेक्षण के अनुसार एक साथ नहीं चल सकती है । उक्त दो स्थितियां अर्थात् न तो सामान्य विधि के अधीन या न तो एक व्यक्ति के सामान्य बोध में और इसलिए इस न्यायालय का यह विनम्र विचार है कि विरोधी पक्षकार अर्थात् संतोष कुमार गुप्ता ने बिना किसी तुक और कारण के स्वयं को आवेदक राधा देवी के साहचर्य से पृथक् कर लिया था

और कहा कि राधा देवी अपनी ससुराल जाने के लिए और उसके साथ सुखी दाम्पत्य जीवन व्यतीत करने के लिए रजामंद और तैयार है । इस न्यायालय का यह विचार है कि आवेदक राधा देवी मानसिक रोगी नहीं है जैसाकि विरोधी पक्षकार द्वारा अभिकथन किया गया था और वह असाध्य और गंभीर प्रकृति की किसी भी मानसिक रोग से ग्रसित नहीं है और याची ने उक्त बिन्दुओं/विवाद्यकों के संबंध में अपना मामला पूर्णतया सिद्ध कर दिया है । इसलिए इन दो महत्वपूर्ण विवाद्यकों अर्थात् विवाद्यक सं. III और IV को याची के पक्ष में सकारात्मक रूप से और विरोधी पक्षकार के विरुद्ध नकारात्मक रूप से विनिश्चित किया जाता है ।"

9. उपरोक्त निष्कर्षों से यह प्रतिबिंबित होता है कि अपीलार्थी-पति ने समझते हुए और जानबूझकर प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य का अभित्यजन किया और अपीलार्थी-पति द्वारा विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किया गया 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 खारिज किए जाने के बाद भी प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से हट गया और इसे अपील में कभी चुनौती भी नहीं दी गई, जैसाकि ऊपर उत्कथित 2004 के प्रकीर्ण अपील सं. 741 में पारित किया खंडपीठ के आदेश से प्रतिबिंबित होता है । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य यह इंगित नहीं होता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी किसी असामान्यता से ग्रसित है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यास्थापन हेतु वाद प्रत्यर्थी-पत्नी के पक्ष में डिक्रीत किया जिसे जो वर्तमान प्रकीर्ण अपील में चुनौती दी गई है ।

10. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का समुचित रूप से विवेचन नहीं किया गया है । सी. एम. सी., वेल्लूर की चिकित्सा रिपोर्ट से यह इंगित होता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी पहले कभी असामान्य थी, अत: प्रत्यास्थापन का वाद ठीक ही खारिज किया गया था ।

11. प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अपीलार्थी-पति ने बिना किसी युक्तियुक्त हेतु के प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से स्वयं

को दूर किया है । सी. एम. सी., वेल्लूर की चिकित्सा-उपचार पर्ची असामान्यता इंगित नहीं करती है । इसके अतिरिक्त इस प्रकार की असामान्यता सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं दिया गया है । अभिलेख में प्रदर्शित रांची इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूरोसाइकियाट्री एंड एलाइड, कांके के प्रमाणपत्र से इंगित होता है कि प्रत्यर्थी-पत्नी आत्यंतिक रूप से सामान्य है । न्यायालय ने प्रत्यर्थी-पत्नी के हाजिर होने पर उसके व्यवहार का मुआयना किया और उसके पश्चात् आक्षेपित आदेश को पारित किया । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से पूर्ण रूप से यह साबित होता है कि बिना किसी युक्तियुक्त कारण के अपीलार्थी-पति ने प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से स्वयं को प्रत्याहृत किया था ।

12. वर्तमान अपील में विनिश्चित किए जाने वाला एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी-पति ने बिना किसी युक्तियुक्त प्रतिहेतु के प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से स्वयं को प्रत्याहृत कर लिया था या यह कि क्या अपीलार्थी ने युक्तियुक्त कारण को साबित करने के भार का निर्वहन किया है या नहीं ।

अधिनियम की धारा 9 इस प्रकार है :–

> "9. **दाम्पत्य अधिकारों का प्रत्यास्थापन** – जबकि पति या पत्नी ने अपने को दूसरे के साहचर्य से किसी युक्तियुक्त प्रतिहेतु के बिना प्रत्याहृत कर लिया हो तब व्यथित पक्षकार दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए जिला न्यायालय में अर्जी द्वारा आवेदन कर सकेगा और न्यायालय ऐसी अर्जी में किए गए कथनों के सत्य के बारे में तथा इस बात के बारे में कि इसके लिए कोई वैध आधार नहीं है कि आवेदन मंजूर क्यों न कर लिया जाए, अपना समाधान हो जाने पर दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन की डिक्री कर सकेगा ।"

13. उपरोक्त उपबंध से यह इंगित होता है कि यदि एक पक्ष ने बिना किसी युक्तियुक्त प्रतिहेतु के दूसरे पक्ष के साहचर्य से स्वयं को प्रत्याहृत कर लिया है, तब या तो पति या पत्नी दाम्पत्य अधिकारों के

प्रत्यास्थापन को बनाए रखने के लिए आवेदन कर सकते हैं और यदि न्यायालय अर्जी में किए गए कथनों की सत्यता से संतुष्ट हैं और उस अर्जी को अस्वीकार करने के लिए कोई भी विधिक आधार नहीं है, तब वह वाद को डिक्रीत कर सकता है । दूसरे के साहचर्य से प्रत्याहृत करने के युक्तियुक्त प्रतिहेतु को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होगा जिसने बिना किसी युक्तियुक्त प्रतिहेतु के स्वयं के दूसरे के साहचर्य से प्रत्याहृत किया है । वर्तमान मामले में अपीलार्थी-पति ने प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य से प्रत्याहृत किया है, इसलिए युक्तियुक्त प्रतिहेतु साबित करने का भार उस पर है ।

14. 'युक्तियुक्त प्रतिहेतु' को हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन परिभाषित नहीं किया गया है और यही तथ्य का प्रश्न है और प्रत्येक मामले में स्वतंत्र रूप से तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर विचार किया जाना चाहिए । अर्जीदार को हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 9 के अधीन अर्जी फाइल करते हुए अपने निम्न पहलुओं को स्थापित करना होगा :–

(i) यह कि प्रत्यर्थी ने अपने/अपनी पति या पत्नी के साहचर्य से प्रत्याहृत कर लिया है, और

(ii) ऐसा प्रत्याहरण बिना किसी युक्तियुक्त प्रतिहेतु के किया गया था ।

अपीलार्थी-पति द्वारा किए गए दावे में एकमात्र आधार यह है कि पत्नी विकृत-चित्त है । अपीलार्थी-पति ने सी. एम. सी., वेल्लूर की जिस उपचार-पर्ची का अवलंब लिया है वह उसे कर पाया है । इसके अतिरिक्त उक्त उपचार-पर्ची से असामान्यता इंगित नहीं होती है ।

15. अधिनियम की धारा 13(1)(iii) के अधीन एक आधार का उपबंध किया गया है कि पति और पत्नी कब विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन का दावा कर सकते हैं, यदि दूसरा पक्ष असाध्य रूप से विकृत-चित्त है अथवा निरंतर या आंतरायिक रूप से इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप से यह

आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे । अधिनियम की धारा 13(1)(iii) इस प्रकार है :–

> "13. **विवाह-विच्छेद** – (1) कोई भी विवाह, वह इस अधिनियम के प्रारंभ के चाहे पूर्व अनुष्ठापित हुआ हो चाहे पश्चात्, पति अथवा पत्नी द्वारा उपस्थापित अर्जी पर विवाह-विच्छेद की डिक्री द्वारा इस आधार पर विघटित किया जा सकेगा कि –
>
> (i) दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् अपने पति या अपनी पत्नी से भिन्न किसी व्यक्ति के साथ स्वेच्छया मैथुन किया है, या
>
> (क) दूसरे पक्षकार ने विवाह के अनुष्ठापन के पश्चात् अपने अर्जिदार के साथ क्रूरता का व्यवहार किया है, या
>
> (ख) दूसरे पक्षकार ने अर्जी के पेश किए जाने के अव्यवहित पूर्व कम से कम दो वर्ष की निरंतर कालावधि पर अर्जीदार को अभिव्यक्त रखा है ; या
>
> (ii) दूसरा पक्षकार अन्य धर्म में संपरिवर्तित हो जाने के कारण हिन्दू नहीं रह गया है ; या
>
> (iii) दूसरा पक्षकार असाध्य रूप से विकृत-चित्त रहा है अथवा निरंतर या आंतरायिक रूप से इस प्रकार के और इस हद तक मानसिक विकार से पीड़ित रहा है कि अर्जीदार से युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वह प्रत्यर्थी के साथ रहे ।"

16. उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत करते हुए, वर्तमान मामले में अपीलार्थी-पति यह साबित करने में असफल रहा है कि प्रत्यर्थी-पत्नी का मानसिक विकार इस प्रकार का है कि और इस हद तक का है कि उससे युक्तियुक्त रूप से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ रहें । इस पर विवाद नहीं है कि 2005 का वैवाहिक मामला सं. 17 अपीलार्थी-पति द्वारा प्रत्यर्थी-पत्नी के चित्त-विकृति के आधार विवाह के बातिलकरण के लिए फाइल किया गया था किंतु वह यह साबित करने में

असफल रहा था जिसके परिणामस्वरूप वैवाहिक वाद, प्रतिवाद किए जाने पर खारिज कर दिया गया था । उक्त आदेश की खारिजी को आज तक चुनौती नहीं दी गई है । इसलिए उसी आधार पर अपीलार्थी से आशा की जाती है कि वह दाम्पत्य जीवन को फिर से प्रारंभ करे ।

17. इसके अतिरिक्त, यह तथ्य खंडपीठ के संज्ञान में था कि जब प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए उसका आवेदन खारिज करने के विरुद्ध फाइल की गई प्रकीर्ण अपील को अनुज्ञात किया था । विवाह के बातिलकरण के लिए वैवाहिक वाद को उसी प्रधान न्यायाधीश द्वारा खारिज किया गया था जिसने इस आधार पर प्रत्यास्थापन वाद खारिज किया था कि अपीलार्थी-पति के पास प्रत्यर्थी-पत्नी से पृथक् रहने का पर्याप्त कारण है जो मामले के गुणागुण से बेतुका और बेमेल पाया गया और मामला वापस भेज दिया गया । यह भी विवादित नहीं है कि अपीलार्थी-पति ने 2009 की प्रकीर्ण अपील सं. 741 में पारित किए गए तारीख 11 अप्रैल, 2014 के आदेश को चुनौती नहीं दी है जिसके द्वारा 2005 के वैवाहिक मामला सं. 48 तारीख 30 अगस्त, 2006 को पारित वह पूर्ववर्ती आदेश अपास्त कर दिया गया जिसके अनुसार प्रत्यर्थी-पत्नी द्वारा प्रत्यास्थापन के लिए फाइल किया गया मामला खारिज कर दिया गया था ।

18. अत:, तकनीकी और गुणागुण के आधार पर भी विद्वान्, प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, भागलपुर ने इस मुद्दे को ठीक परिप्रेक्ष्य में विनिश्चित किया है । इस प्रकार, अपीलार्थी-पति से प्रत्यर्थी-पत्नी के साहचर्य को प्रत्याहृत करने के युक्तियुक्त प्रतिहेतु को साबित करने में पूर्णतया से असफल रहा है । तद्नुसार, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि इस अपील में कोई सार नहीं है । अत: इसे खारिज किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अम./अस.

अर्पणा विजय मनोर

बनाम

विजय तुकाराम मनोर

(2019 की रिट याचिका सं. 4014)

तारीख 9 दिसंबर, 2020

न्यायमूर्ति मंगेश एस. पाटिल

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 24 – वादकालीन भरणपोषण – पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद याचिका के लंबित रहने के दौरान अंतरिम निर्वाह भत्ते के लिए डा. पत्नी द्वारा आवेदन किया जाना – पत्नी द्वारा चिकित्सा व्यवसाय किया जाना और अपनी जीविका के लिए कमाना – याची-पत्नी एक चिकित्सा व्यवसायी है और वह अपनी जीविका के लिए कुछ कमाती भी है, फिर भी इस आधार पर उसे अधिनियम की धारा 24 के अधीन निर्वाह भत्ते से इनकार नहीं किया जा सकता ।

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 – धारा 13(1)(i-क) – पति द्वारा विवाह-विच्छेद का वाद फ़ाइल किया जाना – पत्नी द्वारा स्त्रीधन वापस लेने का आवेदन किया जाना – स्त्रीधन सुनिश्चित किए जाने हेतु दोनों पक्षकारों द्वारा पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध न करना – यद्यपि पत्नी द्वारा भरणपोषण का आवेदन खारिज किए जाने संबंधी कुटुंब न्यायालय के आदेश पर आक्षेप किया गया है, फिर भी स्त्रीधन सुनिश्चित करने हेतु अतिरिक्त साक्ष्य अपेक्षित है, अतः चर्चा का विषय होने के कारण इस प्रक्रम पर स्त्रीधन की वापसी का आवेदन मंजूर नहीं किया जा सकता ।

इस याचिका में भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन, याची-पत्नी ने कुटुंब न्यायालय, औरंगाबाद के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा तारीख 2 फरवरी, 2019 को पारित उस आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा पत्नी के उस आवेदन (प्रदर्श 14) को

खारिज कर दिया गया था जिसके अनुसार हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन प्रत्यर्थी-पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी में उक्त अधिनियम की धारा 24 के अधीन अंतरिम निर्वाह पाने की ईप्सा की गई थी । आवेदन (प्रदर्श 14) द्वारा, याची ने यह निवेदन किया है कि वर्ष, 2016 से पति-पत्नी के अलग-अलग हो जाने से वह स्वयं अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । वह अपने माता-पिता के साथ रह रही है । वह प्रत्यर्थी द्वारा किए गए मनोवैज्ञानिक दबाव और उत्पीड़न के कारण कार्य करने में असमर्थ है । दूसरी ओर प्रत्यर्थी एक चिकित्सा अधिकारी है और उसका लगभग वेतन 60,000/- रुपए से 65,000/- रुपए के बीच है । उसके ऊपर कोई भी आश्रित नहीं है और इस प्रकार उसने प्रतिमास 15,000/- रुपए की दर से अंतरिम भरणपोषण का दावा किया और प्रत्येक तारीख पर न्यायालय में उपस्थित होने के लिए रिक्शे के किराए के लिए 200/- रुपए और अधिवक्ता की फीस के लिए 25,000/- रुपए का दावा भी किया । प्रत्यर्थी-पति ने अपने (प्रदर्श 19) द्वारा आवेदन का विरोध किया । उसने यह दलील दी कि याची व्यवसाय से चिकित्सक हैं और वह एक त्वचा विशेषज्ञ भी है । वह प्रतिमास 50,000/- रुपए से 60,000/- रुपए तक अर्जन करती है । वह अपने पिता के फ्लैट में अपना व्यवसाय निरंतर कर रही है । उसने यह इनकार किया कि वह किसी मनोवैज्ञानिक दबाव से पीड़ित थी और अपना व्यवसाय शुरू करने में असमर्थ थी । उसने यह इनकार किया कि वह प्रतिमास 60,000/- रुपए से 65,000/- रुपए तक कमाता है और उसने आवेदन खारिज करने का अनुरोध किया । दोनों पक्षों की सुनवाई के पश्चात् कुटुंब न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने इस याचिका में आवेदन (प्रदर्श 14) को खारिज कर दिया । अतः, यह याचिका फाइल की गई है । याचिका भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस प्रयोजन के लिए पर्याप्त यह निष्कर्ष निकालना पर्याप्त होगा कि यद्यपि वर्तमान मामले में याची एक चिकित्सा व्यवसायी है और वह अपनी जीविका के लिए कुछ कमाती भी है, फिर

भी इस आधार पर उसे हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन उसके लिए निर्वाह भत्ते से इनकार नहीं किया जा सकता । अब भरण-पोषण की मात्रा को लेते हैं, यद्यपि याची ने अपनी आयकर विवरणी प्रस्तुत की है, प्रत्यर्थी ने अपनी विवरणी प्रस्तुत करने की चेष्ठा नहीं की है । ऐसी स्थितियों का सामना करने के लिए कि उच्चतम न्यायालय ने राजनेश वाले मामले में व्यक्त किए गए दिशानिर्देश भी अधिकथित किए हैं जिसमें दोनों पक्षकारों को शपथपत्र के रूप में आय से संबंधित अन्य बातों के साथ-साथ कई खुलासे करने चाहिए । स्पष्ट रूप से उस मामले में उच्चतम न्यायालय ने पति को अंतरिम भरणपोषण देने के आदेश को पारित करने से पहले आयकर विवरणी प्रस्तुत करने का निदेश दिया था । न्यायालय के विचार में अब इस तरह की प्रक्रिया का सहारा लेने से कार्यवाहियों में विलंब होने की संभावना है, इसलिए प्रतिकूल निष्कर्ष निकालना उचित होगा जो राजनेश वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुज्ञेय अभिनिर्धारित किया गया है । परिणामस्वरूप आगे चर्चा किए बिना हमारा यह मत है कि प्रत्यर्थी ने अपनी आय प्रकट नहीं की है और सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और राजनेश वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए दिशानिर्देशों पर विचार करते हुए अपरिहार्य निष्कर्ष यही निकलता है कि याची को इसमें उसके आवेदन की तारीख अर्थात् 3 अक्तूबर, 2017 से 10,000/- रुपए प्रतिमास की दर से अंतरिम भरणपोषण अधिनिर्णीत करना न्यायसंगत और समुचित होगा । (पैरा 10 और 11)

साथ ही साथ याची ने उसके उस आवेदन (प्रदर्श 40) पर कुटुंब न्यायालय द्वारा तारीख 2 फरवरी, 2019 को पारित किए गए आदेश पर भी आक्षेप किया है जिसमें उसने अपना स्त्रीधन को वापस लेने का अनुरोध किया है । हालांकि याची ने अपने इस आवेदन को खारिज करने वाले आदेश को आक्षेपित किया है, न्यायालय के विचार में जैसा कि कुटुंब न्यायालय के न्यायाधीश ने ठीक ही अवलोकन किया है, इस आवेदन (प्रदर्श 40) में उठाए गए मुद्दे चर्चा का विषय हैं, इसलिए इस आवेदन का विनिश्चय करने से पूर्व दोनों पक्षकारों द्वारा अतिरिक्त

साक्षी प्रस्तुत किया जाना चाहिए । इस प्रकार विद्वान् न्यायाधीश ने ठीक ही अवलोकन किया है कि आवेदन (प्रदर्श 40) का विनिश्चय मुख्य आवेदन के साथ करना होगा । इस तरह की प्रक्रिया का अनुसरण करने में कोई स्पष्ट अनौचित्य या अवैधता नहीं है । इसलिए, उक्त बातों को ध्यान में रखते हुए इस रिट याचिका में कोई सार नहीं है । रिट याचिका भागतः मंजूर की जाती है । आवेदन (प्रदर्श 14) पर कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । आवेदन भागतः मंजूर किया जाता है । प्रत्यर्थी हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन याची को वादकालीन निर्वाह भत्ता देने के लिए आवेदन की तारीख अर्थात् 3 अक्तूबर, 2017 से प्रतिमास 10,000/- रुपए की राशि का संदाय करेगा । वह इस निर्णय की तारीख से बारह सप्ताह के भीतर हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन कुटुंब न्यायालय के समक्ष कार्यवाही लंबित रहने के दौरान याची को सभी बकाया का अद्यतन संदाय करेगा । (पैरा 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2020] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2020 एस. सी. 915 :
राजनेश बनाम **नेहा और एक अन्य** ; 7,9,11

[2020] (2020) 2 ए. बी. आर. (सी. आर. आई.) 395 :
संजय दामोदर काले बनाम **कल्याणी संजय काले** ; 9

[2017] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 1174 :
शैलजा और एक अन्य बनाम **खोबाना** ; 9

[2015] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2025 :
शमीमा फारूकी बनाम **शाहिद खान** ; 9

[2015] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 554 :
सुनीता कचवाहा और अन्य बनाम **अनिल कचवाहा** ; 9

[1968] ए. आई. आर. 1968 दिल्ली 174 :
चन्दर प्रकाश बोधराज बनाम **शिला रानी चन्दर प्रकाश** । 9

सिविल (रिट) अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका सं. 4014.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री बी. आर. वर्मा और श्री शिरांग बी. वर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री ए. एम. गोलप

आदेश

सुनवाई की गई ।

2. नियम – नियम को तुरंत प्रत्यावर्तनीय बनाया है । दोनों पक्षकारों के विद्वान् अधिवक्ताओं की सहमति से मामला ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर अंतिम रूप से सुना गया ।

3. इस याचिका में संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन, याची-पत्नी ने कुटुंब न्यायालय, औरंगाबाद के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा तारीख 2 फरवरी, 2019 को पारित उस आदेश को आक्षेपित किया है जिसके द्वारा पत्नी के उस आवेदन (प्रदर्श 14) को खारिज कर दिया गया था जिसके अनुसार हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(1)(i-क) के अधीन प्रत्यर्थी-पति द्वारा फाइल की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी में उक्त अधिनियम की धारा 24 के अधीन अंतरिम निर्वाह पाने की ईप्सा की गई थी ।

4. आवेदन (प्रदर्श 14) द्वारा, याची ने यह निवेदन किया है कि वर्ष, 2016 से पति-पत्नी के अलग-अलग हो जाने से वह स्वयं अपना भरणपोषण करने में असमर्थ है । वह अपने माता-पिता के साथ रह रही है । वह प्रत्यर्थी द्वारा किए गए मनोवैज्ञानिक दबाव और उत्पीड़न के कारण कार्य करने में असमर्थ है । दूसरी ओर प्रत्यर्थी एक चिकित्सा अधिकारी है और उसका लगभग वेतन 60,000/- रुपए से 65,000/- रुपए के बीच है । उसके ऊपर कोई भी आश्रित नहीं है और इस प्रकार उसने प्रतिमास 15,000/- रुपए की दर से अंतरिम भरणपोषण का दावा किया और प्रत्येक तारीख पर न्यायालय में उपस्थित होने के लिए रिक्शे के किराए के लिए 200/- रुपए और अधिवक्ता की फीस के लिए 25,000/- रुपए का दावा भी किया ।

5. प्रत्यर्थी-पति ने अपने (प्रदर्श 19) द्वारा आवेदन का विरोध किया । उसने यह दलील दी कि याची व्यवसाय से चिकित्सक है और वह एक त्वचा विशेषज्ञ भी है । वह प्रतिमास 50,000/- रुपए से 60,000/- रुपए तक अर्जन करती है । वह अपने पिता के फ्लैट में अपना व्यवसाय निरंतर कर रही है । उसने यह इनकार किया कि वह किसी मनोवैज्ञानिक दबाव से पीड़ित थी और अपना व्यवसाय शुरू करने में असमर्थ थी । उसने यह इनकार किया कि वह प्रतिमास 60,000/- रुपए से 65,000/- रुपए तक कमाता है और उसने आवेदन खारिज करने का अनुरोध किया ।

6. दोनों पक्षों की सुनवाई के पश्चात् कुटुंब न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने इस याचिका में आवेदन (प्रदर्श 14) को खारिज कर दिया । अत: यह याचिका फाइल की गई है ।

7. विद्वान् काउंसेल श्री वर्मा ने **राजनेश** बनाम **नेहा और अन्य**[1] (2020 की दांडिक अपील संख्या 730, विनिश्चित तारीख 4.11.2020) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा हाल ही में तारीख 4 नवंबर, 2020 को दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए यह दलील दी है कि उच्चतम न्यायालय ने विभिन्न क़ानूनों के अधीन अधिनिर्णय अन्तरिम भरणपोषण सहित भरणपोषण/निर्वाह भत्ता प्रदान किए जाने के मामलों में अनेक मार्गदर्शक सिद्धान्त और निदेश अधिकथित किए हैं । उसने यह इंगित किया है कि यह मानने पर भी कि याची विहित रूप से चिकित्सा व्यवसाय योग्य है, वह अंतरिम निर्वाह भत्ता का दावा करने की हकदार है जैसाकि उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय में अधिकथित किया गया है । अपनी जीविका के लिए अर्जन करना उसका निर्वाह भत्ता के दावे में बाधा नहीं बन सकता । इसके विपरीत प्रत्यर्थी भी शानदार वेतन अर्जन करने वाला एक चिकित्सा अधिकारी है । कुटुंब न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने विधि और तथ्यों का मूल्यांकन करने में भारी त्रुटि की है और अंतरिम निर्वाह भत्ते से इनकार करके अवैधता की है और इस आदेश को पलटा जा सकता है ।

---

[1] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2020 एस. सी. 915.

8. प्रत्यर्थी के विद्वान् अधिवक्ता श्री ए. एम. गोलप ने याचिका का दृढ़तापूर्वक विरोध किया है । उसने यह दलील दी कि याची निर्दोष नहीं है और उसने यह छिपाया है कि वह चिकित्सा व्यवसाय कर रही है । इस संबंध में कुटुंब न्यायालय के समक्ष अभिलेख प्रस्तुत किया गया और उसको अंतरिम निर्वाह भत्ता देने से इनकार करने में विद्वान् न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गई है ।

9. जहां तक कमाने के लिए सक्षम पत्नी द्वारा निर्वाह भत्ते का दावा किए जाने का संबंध है, **राजनेश** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने भरणपोषण की मात्रा अवधारित करने के मापदंड के शीर्षक के अधीन भाग-3 के खंड (ग) में इस पर विचार किया है जो इस प्रकार है :–

> "(ग) जहां पत्नी कुछ आय अर्जित करती है ऐसे मामलों में न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि पत्नी कमाती है तो इसका अर्थ यह नहीं है कि वह पति से भरणपोषण नहीं ले सकती । न्यायालयों ने निम्नलिखित निर्णयों में इस विवाद्यक पर दिशानिर्देश दिए हैं ।"

शैलजा और एक अन्य बनाम **खोबाना**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि मात्र इस कारण से कि पत्नी कमाने में सक्षम है, कुटुंब न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत भरणपोषण कम नहीं किया जा सकता । न्यायालय को यह अवधारित करना होगा कि पत्नी की आय वैवाहिक गृह में उसके पति की जीवन शैली के आधार पर स्वयं के भरणपोषण के लिए पर्याप्त है या नहीं । जीविका का अर्थ यह नहीं है कि व्यक्ति केवल जीवित रहे और ऐसा अर्थ लगाने के लिए अनुज्ञात भी नहीं किया जा सकता ।

सुनीता कचवाहा और अन्य बनाम **अनिल कचवाहा**[2] वाले मामले में पत्नी के पास स्नातकोत्तर की उपाधि थी और वह जबलपुर में एक

---

[1] ए. आई. आर. 2017 एस. सी. 1174.

[2] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 554.

अध्यापक के रूप में नियोजित थी । पति ने इस बात पर विवाद किया कि चूंकि पत्नी की आय पर्याप्त है इसलिए उसे पति से वित्तीय सहायता की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने इस विवाद का निवारण किया और यह अभिनिर्धारित किया कि मात्र यह कारण कि पत्नी कुछ आय अर्जित करती है, भरणपोषण के लिए उसके दावे को खारिज करने का आधार नहीं हो सकता ।

बॉम्बे उच्च न्यायालय ने **संजय दमोदर काले** बनाम **कल्याणी संजय काले**[1] वाले मामले में **सुनीता कचवाहा** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि न तो कमाने के लिए पत्नी का सक्षम होना और उसकी वास्तविक कमाई चाहे कितनी भी हो, भरण-पोषण के दावे का इनकार किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं है ।

एक हृष्टपुष्ट पति को अपनी पत्नी और बच्चों के लिए पर्याप्त धन कमाने के लिए सक्षम मानना चाहिए और यह दलील नहीं दी जा सकती कि वह अपने कुटुंब का भरणपोषण करने के लिए पर्याप्त रूप से कमाने की स्थिति में नहीं है, जैसा की दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा **चन्दर प्रकाश बोधराज** बनाम **शिला रानी चन्दर प्रकाश**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । पति पर आवश्यक सामग्री के साथ यह स्थापित करने का दायित्व है कि यह दर्शाने के लिए पर्याप्त आधार है कि कुटुंब का भरणपोषण करना उसकी सामर्थ्य के परे है । यदि पति अपनी आय की सही राशि का खुलासा नहीं करता है तो न्यायालय प्रतिकूल निष्कर्ष निकाल सकता है ।

इस न्यायालय ने **शमीमा फारूकी** बनाम **शाहिद खान**[3] वाले मामले में **चन्द्र प्रकाश** (उपरोक्त) वाले मामलें में निर्णय का उल्लेख अनुमोदन के साथ किया है और यह अभिनिर्धारित किया है कि भरणपोषण करने के लिए पति का दायित्व, पत्नी के दायित्व की अपेक्षा अधिक है ।

---

[1] (2020) 2 ए. बी. आर. (सी. आर. आई.) 395.

[2] ए. आई. आर. 1968 दिल्ली 174.

[3] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2025.

10. इस प्रयोजन के लिए यह निष्कर्ष निकालना पर्याप्त होगा कि यद्यपि वर्तमान मामले में याची एक चिकित्सा व्यवसायी है और वह अपनी जीविका के लिए कुछ कमाती भी है, फिर भी इस आधार पर उसे हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन उसके लिए निर्वाह भत्ते से इनकार नहीं किया जा सकता ।

11. अब भरणपोषण की मात्रा को लेते हैं, यद्यपि याची ने अपनी आयकर विवरणी प्रस्तुत की है, प्रत्यर्थी ने अपनी विवरणी प्रस्तुत करने की चेष्ठा नहीं की है । ऐसी स्थितियों का सामना करने के लिए कि उच्चतम न्यायालय ने **राजनेश** (उपरोक्त) वाले मामले में व्यक्त किए गए दिशा निर्देश भी अधिकथित किए हैं जिसमें दोनों पक्षकारों को शपथ-पत्र के रूप में आय से संबंधित अन्य बातों के साथ-साथ कई खुलासे करने चाहिए । स्पष्ट रूप से उस मामले में उच्चतम न्यायालय ने पति को अंतरिम भरणपोषण देने के आदेश को पारित करने से पहले आयकर विवरणी प्रस्तुत करने का निदेश दिया था । मेरे विचार में अब इस तरह की प्रक्रिया का सहारा लेने से कार्यवाहियों में विलंब होने की संभावना है, इसलिए प्रतिकूल निष्कर्ष निकालना उचित होगा जो **राजनेश** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुज्ञेय अभिनिर्धारित किया गया है । परिणामस्वरूप आगे चर्चा किए बिना हमारा यह मत है कि प्रत्यर्थी ने अपनी आय प्रकट नहीं की है और सभी तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और **राजनेश** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए दिशानिर्देशों पर विचार करते हुए अपरिहार्य निष्कर्ष यही निकलता है कि याची को इसमें उसके आवेदन की तारीख अर्थात् 3 अक्तूबर, 2017 से 10,000/- रुपए प्रतिमास की दर से अंतरिम भरणपोषण अधिनिर्णीत करना न्यायसंगत और समुचित होगा ।

12. साथ ही साथ याची ने उसके उस आवेदन (प्रदर्श 40) पर कुटुंब न्यायालय द्वारा तारीख 2 फरवरी, 2019 को पारित किए गए आदेश पर भी आक्षेप किया है जिसमें उसने अपना स्त्रीधन को वापस लेने का अनुरोध किया है । हालांकि याची ने अपने इस आवेदन को

खारिज करने वाले आदेश को आक्षेपित किया है, मेरे विचार में जैसा कि कुटुंब न्यायालय के न्यायाधीश ने ठीक ही अवलोकन किया है, इस आवेदन (प्रदर्श 40) में उठाए गए मुद्दे चर्चा का विषय हैं, इसलिए इस आवेदन का विनिश्चय करने से पूर्व दोनों पक्षकारों द्वारा अतिरिक्त साक्षी प्रस्तुत किया जाना चाहिए । इस प्रकार विद्वान् न्यायाधीश ने ठीक ही अवलोकन किया है कि आवेदन (प्रदर्श 40) का विनिश्चय मुख्य आवेदन के साथ करना होगा । इस तरह की प्रक्रिया का अनुसरण करने में कोई स्पष्ट अनौचित्य या अवैधता नहीं है । इसलिए, उक्त बातों को ध्यान में रखते हुए इस रिट याचिका में कोई सार नहीं है ।

13. रिट याचिका भागतः मंजूर की जाती है । आवेदन (प्रदर्श 14) पर कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । आवेदन भागतः मंजूर किया जाता है । प्रत्यर्थी हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 24 के अधीन याची को वादकालीन निर्वाह भत्ता देने के लिए आवेदन की तारीख अर्थात् 3 अक्तूबर, 2017 से प्रतिमास 10,000/- रुपए की राशि का संदाय करेगा । वह इस निर्णय की तारीख से बारह सप्ताह के भीतर हिन्दू विवाह अधिनियम कि धारा 24 के अधीन कुटुंब न्यायालय के समक्ष कार्यवाही लंबित रहने के दौरान याची को सभी बकाया का अद्यतन संदाय करेगा । तद्नुसार, आदेश किया जाता है ।

14. रिट याचिका आवेदन (प्रदर्श 40) में पारित किए गए तारीख 2 फरवरी, 2019 के आदेश को चुनौती दिए जाने की सीमा तक खारिज की जाती है ।

याचिका भागतः मंजूर की गई ।

मही./अस.

(2021) 1 सि. नि. प. 850 मद्रास

एन. सत्यानारायणन उप कलक्टर, अरियालूर

बनाम

कलैसेलवी और अन्य

(2019 की अवमान अपील सं. 7 तथा 2020 की अवमान अपील सं. 4 और 5)

तारीख 8 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति पी. एन. प्रकाश और न्यायमूर्ति वी. सिवगनानम

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 (1971 का 70) – धारा 12 और 19 [सपठित संविधान, 1950 का अनुच्छेद 129, 136, 142 और 215] – न्यायालय अवमान के लिए एकल न्यायाधीश द्वारा आरोप विरचित किया जाना – आरोप विरचना के विरुद्ध अवमान अपील – सीमेंट कंपनी द्वारा सरकारी भूमि पर अतिक्रमण – उप कलक्टर द्वारा बेदखली का आदेश – आदेश के विरुद्ध रिट याचिका – रिट खारिज – खारिजी के विरुद्ध खंड न्यायपीठ के समक्ष रिट अपील – रिट अपील खारिज – खारिजी के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय के समक्ष विशेष इजाजत याचिका – याचिका खारिज – एकल न्यायाधीश और खंड न्यायपीठ के बेदखली के आदेश की पुष्टि – जिला प्रशासन द्वारा सरकारी भूमि से अतिक्रमण न हटाया जाना – एकल न्यायाधीश के आदेश की अवमानना के लिए आवेदन – अवमानना आवेदन की सुनवाई के दौरान सरकार द्वारा भूमि पट्टे की अवधि उप कलक्टर द्वारा 30 वर्ष के लिए सीमेंट कंपनी के पक्ष में बढ़ाया जाना – उप कलक्टर पर आरोप विरचित किया जाना – आरोप विरचना के विरुद्ध धारा 19(1) के अधीन खंड न्यायपीठ के समक्ष अवमान अपील – जिस न्यायालय के आदेश की अवमानना की गई है, मामला पहले उसी न्यायालय के समक्ष फाइल किया जाना चाहिए और यदि अवमानकर्ता दंडित किया जाता है तब मामला खंड न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है अन्यथा नहीं और आरोप विरचित किए जाने के प्रक्रम पर अवमानकर्ता धारा 19(1) का अवलंब लेकर

अवमान अपील फाइल नहीं कर सकता, अत: अवमान अपील खारिज किए जाने योग्य है ।

इस मामले में चेट्टीनाड सीमेंट कार्पोरेशन लिमिटेड (संक्षेप में "चेट्टीनाड सीमेंट") एक विशाल कारबार कंपनी ने राज्य सरकार को तारीख 5 मई, 2009 को एक पत्र भेजा, जिसमें एस. एफ. सं. 4/2011 में सरकारी पोरम्बोक भूमि का उपयोग करने की अनुज्ञा के लिए ईप्सा की गई थी और तत्पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि यह कम्पनी बिना किसी अनुज्ञा के उक्त भूमि का अधिभोग कर रही थी । इस स्थिति के कारण उप कलक्टर, अरियालूर को तारीख 10 फरवरी, 2015 को एक आदेश पारित करना पड़ा जिसमें 'चेट्टीनाड सीमेंट' को उनके कब्जाधीन क्षेत्र और उनके उपभोग में सरकारी पोरम्बोक भूमि को खाली करने का निदेश दिया गया था, जिसे चुनौती देते हुए 'चेट्टीनाड सीमेंट' अर्थात् कंपनी ने 2015 की रिट याचिका सं. 4779 फाइल की थी । उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान 'चेट्टीनाड सीमेंट' शायद इस न्यायालय द्वारा दिए गए रोक आदेश के कारण, भूमि का अधिभोग कर रही थी । 2015 की रिट याचिका सं. 4779 विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष अंतिम निपटारे के लिए आई जिसमें एकल न्यायाधीश ने तारीख 13 अगस्त, 2018 के आदेश द्वारा, न केवल उप कलक्टर, अरियालूर द्वारा पारित तारीख 10 फरवरी, 2015 के आदेश को कायम रखा और इस न्यायालय का मत यह है कि तारीख 10 फरवरी, 2015 की कार्यवाही में द्वितीय प्रत्यर्थी/उप कलक्टर अरियालूर द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई कमी नहीं है और तद्नुसार यह रिट याचिका गुणता से रहित है । ऊपर उद्धरित राजस्व बोर्ड के स्थायी आदेशों के परिशीलन से यह पता चलता है कि उसे बिना किसी अनुज्ञा के रेलवे लाइन बिछाने के कार्य को न्यायोचित ठहराने का कोई अधिकार नहीं है । उसे संपत्तियों के विनिमय के लिए पूछने का भी कोई अधिकार नहीं है । वास्तव में, सरकार पोरम्बोक भूमि और विशेष रूप से पट्टा भूमि से संबंधित निकायों के साथ विनियमित करने के लिए किए गए इस प्रकार के आवेदन को ग्रहण भी नहीं कर सकती है । याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने यह दर्शित नहीं किया है कि राज्य सरकार में ऐसी कोई शक्ति निहित है,

जिससे वह जल-पोरम्बोक को निजी व्यक्तियों की पट्टा भूमि से विनियमित कर सके । विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश में कोई त्रूटि नहीं है और याची के पक्ष में ऐसा कोई अधिकार नहीं है, जिससे वह पोरम्बोक भूमि को, विशेष रूप से जल-निकायों को उसकी पट्टा भूमि के साथ विनियमन करने के लिए कह सके । उप कलक्टर, अरियालूर ने स्पष्ट रूप से यह पाया है कि रेलवे लाइन जलमार्ग पोरम्बोक और वेरी पोरम्बोक पर बिछाई गई है । यह सुस्थापित है कि जल-निकायों का अधिक्रमण नहीं किया जा सकता है और जल-निकायों पर निर्माण भी नहीं किया जा सकता है । उप जिलाधिकारी ने यह पाया है कि अपीलार्थी द्वारा खोदे गए 60' × 30' गड्ढे के कारण प्राकृतिक जल स्रोत नष्ट हो गए हैं और यह सब बिना किसी अनुज्ञा के किया गया है । परिणामस्वरूप रिट अपील और रिट याचिका असफल हो जाती है और उन्हें खारिज किया जाता है । 2018 के रिट प्रकीर्ण याचिका सं. 34570 में पक्षकार बनाने के लिए फाइल किए गए आवेदन खारिज किया जाता है । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । परिणामस्वरूप 2018 की संबंधित विविध याचिका सं. 15665 और 31683 को बंद किया जाता है । 'चेट्टीनाड सीमेंट' ने 2019 के सिविल विशेष इजाजत याचिका सं. 5443 से 5444 को उच्चतम न्यायालय के समक्ष फाइल की, किंतु याचिकाओं को तारीख 25 फरवरी, 2019 को खारिज कर दिया गया । उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि याचिकाकर्ताओं की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल को सुना । हम आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपने अधिकारिता क्षेत्र का प्रयोग करना उचित नहीं समझते हैं । तद्नुसार, विशेष इजाजत याचिका को खारिज किया जाता है । तथापि, इन विशेष इजाजत याचिकाओं की खारिजी संबंधित प्राधिकारी के समक्ष समावेदन करके विधि के अनुसार उपचार प्राप्त करने में बाधा नहीं बनेगी । यदि कोई आवेदन लंबित है/हैं तो इससे उनका भी निपटारा हो जाएगा । इस दौरान अरियालूर जिले के निवासियों के एक समूह ने विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष 2019 की अवमान याचिका सं. 634 यह अभिकथन करते हुए फाइल की कि जिला प्रशासन ने

न्यायालय के निदेशानुसार अधिक्रमण को हटाने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उसमें प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किया और प्रत्यर्थियों ने यह कहते हुए अपना प्रत्युत्तर फाइल किया कि अधिक्रमण को हटाने के लिए कार्रवाई प्रारंभ कर रहे हैं । विद्वान् एकल न्यायाधीश बार-बार अवमान याचिका को स्थगित कर रहे थे, जिससे जिला प्रशासन को अधिक्रमण हटाने के लिए पर्याप्त समय मिल सके । अवमान याचिका के लंबित रहने के दौरान सरकार ने सरकारी आदेश (प्रकीर्ण) सं. 418 राजस्व और आपदा प्रबंधन विभाग, भूमि व्ययन प्रकोष्ठ [एलडी-2(2)] प्रभाग ने तारीख 8 नवंबर, 2019 को किलापजुवुर, खिजायुर और परपणचेरी ग्राम, अरियालूर तालुक और जिला इत्यादि के क्रम सं. 37 में की 'वारी कुट्टाई और ओडाई' के रूप में वर्गीकृत 46.23.5 हेक्टेयर भूमि में से 9.96.5 हेक्टेयर भूमि मैसर्स चेट्टीनाड सीमेंट कार्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में तारीख 16 जुलाई, 2009 से 30 वर्षों के लिए सरकारी भूमि का पट्टा देने के लिए एक आदेश पारित किया । विदित हो कि 'वारी कुट्टई और ओडाई' जल-निकाय है । जब अवमान याचिका में इसको विद्वान् एकल न्यायाधीश को ध्यान में लाया गया, तो उन्होंने कई आदेश पारित किए तथा तत्पश्चात् सरकार से स्पष्टीकरण मांगा और अंततः तारीख 31 जनवरी, 2020 के आदेश द्वारा अतुल्य मिश्रा, भारतीय प्रशासनिक सेवा और गगनदीप सिंह बेदी, भारतीय प्रशासनिक सेवा के प्राधिकारियों के विरुद्ध विद्वान् एकल न्यायाधीश ने आरोप विरचित किए तथा तारीख 31 जनवरी, 2020 के आदेश से व्यथित होकर अभिकथित अवमानकर्ताओं ने इन अवमान अपीलों को फाइल किया है । अवमान अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – जब विधि इस प्रकार का हो तो केवल आरोप विरचित किए जाने से अधिनियम की धारा 19 के अधीन चुनौती का आधार नहीं होगा, क्योंकि विद्वान् एकल न्यायाधीश अभिकथित अवमानकर्ता के इस स्पष्टीकरण को स्वीकार कर सकते हैं और उसे माफ भी कर सकते हैं । इसलिए, न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि वर्तमान अवमान अपील पोषणीय नहीं है । श्री पी. एच. अरविंद पांडियान ने एक

अनुकल्पी दलील दी है । उन्होंने कथन किया कि विद्वान् एकल न्यायाधीश का आदेश खंड न्यायपीठ के आदेश में विलीन हो गया और इसलिए अवमान की कार्यवाही खंड न्यायपीठ द्वारा प्रारंभ की जानी चाहिए थी । विशेष इजाजत याचिका को सिविल अपील में परिवर्तित कर दिया गया और पक्षकारों को सुनने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने सिविल अपील को खारिज कर दिया और गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को कायम रखा । आदेश का अनुपालन न करने पर, पीड़ित पक्षकारों ने कुछ अभिकथित अवमानकर्ताओं के विरुद्ध अवमान की कार्रवाई प्रारंभ करने के लिए उच्चतम न्यायालय में समावेदन किया । उच्चतम न्यायालय ने वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. के. वेणुगोपाल और डा. राजीव धवन से उनकी सहायता करने का अनुरोध किया । न्यायालय के लिए इस दलील से सहमत न होने का सीधा कारण यह है कि उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 129, 136, 142 से शक्तियां प्राप्त नहीं हैं । इसके पश्चात्, अधिनियम एक स्वत: पूर्ण संहिता है जिसे न्यायालय की अवमान कार्यवाही को विनियमित करने के लिए अधिनियमित किया गया था । यद्यपि उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय के रूप में भारत के संविधान के अनुच्छेद 215 के अधीन स्वयं के अवमान के दंडित करने की शक्ति रखता है, अधिनियम और उसमें विरचित नियमों के अधीन मामला पहले एकल न्यायाधीश के पास जाना चाहिए, जिनके निदेशों की अवज्ञा की गई है और यदि वह अवमानकर्ता को दंडित करते हैं तो इसके बाद पश्चात्कथित को उपचार के लिए अधिनियम की धारा 19 के अधीन खंड न्यायपीठ के पास जाना चाहिए । प्रस्तुत मामले में उच्चतम न्यायालय ने विशेष इजाजत याचिका प्रारंभ में ही खारिज कर दी है । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि खंड न्यायपीठ के आदेश का विलय उच्चतम न्यायालय के आदेश में हो गया । इसलिए उच्चतम न्यायालय में कोई अवमान याचिका फाइल नहीं जा सकती । यदि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अवमान याचिका पहली बार ही ग्रहण कर ली गई होती तब अभिकथित अवमानकर्ता विधिसम्मत रूप से यह कह सकते थे कि अधिनियम की धारा 19 के अधीन उसे कानूनी अधिकार से वंचित किया

जा रहा है । उच्च न्यायालय किसी भी कानूनी अधिकार को निर्वापित नहीं कर सकता है विशेष रूप से ऐसे मामलों में और यह वादकारियों के लिए पूर्वाग्रह का कारण बनता है । परिणामस्वरूप, ये अवमान अपीलें पोषणीय नहीं होने के कारण खारिज की जाती हैं । संबंधित प्रकीर्ण याचिकाएं बंद की जाती हैं । इस अपील का निपटारा करने से पूर्व यह न्यायालय अपनी नाराजगी अभिलिखित करने के लिए आनत है तारीख 8 नवंबर, 2019 का सरकारी आदेश (प्रकीर्ण सं. 418) राजस्व कि और आपदा प्रबंधन विभाग, भूमि व्ययन प्रकोष्ठ [एल. डी. - 2 (2)] प्रभाग पारित करके सरकार प्रमुख जल-निकायों को एक प्राइवेट उद्यम के विदोहन के लिए सौंपकर एकल न्यायाधीश या खंड न्यायपीठ या उच्च न्यायालय या अपनी स्वयं में से किसे धोखा देना चाहती थी ? ऐसा करना यह कहने की कोटि में आता है कि हम भारत के जमींदार हैं और हम हिमालय और पश्चिमी घाटों को पट्टे पर दे सकते हैं । न्यायालय यह भी कहना चाहेगा कि विद्वान् एकल न्यायाधीश अवमान याचिका पर ऊपर जो कहा गया उससे किसी भी रीति से प्रभावित हुए बिना कार्यवाही करें । (पैरा 7, 8, 9 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2014] (2014) 16 एस. सी. सी. 88 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. सप्ली. 780 : **दिनेशन के. के.** बनाम **आर. के. सिंह और एक अन्य** ; 8

[1988] (1988) 3 एस. सी. सी. 26 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1988 एस. सी. 50 : **बी. एन. तनेजा (आई. एफ. एस.)** बनाम **भजन लाल** ; 6

[1978] (1978) 2 एस. सी. सी. 370 : **पुरुषोत्तम दास गोयल** बनाम **माननीय न्यायमूर्ति बी. एस. ढिल्लन और अन्य** । 4

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की अवमान अपील सं. 7 तथा 2020 की अवमान अपील सं. 4 और 5.

एकल न्यायाधीश के तारीख 21 जनवरी, 2020 के आरोप विरचित करने संबंधी आदेश के विरुद्ध न्यायालय अवमान अधिनियम की धारा 19(1) के अधीन अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री पी. एच. अरविन्द पांडियन, अपर महाधिवक्ता जिनकी ए. एन. थंबीदुरई विशेष सरकारी प्लीडर द्वारा सहायता की गई और एम. सुरेश

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एस. कामदेवन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पी. एन. प्रकाश ने दिया ।

न्या. प्रकाश – इन अवमान अपीलों को विनिश्चित करने के लिए आवश्यक तथ्य निम्नानुसार हैं :–

(क) चेट्टीनाड सीमेंट कार्पोरेशन लिमिटेड (संक्षेप में "चेट्टीनाड सीमेंट") एक विशाल कारबार कंपनी ने राज्य सरकार को तारीख 5 मई, 2009 को एक पत्र भेजा, जिसमें एस. एफ. सं. 4/2011 में सरकारी पोरम्बोक भूमि का उपयोग करने की अनुज्ञा के लिए ईप्सा की गई थी और तत्पश्चात् ऐसा प्रतीत होता है कि यह कम्पनी बिना किसी अनुज्ञा के उक्त भूमि का अधिभोग कर रही थी । इस स्थिति के कारण उप कलक्टर, अरियालूर को तारीख 10 फरवरी, 2015 को एक आदेश पारित करना पड़ा जिसमें 'चेट्टीनाड सीमेंट' को उनके कब्जाधीन क्षेत्र और उनके उपभोग में सरकारी पोरम्बोक भूमि को खाली करने का निदेश दिया गया था, जिसे चुनौती देते हुए 'चेट्टीनाड सीमेंट' अर्थात् कंपनी ने 2015 की रिट याचिका सं. 4779 फाइल की थी । उक्त रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान 'चेट्टीनाड सीमेंट' शायद इस न्यायालय द्वारा दिए गए रोक आदेश के कारण, भूमि का अधिभोग कर रही थी । 2015 की रिट याचिका सं. 4779 विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष अंतिम निपटारे के लिए आई जिसमें एकल न्यायाधीश ने तारीख 13 अगस्त, 2018 के

आदेश द्वारा, न केवल उप कलक्टर, अरियालूर द्वारा पारित तारीख 10 फरवरी, 2015 के आदेश को कायम रखा, बल्कि निम्नलिखित सकारात्मक निदेश भी दिए :–

"23. इस न्यायालय का मत यह है कि तारीख 10 फरवरी, 2015 की कार्यवाही में द्वितीय प्रत्यर्थी/उप कलक्टर अरियालूर द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में कोई कमी नहीं है और तद्नुसार यह रिट याचिका गुणता से रहित है । तथापि, सरकारी अधिकारियों के बीच आंतरिक संसूचना और जिस प्रकार से जल निकायों सहित सरकारी भूमि को व्यवस्थित रूप से याची जैसे निगम द्वारा अधिक्रमण करने को अनुज्ञात किया गया, उसे ध्यान में रखते हुए यह न्यायालय निम्नलिखित आदेश पारित करने के लिए आनत है –

(i) रिट याची स्वीकृत रूप से सरकारी भूमि का अधिक्रमणकर्ता है जिसने वर्तमान रिट याचिका में उसके द्वारा ईप्सित अनुतोष प्रदान किये जाने के लिए उसने अपने अधिकार को तनिक भी साबित नहीं किया है । तद्नुसार, रिट याची के दावे को खारिज किया जाता है ।

(ii) प्रत्यर्थी 2 और 3 को "सरकारी पोरम्बोक भूमि", "वारी पोरम्बोक भूमि", "तालाब पोरम्बोक भूमि" और उस परिक्षेत्र में अन्य सभी सार्वजनिक खण्डों पर हुए अधिक्रमणों को इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तिथि से दो सप्ताह की अवधि में बेदखल करने का निदेश दिया जाता है ।

(iii) पुलिस अधीक्षक, अरियालूर को निदेश दिया जाता है कि वे प्रत्यर्थी 2 और 3 को आवश्यक पुलिस सुरक्षा प्रदान करें ताकि अधिक्रमणकारियों को सभी पहलुओं से सार्वजनिक भूमि से पूरी तरह बेदखल किया जा सके ।

(iv) प्रथम प्रत्यर्थी को निदेश दिया जाता है कि वह किसी आई. ए. एस. स्तर के अधिकारी द्वारा जिला प्रशासन के अधिकारियों के आचरण के संबंध में और लोक निर्माण विभाग के

अधिकारियों के आचरण, उपेक्षा, कर्तव्य की अवहेलना, भ्रष्ट क्रियाकलापों, अवैधता के संबंध में जांच और अन्वेषण करने का आदेश दे और इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तिथि से दो मास के भीतर जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करे ।

(v) जांच/अन्वेषण रिपोर्ट की प्राप्ति पर प्रथम प्रत्यर्थी को सभी लोक सेवकों और अन्य सभी संबंधित व्यक्तियों के विरुद्ध दंड विधि के उपबंधों तथा अनुशासन एवम् अपील नियमों के अधीन समुचित कार्रवाई प्रारंभ करने का निदेश दिया जाता है ।"

24. इन निदेशों के साथ रिट याचिका का निपटारा किया जाता है । तथापि, खर्चे के विषय में कोई आदेश नहीं किया जाता है । परिणामत: संबंधित प्रकीर्ण याचिकाओं को बंद किया जाता है ।

क. अनुपालना की रिपोर्ट देने के लिए दो मास के पश्चात् इस मामले को सूचीबद्ध किया जाए । रजिस्ट्री को निदेश दिया जाता है कि वह अरियालूर जिले के पुलिस अधीक्षक को इस आदेश की प्रति से संसूचित करे ।

ख. उक्त आदेश से व्यथित होकर चेट्टीनाड सीमेंट ने 2018 की रिट याचिका अपील सं. 1960 फाइल की और 2018 की रिट याचिका सं. 27234 में एक नई रिट याचिका को इसलिए फाइल किया गया ताकि न्यायालय परमादेश रिट जारी करके सरकार को निदेशित करे कि वह सरकारी पोरम्बोक भूमियों के बाबत उनके द्वारा ईप्सित विनियम/प्रस्ताव पर विचार करे :–

"31. ऊपर उद्धरित राजस्व बोर्ड के स्थायी आदेशों के परिशीलन से यह पता चलता है कि उसे बिना किसी अनुज्ञा के रेलवे लाइन बिछाने के कार्य को न्यायोचित ठहराने का कोई अधिकार नहीं है । उसे संपत्तियों के विनिमय के लिए पूछने का भी कोई अधिकार नहीं है । वास्तव में, सरकार पोरम्बोक भूमि और विशेष रूप से पट्टा भूमि से संबंधित निकायों के साथ विनियमित करने के लिए किए गए इस प्रकार के आवेदन को ग्रहण भी नहीं

कर सकती है। याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने यह दर्शित नहीं किया है कि राज्य सरकार में ऐसी कोई शक्ति निहित है, जिससे वह जल-पोरम्बोक को निजी व्यक्तियों की पट्टा भूमि से विनियमित कर सके । विद्वान् एकल न्यायाधीश के आदेश में कोई त्रूटि नहीं है और याची के पक्ष में ऐसा कोई अधिकार नहीं है, जिससे वह पोरम्बोक भूमि को, विशेष रूप से जल-निकायों को उसकी पट्टा भूमि के साथ विनियमन करने के लिए कह सके ।

32. उप कलक्टर, अरियालूर ने स्पष्ट रूप से यह पाया है कि रेलवे लाइन जलमार्ग पोरम्बोक और वेरी पोरम्बोक पर बिछाई गई है । यह सुस्थापित है कि जल-निकायों का अधिक्रमण नहीं किया जा सकता है और जल-निकायों पर निर्माण भी नहीं किया जा सकता है । उपजिलाधिकारी ने यह पाया है कि अपीलार्थी द्वारा खोदे गए 60' × 30' गड्ढे के कारण प्राकृतिक जल स्रोत नष्ट हो गए हैं और यह सब बिना किसी अनुज्ञा के किया गया है ।

33. परिणामस्वरूप रिट अपील और रिट याचिका असफल हो जाती है और उन्हें खारिज किया जाता है । 2018 के रिट प्रकीर्ण याचिका सं. 34570 में पक्षकार बनाने के लिए फाइल किए गए आवेदन खारिज किया जाता है । खर्चे के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है । परिणामस्वरूप 2018 की संबंधित विविध याचिका सं. 15665 और 31683 को बंद किया जाता है ।"

ग. 'चेट्टीनाड सीमेंट' ने 2019 के सिविल विशेष इजाजत याचिका सं. 5443 से 5444 को उच्चतम न्यायालय के समक्ष फाइल की, किंतु याचिकाओं को तारीख 25 फरवरी, 2019 को खारिज कर दिया गया । उच्चतम न्यायालय का आदेश को इस प्रकार है :–

"याचिकाकर्ताओं की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल को सुना ।

हम आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन अपने अधिकारिता क्षेत्र का

प्रयोग करना उचित नहीं समझते हैं । तद्नुसार, विशेष इजाजत याचिका को खारिज किया जाता है ।

तथापि, इन विशेष इजाजत याचिकाओं की खारिजी संबंधित प्राधिकारी के समक्ष समावेदन करके विधि के अनुसार उपचार प्राप्त करने में बाधा नहीं बनेगी । यदि कोई आवेदन लंबित है/हैं तो इससे उनका भी निपटारा हो जाएगा ।"

घ. इस दौरान अरियालूर जिले के निवासियों के एक समूह ने विद्वान् एकल न्यायाधीश के समक्ष 2019 की अवमान याचिका सं. 634 यह अभिकथन करते हुए फाइल की कि जिला प्रशासन ने न्यायालय के निदेशानुसार अधिक्रमण को हटाने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की है । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने उसमें प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किया और प्रत्यर्थियों ने यह कहते हुए अपना प्रत्युत्तर फाइल किया कि अधिक्रमण को हटाने के लिए कार्रवाई प्रारंभ कर रहे हैं । विद्वान् एकल न्यायाधीश बार-बार अवमान याचिका को स्थगित कर रहे थे, जिससे जिला प्रशासन को अधिक्रमण हटाने के लिए पर्याप्त समय मिल सके ।

ङ अवमान याचिका के लंबित रहने के दौरान सरकार ने सरकारी आदेश (प्रकीर्ण) सं. 418 राजस्व और आपदा प्रबंधन विभाग, भूमि व्ययन प्रकोष्ठ [एल. डी. - 2 (2)] प्रभाग ने तारीख 8 नवंबर, 2019 को किलापजुवुर, खिजायुर और परपणचेरी ग्राम, अरियालूर तालुक और जिला इत्यादि के क्रम सं. 37 में की 'वारी कुट्टाई और ओडाई' के रूप में वर्गीकृत 46.23.5 हेक्टेयर भूमि में से 9.96.5 हेक्टेयर भूमि मैसर्स चेट्टीनाड सीमेंट कार्पोरेशन प्राइवेट लिमिटेड के पक्ष में तारीख 16 जुलाई, 2009 से 30 वर्षों के लिए सरकारी भूमि का पट्टा देने के लिए एक आदेश पारित किया । विदित हो कि 'वारी कुट्टई और ओडाई' जल निकाय हैं । जब अवमान याचिका में इसको विद्वान् एकल न्यायाधीश के ध्यान में लाया गया, तो उन्होंने कई आदेश पारित किए तथा तत्पश्चात् सरकार से स्पष्टीकरण मांगा और अंततः तारीख 31 जनवरी, 2020 के आदेश द्वारा अतुल्य मिश्रा, भारतीय प्रशासनिक सेवा और गगनदीप सिंह बेदी, भारतीय प्रशासनिक सेवा के प्राधिकारियों के विरुद्ध

विद्वान् एकल न्यायाधीश ने आरोप विरचित किए की तथा तारीख 31 जनवरी, 2020 के आदेश से व्यथित होकर अभिकथित अवमानकर्ताओं ने इन अवमान अपीलों को फाइल किया है ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

2. 2019 की अवमान अपील सं. 7 और 2020 की अवमान अपील सं. 4, 5 में अपीलार्थियों की ओर से श्री पी. एच. अरविंद पांडियान तथा अपर महाधिवक्ता जिनकी ए. एन. थबीदुरई, विशेष सरकारी प्लीडर द्वारा सहायता की गई, को सुना । 2020 की अवमान अपील सं. 10 में अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री एम. सुरेश कुमार और सभी अवमान अपीलों में प्रत्यर्थी सं. 1 से 7 की ओर से विद्वान् काउंसेल एस. कामदेवन को सुना गया ।

3. न्यायालय में दी गई दलीलों का उल्लेख करने से पूर्व यहां न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 19 का उद्धरण सुसंगत हो सकता है :–

"**अपीलें** – (1) अवमान के लिए दंडित करने की अपने अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय के किसी आदेश या विनिश्चय की साधिकार अपील –

(क) यदि आदेश या विनिश्चय एकल न्यायाधीश का है, तो न्यायालय के कम से कम दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ को होगी ;

(ख) यदि आदेश या विनिश्चय न्यायपीठ का है, तो उच्चतम न्यायालय को होगी :

परन्तु यदि आदेश या विनिश्चय किसी संघ राज्यक्षेत्र के किसी न्यायिक आयुक्त के न्यायालय का है तो ऐसी अपील उच्चतम न्यायालय को होगी ।

(2) किसी अपील के लंबित रहने पर, अपील न्यायालय आदेश दे सकेगा कि –

(क) उस दंड या आदेश का निष्पादन, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, निलंबित कर दिया जाए ;

(ख) यदि अपीलार्थी परिरोध में है तो वह जमानत पर छोड़ दिया जाए ; और

(ग) अपील की सुनवाई इस बात के होते हुए भी की जाए कि अपीलार्थी ने अपने अवमान का मार्जन नहीं किया है ।

(3) यदि किसी आदेश से, जिसके विरुद्ध अपील फाइल की जा सकती है, व्यथित कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का समाधान कर देता है कि वह अपील करने का आशय रखता है तो उच्च न्यायालय उपधारा (2) द्वारा प्रदत्त सभी शक्तियों का या उनमें से किन्हीं का प्रयोग भी कर सकेगा ।

(4) उपधारा (1) के अधीन अपील, उस आदेश की तारीख से जिसके विरुद्ध अपील की जाती है, –

(क) उच्च न्यायालय की किसी न्यायपीठ को अपील की दशा में, तीस दिन के भीतर की जाएगी ;

(ख) उच्चतम न्यायालय को अपील की दशा में, साठ दिन के भीतर की जाएगी ।"

4. श्री पी. एच. अरविंद पांडियान ने **पुरूषोत्तम दास गोयल** बनाम **माननीय न्यायमूर्ति श्री बी. एस. ढिल्लन और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का दृढ़तापूर्वक अवलंब लिया और प्रतिवाद किया कि यह आवश्यक नहीं है कि अवमान कार्यवाही में अंतिम आदेश पारित होने के पश्चात् ही अपील फाइल की जा सकती है, तथा अपील अंतर्वर्ती आवेदन के विरुद्ध भी की जा सकती है । हमारी सुविचारित राय में **पी. डी. गोयल** (उपरोक्त) वाला मामला श्री पी. एच. अरविंद पांडियन

[1] (1978) 2 एस. सी. सी. 370.

के मामले का बिल्कुल भी समर्थन नहीं करता है, जैसाकि अवमान अपील के पैरा सं. 3 को पढ़ने पर देखा जा सकता है जो इस प्रकार है :–

"3. हमारी राय में, प्रत्यर्थियों की ओर से किया गया प्रारंभिक आक्षेप सुस्थापित है और इसे सही के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए । धारा 19(1) इस प्रकार है –

'अवमान के लिए दंडित करने की अपनी अधिकारिता के प्रयोग में उच्च न्यायालय के किसी आदेश या विनिश्चय की साधिकार अपील –

(क) यदि आदेश या विनिश्चय एकल न्यायाधीश का है, तो न्यायालय के कम से कम दो न्यायाधीशों की न्यायपीठ को होगी ;

(ख) यदि आदेश या विनिश्चय न्यायपीठ का है, तो उच्चतम न्यायालय को होगी :

परंतु यदि आदेश या विनिश्चय किसी संघ राज्यक्षेत्र के किसी न्यायिक आयुक्त के न्यायालय का है तो ऐसी अपील उच्चतम न्यायालय को होगी ।'

धारा के पठन मात्र से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय की न्यायपीठ के किसी भी आदेश या विनिश्चय से अधिकार स्वरूप इस न्यायालय में अपील की जा सकती है यदि आदेश को अपने अधिकारिता का प्रयोग करके अवमान के लिए दंडित करने के लिए पारित किया गया है । अवमान की कार्यवाही में उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी भी प्रकार के आदेश से अधिकार स्वरूप कोई भी अपील नहीं की जा सकती है । धारा 17 के अधीन नोटिस जारी करके कार्यवाही प्रारंभ की जाती है । तत्पश्चात्, उच्च न्यायालय द्वारा उक्त कार्यवाही में कई अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किए जा सकते हैं । विधान-मंडल का आशय यह नहीं हो सकता है कि वह यह उपबंध करे कि उच्च न्यायालय द्वारा किए गए ऐसे प्रत्येक आदेश से अधिकार स्वरूप इस न्यायालय में अपील की जा सके ।

आदेश या विनिश्चय ऐसा होना चाहिए जो व्यथित पक्षकार के अधिकार को प्रभावित करने वाले उच्च न्यायालय के समक्ष उठाए गए झगड़े की जड़ को विनिश्चित करे । प्रथमदृष्ट्या केवल यह देखते हुए कि मामला अवमान कार्यवाही के लिए उपयुक्त है तो नोटिस जारी करके अवमान कार्यवाही को प्रारंभ करने मात्र से कोई प्रश्न विनिश्चित नहीं होता है । इस न्यायालय को पहली बार में इस प्रकार की अपील में यह विनिश्चित करने के लिए नहीं कहा जा सकता है कि जिस व्यक्ति के विरुद्ध कार्यवाही की गई है, उसने उच्च न्यायालय का अवमान किया है या नहीं । मामले को या तो अंतिम रूप से विनिश्चित किया जाए या हो सके तो पूर्ववर्ती प्रक्रम पर भी कोई आदेश किया जाए जिससे अभिकथित अवमानकर्ता द्वारा उच्च न्यायालय को कार्यवाही को बंद करने के लिए दी गई दलील को विनिश्चित करता हो । धारा 19 के अधीन इस न्यायालय में अपील करने योग्य आदेशों के प्रकार की एक सुविस्तृत सूची बनाना न तो संभव है और न ही उपयुक्त है । अंतिम आदेश निश्चित रूप से अपील योग्य होगा । श्री मोहन बिहारी लाल ने हमारा ध्यान अधिनियम की धारा 20 की ओर किया जिसके अधीन यह उपबंध किया गया है –

> "कोई न्यायालय अवमान के लिए कार्यवाहियां, या तो स्वयं स्वप्रेरणा पर या अन्यथा, उस तारीख से, जिसको अवमान का किया जाना अभिकथित है, एक वर्ष की अवधि के अवसान के पश्चात् प्रारंभ नहीं करेगा ।"

उन्होंने दलील दी कि उच्च न्यायालय द्वारा ऐसी कार्यवाही को प्रारंभ करना अधिकारिता से रहित होगा यदि ऐसी कार्यवाही से धारा 20 का अतिक्रमण होता है । ऐसा हो सकता है । यदि नोटिस के जवाब में अभिकथित अवमानकर्ता उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होता है और अधिनियम की धारा 20 के अधीन वर्जन होने के आधार पर कार्यवाही को समाप्त करने के लिए कहता है, लेकिन उच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि कार्यवाही वर्जित

नहीं है, तो भलीभांति रूप से यह हो सकता है कि ऐसे आदेश से धारा 19 के अधीन इस न्यायालय में अपील की जा सकती है ; यद्यपि कार्यवाही उच्च न्यायालय में लंबित है । हमें ऐसे आदेश के संबंध में अपनी अंतिम राय को अभिव्यक्त करने के लिए नहीं कहा गया है लेकिन हम उदाहरण के माध्यम से इस प्रकार के आदेश का उल्लेख केवल इसलिए कर रहे हैं जिससे यह दर्शित किया जा सके कि कार्यवाही के किसी मध्यवर्ती प्रक्रम पर किया गया आदेश भी धारा 19 के अधीन अपील योग्य हो सकता है । हमारे सुविचारित निर्णय में बिना किसी उत्तरभावी आदेश के केवल कार्यवाही को प्रारंभ करने वाले आदेश से अभिकथित अवमानकर्ता के विरुद्ध कुछ भी विनिश्चित नहीं होता है और धारा 19 के अधीन संविधान के अधिकार के रूप में उस आदेश के विरुद्ध अपील नहीं की जा सकती है । लेकिन यह मामला पूर्णत: भिन्न है । हम इस मामले में यह विनिश्चित कर रहे हैं कि अधिनियम की धारा 19(1) के अधीन फाइल की गई वर्तमान अपील चलने योग्य नहीं है और वह अक्षम है ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है) ।

उपरोक्त निर्णय में, उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रथमदृष्ट्या यह देखते हुए कि मामला कार्यवाही करने के लिए उपयुक्त है, तो नोटिस जारी करके अवमान की कार्यवाही को प्रारंभ करने से कोई भी प्रश्न विनिश्चित नहीं होता है । पुन: उच्चतम न्यायालय ने पैरा 9 में इस प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि :–

"..... हम इसे दोहरा सकते हैं कि यह एक भिन्न मामला हो सकता था यदि आदेश अवमानकर्ता द्वारा न्यायालय के समक्ष उठाए गए कुछ विवाद्यकों को विनिश्चित करता है जो एक या अन्य आधार पर कार्यवाही को समाप्त करने के लिए कह रहे हैं किंतु जब तक पक्षकारों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष उठा गए

उनके अधिकार को प्रभावित करने वाले किसी मामले का न्यायनिर्णयन करते हुए उच्च न्यायालय का कोई आदेश या विनिश्चयन नहीं है तो सूचना जारी करते हुए मात्र आदेश अपीलनीय नहीं है .....।"

6. श्री एस. कामदेवन ने **बी. एन. तनेजा (आईएफएस)** बनाम **भजन लाल**[1] वाले मामले के निर्णय का अवलंब लिया है, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने पैरा 8 में निम्नलिखित रूप से यह अभिनिर्धारित किया था कि :–

"8. अवमान के लिए दंडित करने की अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए पारित उच्च न्यायालय के किसी भी विनिश्चय या आदेश के विरुद्ध ही धारा 19 की उपधारा (1) के अधीन अपील करने का अधिकार उपलब्ध होगा । इस संबंध में, यहां संविधान के अनुच्छेद 215 के उपबंध को निर्दिष्ट करना उचित होगा जो यह उपबंध करता है कि प्रत्येक उच्च न्यायालय एक अभिलेख न्यायालय होगा और उसमें अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां निहित होंगी । अनुच्छेद 215 उच्च न्यायालय को स्वयं के अवमान के लिए दंड देने को शक्ति प्रदान करता है । जैसाकि पूर्वतर में देखा गया है कि अधिनियम की धारा 19(1) के अधीन अपील तभी होगी जब उच्च न्यायालय अवमान के लिए दंड देने की अधिकारिता का प्रयोग करते हुए आदेश या विनिश्चय करता है । हमारी राय में, प्रत्यर्थी की ओर से दी गई दलील सही है कि उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 215 द्वारा प्रदत्त अपने अधिकारिता या शक्ति का प्रयोग तब करता है जब वह अवमान के लिए दंड अधिरोपित करता है । जब उच्च न्यायालय अभिकथित अवमानकर्ता पर कोई दंड अधिरोपित नहीं करता है, तो उच्च न्यायालय अवमान के लिए दंडित करने की अपनी अधिकारिता या शक्ति का प्रयोग नहीं करता

[1] (1988) 3 एस. सी. सी. 26 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1988 एस. सी. 50.

है । उच्च न्यायालय की अधिकारिता दंडित करना है जब उच्च न्यायालय द्वारा कोई दंड अधिरोपित नहीं किया जाता है, तब यह कहना कठिन है कि उच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 215 के अनुसार प्रदत्त अपनी अधिकारिता या शक्ति का प्रयोग किया है ।"

7. जब विधि इस प्रकार हो तो केवल आरोप विरचित किए जाने से अधिनियम की धारा 19 के अधीन चुनौती का आधार नहीं होगा, क्योंकि विद्वान् एकल न्यायाधीश अभिकथित अवमानकर्ता के इस स्पष्टीकरण को स्वीकार कर सकते हैं और उसे माफ भी कर सकते हैं । इसलिए, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि वर्तमान अवमान अपील पोषणीय नहीं है ।

8. श्री पी. एच. अरविंद पांडियन ने एक अनुकल्पी दलील दी है । उन्होंने कथन किया कि विद्वान् एकल न्यायाधीश का आदेश खंड न्यायपीठ के आदेश में विलीन हो गया और इसलिए अवमान की कार्यवाही खंड न्यायपीठ द्वारा प्रारंभ की जानी चाहिए थी । इस प्रतिविरोध के समर्थन में उन्होंने **दिनेशन के. के.** बनाम **आर. के. सिंह और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है । उस मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय ने एक रिट याचिका में कुछ निदेशों को जारी किया था जिस पर उच्चतम न्यायालय ने प्रश्न उठाया था । विशेष इजाजत याचिका को सिविल अपील में परिवर्तित कर दिया गया और पक्षकारों को सुनने के पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने सिविल अपील को खारिज कर दिया और गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश को कायम रखा । आदेश का अनुपालन न करने पर, पीड़ित पक्षकारों ने कुछ अभिकथित अवमानकर्ताओं के विरुद्ध अवमान की कार्रवाई प्रारंभ करने के लिए उच्चतम न्यायालय में समावेदन किया । उच्चतम न्यायालय ने वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. के. वेणुगोपाल और डा. राजीव धवन से उनकी सहायता करने का अनुरोध किया । उक्त निर्णय के अनुच्छेद 12 को निम्नानुसार पढ़ा जाए :–

---

[1] (2014) 16 एस. सी. सी. 88 = ए. आई. आर. 2014 एस. सी. (सप्ली.) 780.

"12. हमने विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री के. के. वेणुगोपाल और राजीव धवन से इस मामले में हमारी सहायता करने के लिए अनुरोध किया है । दूसरे प्रश्न पर उनका मत यह है कि निस्संदेह इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश, निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और आदेश को स्वीकार करते हुए, निचले न्यायालयों द्वारा पारित निर्णय और आदेश में विलीन हो जाएगा । तथापि, यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 129, 136 और 142 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए याची परिवादी को यह निदेश दे सकता है कि वह उच्च न्यायालय के पास जाए और इसे उसकी जानकारी और संज्ञान में लाए कि प्रत्यर्थी अवमानकर्ताओं द्वारा उच्च न्यायालय के आदेशों और निदेशों की अवज्ञा की गई है।"

इस निर्णय का अवलंब लेते हुए श्री पी. एच. अरविंद पांडियन ने यह दलील देते हुए अनुरूपता बनाने का प्रयत्न किया कि अवमान याचिका को खंड न्यायपीठ के समक्ष फाइल करना चाहिए था और उसके पश्चात् खंड न्यायपीठ इसके लिए स्वतंत्र है कि वह अवमान याचिका को निपटाने के लिए विद्वान् एकल न्यायाधीश को भेजे ।

9. हमारे इस दलील से सहमत न होने का सीधा कारण यह है कि उच्च न्यायालय को भारत के संविधान के अनुच्छेद 129, 136, 142 से शक्तियां प्राप्त नहीं हैं ।

10. इसके पश्चात्, अधिनियम एक स्वत: पूर्ण संहिता है जिसे न्यायालय की अवमान कार्यवाही को विनियमित करने के लिए अधिनियमित किया गया था । यद्यपि उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय के रूप में भारत के संविधान के अनुच्छेद 215 के अधीन स्वयं के अवमान के दंडित करने की शक्ति रखता है, अधिनियम और उसमें विरचित नियमों के अधीन मामला पहले एकल न्यायाधीश के पास जाना चाहिए, जिनके निदेशों की अवज्ञा की गई है और यदि वह अवमानकर्ता को दंडित करते हैं तो इसके बाद पश्चात्कथित को उपचार के लिए अधिनियम की धारा 19 के अधीन खंड न्यायपीठ के पास जाना

चाहिए । प्रस्तुत मामले में उच्चतम न्यायालय ने विशेष इजाजत याचिका प्रारंभ में ही खारिज कर दी है । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि खंड न्यायपीठ के आदेश का विलय उच्चतम न्यायालय के आदेश में हो गया । इसलिए उच्चतम न्यायालय में कोई अवमान याचिका फाइल नहीं की जा सकती । यदि उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने अवमान याचिका पहली बार ही ग्रहण कर ली गई होती तब अभिकथित अवमानकर्ता विधिसम्मत रूप से यह कह सकते थे कि अधिनियम की धारा 19 के अधीन उसे कानूनी अधिकार से वंचित किया जा रहा है । उच्च न्यायालय किसी भी कानूनी अधिकार को निर्वापित नहीं कर सकता है विशेष रूप से ऐसे मामलों में और यह वादकारियों के लिए पूर्वाग्रह का कारण बनता है ।

परिणामस्वरूप, ये अवमान अपीलें पोषणीय नहीं होने के कारण खारिज की जाती हैं । संबंधित प्रकीर्ण याचिकाएं बंद की जाती हैं । इस अपील का निपटारा करने से पूर्व यह न्यायालय अपनी नाराजगी अभिलिखित करने के लिए आनत है । तारीख 8 नवंबर, 2019 का सरकारी आदेश (प्रकीर्ण सं. 418) राजस्व कि और आपदा प्रबंधन विभाग, भूमि व्ययन प्रकोष्ठ [एल डी - 2 (2)] प्रभाग पारित करके सरकार प्रमुख जल-निकायों को एक प्राइवेट उद्यम के विदोहन के लिए सौंपकर एकल न्यायाधीश या खंड न्यायपीठ या उच्च न्यायालय या अपनी स्वयं में से किसे धोखा देना चाहती थी ? ऐसा करना यह कहने की कोटि में आता है कि हम भारत के जमींदार हैं और हम हिमालय और पश्चिमी घाटों को पट्टे पर दे सकते । हम यह भी कहना चाहेंगे कि विद्वान् एकल न्यायाधीश अवमान याचिका पर ऊपर जो कहा गया उससे किसी भी रीति से प्रभावित हुए बिना कार्यवाही करें ।

अपीलें खारिज की गईं ।

अम./अस.

संसद् के अधिनियम

नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009

(2009 का अधिनियम संख्यांक 35)

[26 अगस्त, 2009]

छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के सभी बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के साठवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 है ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर होगा ।

(3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

[1][(4) संविधान के अनुच्छेद 29 और अनुच्छेद 30 के उपबंधों के अधीन रहते हुए इस अधिनियम के उपबंध बालकों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के अधिकार प्रदान किए जाने के संबंध में लागू होंगे ।

(5) इस अधिनियम की कोई बात मदरसों, वैदिक पाठशालाओं और मुख्यत: धार्मिक शिक्षा प्रदान करने वाली शैक्षणिक संस्थाओं को लागू नहीं होगी ।]

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 2 द्वारा अंत:स्थापित ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "समुचित सरकार" से, –

(i) केन्द्रीय सरकार या ऐसे संघ राज्यक्षेत्र के, जिसमें कोई विधान-मंडल नहीं है, प्रशासक द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय के संबंध में, केन्द्रीय सरकार ;

(ii) उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट विद्यालय से भिन्न, –

(क) किसी राज्य के राज्यक्षेत्र के भीतर स्थापित किसी विद्यालय के संबंध में, राज्य सरकार ;

(ख) विधान-मंडल वाले किसी संघ राज्यक्षेत्र के भीतर स्थापित विद्यालय के संबंध में उस संघ राज्यक्षेत्र की सरकार,

अभिप्रेत है ;

(ख) "प्रति व्यक्ति फीस" से विद्यालय द्वारा अधिसूचित फीस से भिन्न किसी प्रकार का संदान या अभिदाय अथवा संदाय अभिप्रेत है ;

(ग) "बालक" से छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु का कोई बालक या बालिका अभिप्रेत है ;

(घ) "अलाभित समूह का बालक" [1][कोई नि:शक्त बालक या] से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, सामाजिक रूप से और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग या सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, भाषाई, लिंग या ऐसी अन्य बात के कारण, जो समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट की जाए, अलाभित ऐसे अन्य समूह का कोई बालक अभिप्रेत है ;

(ङ) "दुर्बल वर्ग का बालक" से ऐसे माता-पिता या संरक्षक का

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

बालक अभिप्रेत है, जिसकी वार्षिक आय समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट न्यूनतम सीमा से कम है ;

[1][(ङङ) "नि:शक्त बालक" के अंतर्गत निम्नलिखित हैं, –

(अ) नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (1996 का 1) की धारा 2 के खंड (झ) में यथापरिभाषित "नि:शक्त" कोई बालक ;

(आ) ऐसा कोई बालक, जो राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-नि:शक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ञ) में यथापरिभाषित नि:शक्त कोई व्यक्ति हो ;

(इ) राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-नि:शक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ण) में यथापरिभाषित "गंभीर बहु-नि:शक्तता से ग्रस्त" कोई बालक] ;

(च) "प्रारंभिक शिक्षा" से पहली कक्षा से आठवीं कक्षा तक की शिक्षा अभिप्रेत है ;

(छ) किसी बालक के संबंध में "संरक्षक" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसकी देखरेख और अभिरक्षा में वह बालक है और इसके अंतर्गत कोई प्राकृतिक संरक्षक या किसी न्यायालय या किसी कानून द्वारा नियुक्त या घोषित संरक्षक भी है ;

(ज) "स्थानीय प्राधिकारी" से कोई नगर निगम या नगर परिषद् या जिला परिषद् या नगर पंचायत या पंचायत, चाहे जिस नाम से ज्ञात हो, अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत विद्यालय पर प्रशासनिक नियंत्रण रखने वाला किसी नगर, शहर या ग्राम में किसी स्थानीय प्राधिकारी के रूप में कार्य करने के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन सशक्त ऐसा अन्य

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

स्थानीय प्राधिकारी या निकाय भी है ;

(झ) "राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग" से बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग अभिप्रेत है ;

(ञ) "अधिसूचना" से राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ट) "माता-पिता" से किसी बालक का प्राकृतिक या सौतेला या दत्तक पिता या माता अभिप्रेत है ;

(ठ) "विहित" से, इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ड) "अनुसूची" से इस अधिनियम से उपाबद्ध अनुसूची अभिप्रेत है ;

(ढ) "विद्यालय" से प्रारंभिक शिक्षा देने वाला कोई मान्यताप्राप्त विद्यालय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत निम्नलिखित भी हैं :-

(i) समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन कोई विद्यालय ;

(ii) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी से अपने संपूर्ण व्यय या उसके भाग की पूर्ति करने के लिए सहायता या अनुदान प्राप्त करने वाला कोई सहायताप्राप्त विद्यालय ;

(iii) विनिर्दिष्ट प्रवर्ग का कोई विद्यालय ; और

(iv) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी से अपने संपूर्ण व्यय या उसके भाग की पूर्ति करने के लिए किसी प्रकार की सहायता या अनुदान प्राप्त न करने वाला कोई गैर-सहायताप्राप्त विद्यालय ;

(ण) "अनुवीक्षण प्रक्रिया" से किसी अनिश्चित पद्धति से भिन्न दूसरों पर अधिमानता में किसी बालक के प्रवेश के लिए चयन की पद्धति अभिप्रेत है ;

(त) किसी विद्यालय के संबंध में "विनिर्दिष्ट प्रवर्ग" से, केन्द्रीय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, सैनिक विद्यालय के रूप में ज्ञात कोई विद्यालय या किसी सुभिन्न लक्षण वाला ऐसा अन्य विद्यालय अभिप्रेत है जिसे समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किया जाए ;

(थ) "राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग" से बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की धारा 3 के अधीन गठित राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग अभिप्रेत है ।

अध्याय 2

नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार

3. नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार – [1][(1) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को, जिसमें धारा 2 के खंड (घ) या खंड (ङ) में निर्दिष्ट कोई बालक भी सम्मिलित है, उसकी प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक किसी आस-पास के विद्यालय में नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का अधिकार होगा ।]

(2) उपधारा (1) के प्रयोजन के लिए, कोई बालक किसी प्रकार की फीस या ऐसे प्रभार या व्यय का संदाय करने के लिए दायी नहीं होगा, जो प्रारंभिक शिक्षा लेने और पूरी करने से उसे निवारित करे ।

[2][* * * *]

[3][(3) धारा 2 के खंड (ङङ) के उपखंड (अ) में निर्दिष्ट किसी नि:शक्त बालक को, नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 (1996 का 1) के उपबंधों पर प्रतिकूल

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा प्रतिस्थापित ।

[2] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा लोप किया गया ।

[3] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 4 द्वारा अंत:स्थापित ।

प्रभाव डाले बिना, और धारा 2 के खंड (डङ) के उपखंड (आ) और उपखंड (इ) में निर्दिष्ट किसी बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण करने के वैसे ही अधिकार प्राप्त होंगे जो नि:शक्त व्यक्ति (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 के अध्याय 5 के उपबंधों के अधीन नि:शक्त बालकों को प्राप्त हैं :

परंतु राष्ट्रीय स्वपरायणता, प्रमस्तिष्क घात, मानसिक मंदता और बहु-नि:शक्तताग्रस्त व्यक्ति कल्याण न्यास अधिनियम, 1999 (1999 का 44) की धारा 2 के खंड (ज) में निर्दिष्ट "बहु-नि:शक्तता" से ग्रस्त किसी बालक को और खंड (ण) में निर्दिष्ट "गंभीर बहु-नि:शक्तता" से ग्रस्त किसी बालक को भी घर-आधारित शिक्षा का विकल्प अपनाने का अधिकार हो सकेगा ।]

4. ऐसे बालकों, जिन्हें प्रवेश नहीं दिया गया है या जिन्होंने प्रारंभिक शिक्षा पूरी नहीं की है, के लिए विशेष उपबंध – जहां, छह वर्ष से अधिक की आयु के किसी बालक को किसी विद्यालय में प्रवेश नहीं दिया गया है या प्रवेश तो दिया गया है किंतु उसने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी नहीं की है, तो उसे उसकी आयु के अनुसार समुचित कक्षा में प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु जहां किसी बालक को, उसकी आयु के अनुसार समुचित कक्षा में सीधे प्रवेश दिया जाता है, वहां उसे अन्य बालकों के समान होने के लिए, ऐसी रीति में और ऐसी समय-सीमा के भीतर, जो विहित की जाए, विशेष प्रशिक्षण प्राप्त करने का अधिकार होगा :

परंतु यह और कि प्रारंभिक शिक्षा के लिए इस प्रकार प्रवेश प्राप्त कोई बालक, चौदह वर्ष की आयु के पश्चात् भी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने तक नि:शुल्क शिक्षा का हकदार होगा ।

5. अन्य विद्यालय में स्थानांतरण का अधिकार – (1) जहां किसी विद्यालय में, प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने की व्यवस्था नहीं है वहां किसी बालक को, धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय को छोड़कर, अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए किसी अन्य विद्यालय में, स्थानांतरण कराने का अधिकार होगा ।

(2) जहां किसी बालक से किसी राज्य के भीतर या बाहर किसी भी कारण से एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय में जाने की अपेक्षा की जाती है, वहां ऐसे बालक को धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय को छोड़कर, अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए किसी अन्य विद्यालय में, स्थानांतरण कराने का अधिकार होगा ।

(3) ऐसे अन्य विद्यालय में प्रवेश लेने के लिए उस विद्यालय का प्रधान अध्यापक या भारसाधक, जहां ऐसे बालक को अंतिम बार प्रवेश दिया गया था, तुरंत स्थानांतरण प्रमाणपत्र जारी करेगा :

परंतु स्थानांतरण प्रमाणपत्र प्रस्तुत करने में विलंब, ऐसे अन्य विद्यालय में प्रवेश के लिए विलंब करने या प्रवेश से इनकार करने के लिए आधार नहीं होगा :

परंतु यह और कि स्थानांतरण प्रमाणपत्र जारी करने में विलंब करने वाले विद्यालय का प्रधान अध्यापक या भारसाधक, उसको लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई के लिए दायी होगा/होगी ।

अध्याय 3

समुचित सरकार, स्थानीय प्राधिकारी और माता-पिता के कर्तव्य

6. समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी का विद्यालय स्थापित करने का कर्तव्य – इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए, समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी, इस अधिनियम के प्रारंभ से तीन वर्ष की अवधि के भीतर ऐसे क्षेत्र या आस-पास की ऐसी सीमाओं के भीतर, जो विहित की जाएं, जहां विद्यालय इस प्रकार स्थापित नहीं है, एक विद्यालय स्थापित करेंगे ।

7. वित्तीय और अन्य उत्तरदायित्वों में हिस्सा बांटना – (1) केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार का इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए निधियां उपलब्ध कराने के लिए समवर्ती उत्तरदायित्व होगा ।

(2) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए पूंजी और आवर्ती व्यय के प्राक्कलन तैयार करेगी ।

(3) केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकारों को राजस्वों के सहायता अनुदान के रूप में उपधारा (2) में निर्दिष्ट व्यय का ऐसा प्रतिशत उपलब्ध कराएगी, जैसा वह, समय-समय पर राज्य सरकारों के परामर्श से अवधारित करे ।

(4) केन्द्रीय सरकार, राष्ट्रपति को अनुच्छेद 280 के खंड (3) के उपखंड (घ) के अधीन राज्य सरकार को अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध कराए जाने की आवश्यकता की परीक्षा करने के लिए वित्त आयोग को निर्देश देने का अनुरोध कर सकेगी, ताकि उक्त राज्य सरकार इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए निधियों का अपना अंश प्रदान कर सके ।

(5) उपधारा (4) में किसी बात के होते हुए भी, राज्य सरकार उपधारा (3) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा राज्य सरकार को प्रदान की गई राशियों और उसके अन्य संसाधनों को ध्यान में रखते हुए इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए निधियां उपलब्ध कराने हेतु उत्तरदायी होगी ।

(6) केन्द्रीय सरकार, –

(क) धारा 29 के अधीन विनिर्दिष्ट शैक्षणिक प्राधिकारी की सहायता से राष्ट्रीय कार्यक्रम का ढांचा विकसित करेगी ;

(ख) शिक्षकों के प्रशिक्षण के लिए मानकों को विकसित और लागू करेगी ;

(ग) नवीकरण, अनुसंधान, योजना और क्षमता निर्माण के संवर्धन के लिए राज्य सरकार को तकनीकी सहायता और संसाधन उपलब्ध कराएगी ।

8. समुचित सरकार के कर्तव्य – समुचित सरकार, –

(क) प्रत्येक बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा

उपलब्ध कराएगी :

परंतु जहां किसी बालक को, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक द्वारा, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारवान् रूप से वित्तपोषित विद्यालय से भिन्न किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाता है, वहां ऐसा बालक या, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक ऐसे अन्य विद्यालय में बालक की प्राथमिक शिक्षा पर उपगत व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए कोई दावा करने का हकदार नहीं होगा ।

स्पष्टीकरण – "अनिवार्य शिक्षा" पद से समुचित सरकार की, –

(i) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक को नि:शुल्क प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने ; और

(ii) छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु के प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में अनिवार्य प्रवेश, उपस्थिति और उसको पूरा करने को सुनिश्चित करने की,

बाध्यता अभिप्रेत है ;

(ख) धारा 6 में यथाविनिर्दिष्ट आस-पास में विद्यालय की उपलब्धता को सुनिश्चित करेगी ;

(ग) यह सुनिश्चित करेगी कि दुर्बल वर्ग के बालक और अलाभित समूह के बालक के प्रति पक्षपात न किया जाए तथा किसी आधार पर प्राथमिक शिक्षा लेने और पूरा करने से वे निवारित न हों ;

(घ) अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यालय भवन, शिक्षण कर्मचारिवृंद और शिक्षा के उपस्कर भी हैं, उपलब्ध कराएगी ;

(ङ) धारा 4 में विनिर्दिष्ट विशेष प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगी ;

(च) प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और उसे पूरा करने को सुनिश्चित और मानीटर करेगी ;

(छ) अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों के अनुरूप अच्छी क्वालिटी की प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करेगी ;

(ज) प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठ्याचार और पाठ्यक्रमों का समय से विहित किया जाना सुनिश्चित करेगी ; और

(झ) शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगी ।

9. स्थानीय प्राधिकारी के कर्तव्य – प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी, –

(क) प्रत्येक बालक को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएगा :

परन्तु जहां किसी बालक को, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक द्वारा, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा सारवान् रूप से वित्तपोषित विद्यालय से भिन्न किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाता है, वहां ऐसा बालक या, यथास्थिति, उसके माता-पिता या संरक्षक ऐसे अन्य विद्यालय में बालक की प्राथमिक शिक्षा पर उपगत व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए कोई दावा करने का हकदार नहीं होगा ;

(ख) धारा 6 में यथाविनिर्दिष्ट आस-पास में विद्यालय की उपलब्धता को सुनिश्चित करेगा ;

(ग) यह सुनिश्चित करेगा कि दुर्बल वर्ग के बालक और अलाभित समूह के बालक के प्रति पक्षपात न किया जाए तथा किसी आधार पर प्राथमिक शिक्षा लेने और पूरा करने से वे निवारित न हों ;

(घ) अपनी अधिकारिता के भीतर निवास करने वाले चौदह वर्ष तक की आयु के बालकों के ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, अभिलेख रखेगा ;

(ङ) अपनी अधिकारिता के भीतर निवास करने वाले प्रत्येक बालक द्वारा प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश, उपस्थिति और उसे पूरा करने को सुनिश्चित और मानीटर करेगा ;

(च) अवसंरचना, जिसके अंतर्गत विद्यालय भवन, शिक्षण कर्मचारिवृन्द और शिक्षा सामग्री भी है, उपलब्ध कराएगा ;

(छ) धारा 4 में विनिर्दिष्ट विशेष प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगा ;

(ज) अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों के अनुरूप अच्छी क्वालिटी की प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करेगा ;

(झ) प्राथमिक शिक्षा के लिए पाठ्याचार और पाठ्यक्रमों का समय से विहित किया जाना सुनिश्चित करेगा ;

(ञ) शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण सुविधा उपलब्ध कराएगा ;

(ट) प्रवासी कुटुंबों के बालकों के प्रवेश को सुनिश्चित करेगा ;

(ठ) अपनी अधिकारिता के भीतर विद्यालयों के कार्यकरण को मानीटर करेगा ; और

(ड) शैक्षणिक कैलेंडर का विनिश्चय करेगा ।

10. माता-पिता और संरक्षक का कर्तव्य – प्रत्येक माता-पिता या संरक्षक का यह कर्तव्य होगा कि वह आस-पास के विद्यालय में कोई प्रारंभिक शिक्षा के लिए अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य का प्रवेश कराए या प्रवेश दिलाए ।

11. समुचित सरकार द्वारा विद्यालय पूर्व शिक्षा के लिए व्यवस्था करना – प्राथमिक शिक्षा के लिए तीन वर्ष से अधिक आयु के बालकों को तैयार करने तथा सभी बालकों के लिए जब तक वे छह वर्ष की आयु पूरी करते हैं, आरंभिक बाल्यकाल देखरेख और शिक्षा की व्यवस्था करने की दृष्टि से समुचित सरकार, ऐसे बालकों के लिए नि:शुल्क विद्यालय पूर्व शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक व्यवस्था कर सकेगी ।

अध्याय 4

विद्यालयों और शिक्षकों के उत्तरदायित्व

12. नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के लिए विद्यालय के उत्तरदायित्व की सीमा – (1) इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए, –

(क) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, उसमें प्रविष्ट सभी बालकों को नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करेगा ;

(ख) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, उसमें प्रवेश कराए गए बालकों के ऐसे अनुपात को, जो इस प्रकार प्राप्त उसकी वार्षिक आवर्ती सहायता या अनुदान का, उसके वार्षिक आवर्ती व्यय से, न्यूनतम पच्चीस प्रतिशत के अधीन रहते हुए नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराएगा ;

(ग) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iii) और उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय पहली कक्षा में, आस-पास में दुर्बल वर्ग और अलाभित समूह के बालकों को, उस कक्षा के बालकों की कुल संख्या के कम से कम पच्चीस प्रतिशत की सीमा तक प्रवेश देगा और नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, उसके पूरा होने तक, प्रदान करेगा :

परंतु यह और कि जहां धारा 2 के खंड (ढ) में विनिर्दिष्ट कोई विद्यालय, विद्यालय पूर्व शिक्षा देता है वहां खंड (क) से खंड (ग) के उपबंध ऐसी विद्यालय पूर्व शिक्षा में प्रवेश को लागू होंगे ।

(2) उपधारा (1) के खंड (ग) में यथाविनिर्दिष्ट नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने वाले धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट विद्यालय की, उसके द्वारा इस प्रकार उपगत व्यय की, राज्य द्वारा उपगत प्रति बालक व्यय की सीमा तक या बालक से प्रभारित वास्तविक रकम तक, इनमें से जो भी कम हो, ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, प्रतिपूर्ति की जाएगी :

परन्तु ऐसी प्रतिपूर्ति धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (i) में विनिर्दिष्ट किसी विद्यालय द्वारा उपगत प्रति बालक व्यय से अधिक नहीं होगी :

परन्तु यह और कि जहां ऐसा विद्यालय उसके द्वारा कोई भूमि, भवन, उपस्कर या अन्य सुविधाएं, या तो नि:शुल्क या रियायती दर पर, प्राप्त करने के कारण पहले से ही विनिर्दिष्ट संख्या में बालकों को नि:शुल्क शिक्षा उपलब्ध कराने की बाध्यता के अधीन है, वहां ऐसा विद्यालय ऐसी बाध्यता की सीमा तक प्रतिपूर्ति के लिए हकदार नहीं होगा ।

(3) प्रत्येक विद्यालय ऐसी जानकारी जो, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा अपेक्षित हो, उपलब्ध कराएगा ।

13. प्रवेश के लिए किसी प्रति व्यक्ति फीस और अनुवीक्षण प्रक्रिया का न होना – (1) कोई विद्यालय या व्यक्ति, किसी बालक को प्रवेश देते समय कोई प्रति व्यक्ति फीस संगृहीत नहीं करेगा और बालक या उसके माता-पिता अथवा संरक्षक को किसी अनुवीक्षण प्रक्रिया के अधीन नहीं रखेगा ।

(2) कोई विद्यालय या व्यक्ति, यदि उपधारा (1) के उपबंधों के उल्लंघन में, –

(क) प्रति व्यक्ति फीस प्राप्त करता है तो वह जुर्माने से, जो प्रभारित प्रति व्यक्ति फीस के दस गुना तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ;

(ख) किसी बालक को अनुवीक्षण प्रक्रिया के अधीन रखता है तो वह जुर्माने से, जो पहले उल्लंघन के लिए पच्चीस हजार रुपए तक और प्रत्येक पश्चात्वर्ती उल्लंघन के लिए पचास हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

14. प्रवेश के लिए आयु का सबूत – (1) प्राथमिक शिक्षा में प्रवेश के प्रयोजनों के लिए किसी बालक की आयु, जन्म, मृत्यु और विवाह रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1886 (1886 का 6) के उपबंधों के अनुसार

जारी किए गए जन्म प्रमाणपत्र के आधार पर या ऐसे अन्य दस्तावेज के आधार पर, जो विहित किया जाए, अवधारित की जाएगी ।

(2) किसी बालक को, आयु का सबूत न होने के कारण किसी विद्यालय में प्रवेश से इनकार नहीं किया जाएगा ।

15. प्रवेश से इनकार न किया जाना – किसी बालक को, शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ पर या ऐसी विस्तारित अवधि के भीतर, जो विहित की जाए, किसी विद्यालय में प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु किसी बालक को प्रवेश से इनकार नहीं किया जाएगा यदि ऐसा प्रवेश विस्तारित अवधि के पश्चात् ईप्सित है :

परंतु यह और कि विस्तारित अवधि के पश्चात् प्रवेश प्राप्त कोई बालक ऐसी रीति में, जो समुचित सरकार द्वारा विहित की जाए, अपना अध्ययन पूरा करेगा ।

16. रोकने और निष्कासन का प्रतिषेध – किसी विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालक को किसी कक्षा में नहीं रोका जाएगा या विद्यालय से प्राथमिक शिक्षा पूरी किए जाने तक निष्कासित नहीं किया जाएगा ।

17. बालक के शारीरिक दंड और मानसिक उत्पीड़न का प्रतिषेध – (1) किसी बालक को शारीरिक दंड नहीं दिया जाएगा या उसका मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जाएगा ।

(2) जो कोई उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, वह ऐसे व्यक्ति को लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई का दायी होगा ।

18. मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना किसी विद्यालय का स्थापित न किया जाना – (1) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन या नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय से भिन्न कोई विद्यालय, इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात्, ऐसे प्राधिकारी से, ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, कोई आवेदन करके मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना स्थापित नहीं किया जाएगा या कार्य नहीं करेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन विहित प्राधिकारी ऐसे प्ररूप में, ऐसी अवधि के भीतर, ऐसी रीति में और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, मान्यता प्रमाणपत्र जारी करेगा :

परंतु किसी विद्यालय को ऐसी मान्यता तब तक अनुदत्त नहीं की जाएगी जब तक वह धारा 19 के अधीन विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है ।

(3) मान्यता की शर्तों के उल्लंघन पर, विहित प्राधिकारी लिखित आदेश द्वारा, मान्यता वापस ले लेगा :

परंतु ऐसे आदेश में आसपास के उस विद्यालय के बारे में निदेश होगा जिसमें गैर-मान्यताप्राप्त विद्यालय में अध्ययन कर रहे बालकों को प्रवेश दिया जाएगा :

परंतु यह और कि ऐसी मान्यता को ऐसे विद्यालय को, ऐसी रीति में जो विहित की जाए, सुनवाई का अवसर दिए बिना वापस नहीं लिया जाएगा ।

(4) ऐसा विद्यालय, उपधारा (3) के अधीन मान्यता वापस लेने की तारीख से कार्य करना जारी नहीं रखेगा ।

(5) कोई व्यक्ति, जो मान्यता प्रमाणपत्र अभिप्राप्त किए बिना कोई विद्यालय स्थापित करता है या चलाता है या मान्यता वापस लेने के पश्चात् विद्यालय चलाना जारी रखता है, जुर्माने से, जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और उल्लंघन जारी रहने की दशा में जुर्माने से जो ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान ऐसा उल्लंघन जारी रहता है, दस हजार रुपए तक का हो सकेगा, दायी होगा ।

19. विद्यालय के मान और मानक – (1) किसी विद्यालय को, धारा 18 के अधीन तब तक स्थापित नहीं किया जाएगा, या मान्यता नहीं दी जाएगी जब तक वह अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है ।

(2) जहां इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व स्थापित कोई विद्यालय अनुसूची में विनिर्दिष्ट मान और मानकों को पूरा नहीं करता है, वहां वह

ऐसे प्रारंभ की तारीख से तीन वर्ष की अवधि के भीतर अपने खर्चे पर ऐसे मान और मानकों को पूरा करने के लिए कदम उठाएगा ।

(3) जहां कोई विद्यालय, उपधारा (2) के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर मान और मानकों को पूरा करने में असफल रहता है, वहां धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन विहित प्राधिकारी, ऐसे विद्यालय को अनुदत्त मान्यता को उसकी उपधारा (3) के अधीन विनिर्दिष्ट रीति में वापस ले लेगा ।

(4) कोई विद्यालय उपधारा (3) के अधीन मान्यता वापस लेने की तारीख से कार्य करना जारी नहीं रखेगा ।

(5) कोई व्यक्ति, जो मान्यता वापस लेने के पश्चात् कोई विद्यालय चलाना जारी रखता है, जुर्माने से जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा और उल्लंघन जारी रहने की दशा में, ऐसे प्रत्येक दिन के लिए, जिसके दौरान उल्लंघन जारी रहता है, दस हजार रुपए के जुर्माने का दायी होगा ।

20. अनुसूची का संशोधन करने की शक्ति – केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, अनुसूची का, उसमें किसी मान या मानक को जोड़कर या उससे उसका लोप करके संशोधन कर सकेगी ।

21. विद्यालय प्रबंध समिति – (1) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (iv) में विनिर्दिष्ट किसी विद्यालय से भिन्न विद्यालय स्थानीय प्राधिकारी, ऐसे विद्यालय में प्रवेश प्राप्त बालकों के माता-पिता या संरक्षक और शिक्षकों के निर्वाचित प्रतिनिधियों से मिलकर बनने वाली एक विद्यालय प्रबंध समिति का गठन करेगा :

परंतु ऐसी समिति के कम से कम तीन चौथाई सदस्य माता-पिता या संरक्षक होंगे :

परंतु यह और कि अलाभित समूह और दुर्बल वर्ग के बालकों के माता-पिता या संरक्षकों को समानुपाती प्रतिनिधित्व दिया जाएगा :

परंतु यह भी कि ऐसी समिति के पचास प्रतिशत सदस्य स्त्रियां होंगी ।

(2) विद्यालय प्रबंध समिति निम्नलिखित कृत्यों का पालन करेगी, अर्थात् :–

(क) विद्यालय के कार्यकरण को मानीटर करना ;

(ख) विद्यालय विकास योजना तैयार करना और उसकी सिफारिश करना ;

(ग) समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी अथवा किसी अन्य स्रोत से प्राप्त अनुदानों के उपयोग को मानीटर करना ; और

(घ) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करना, जो विहित किए जाएं :

[1][परंतु, –

(क) अल्पसंख्यक द्वारा स्थापित और प्रशासित किसी विद्यालय, चाहे वह धर्म आधारित हो या भाषा आधारित हो ; और

(ख) धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में यथा परिभाषित अन्य सभी सहायता प्राप्त विद्यालयों, के संबंध में उपधारा (1) के अधीन गठित विद्यालय प्रबंध समिति केवल सलाहकार संबंधी कृत्यों का पालन करेगी ।]

22. विद्यालय विकास योजना – (1) धारा 21 की उपधारा (1) के अधीन गठित प्रत्येक विद्यालय प्रबंध समिति [2][अल्पसंख्यक द्वारा, स्थापित और प्रशासित किसी विद्यालय, चाहे वह धर्म आधारित हो या भाषा आधारित, तथा धारा 2 के खंड (ढ) के उपखंड (ii) में यथा परिभाषित किसी सहायता प्राप्त विद्यालय के संबंध में विद्यालय प्रबंध समिति के सिवाय,] ऐसी रीति में, जो विहित की जाए, एक विद्यालय विकास योजना तैयार करेगी ।

(2) उपधारा (1) के अधीन इस प्रकार तैयार की गई विद्यालय विकास योजना, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी द्वारा बनाई जाने वाली योजनाओं और दिए जाने वाले अनुदानों का आधार होगी ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 5 द्वारा अंत:स्थापित ।

[2] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 6 द्वारा अंत:स्थापित ।

23. शिक्षकों की नियुक्ति के लिए अर्हताएं और सेवा के निबंधन और शर्तें – (1) कोई व्यक्ति, जिसके पास केन्द्रीय सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, प्राधिकृत किसी शिक्षा प्राधिकारी द्वारा यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं हैं, शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए पात्र होगा ।

(2) जहां किसी राज्य में अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम या उसमें प्रशिक्षण प्रदान करने वाली पर्याप्त संस्थाएं नहीं हैं या उपधारा (1) के अधीन यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं रखने वाले शिक्षक पर्याप्त संख्या में नहीं हैं वहां केन्द्रीय सरकार, यदि वह आवश्यक समझे, अधिसूचना द्वारा, शिक्षक के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित न्यूनतम अर्हताओं को पांच वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के लिए शिथिल कर सकेगी, जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए :

परंतु ऐसा कोई शिक्षक, जिसके पास इस अधिनियम के प्रारंभ पर उपधारा (1) के अधीन यथा अधिकथित न्यूनतम अर्हताएं नहीं हैं, पांच वर्ष की अवधि के भीतर ऐसी न्यूनतम अर्हताएं अर्जित करेगा ।

(3) शिक्षक को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसके सेवा के निबंधन और शर्तें वे होंगी जो विहित की जाएं ।

24. शिक्षकों के कर्तव्य और शिकायतों को दूर करना – (1) धारा 23 की उपधारा (1) के अधीन नियुक्त शिक्षक निम्नलिखित कर्तव्यों का पालन करेगा, अर्थात् :–

(क) विद्यालय में उपस्थित होने में नियमितता और समय पालन ;

(ख) धारा 29 की उपधारा (2) के उपबंधों के अनुसार पाठ्यक्रम संचालित करना और उसे पूरा करना ;

(ग) विनिर्दिष्ट समय के भीतर संपूर्ण पाठ्यक्रम पूरा करना ;

(घ) प्रत्येक बालक की शिक्षा ग्रहण करने के सामर्थ्य का निर्धारण करना और तद्नुसार यथा अपेक्षित अतिरिक्त शिक्षण, यदि कोई हो, जोड़ना ;

(ङ) माता-पिता और संरक्षकों के साथ नियमित बैठकें करना

और बालक के बारे में उपस्थिति में नियमितता, शिक्षा ग्रहण करने का सामर्थ्य, शिक्षण में की गई प्रगति और किसी अन्य सुसंगत जानकारी के बारे में उन्हें अवगत कराना ; और

(च) ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करना, जो विहित किए जाएं ।

(2) उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट कर्तव्यों के पालन में व्यतिक्रम करने वाला/वाली कोई शिक्षक/शिक्षिका, उसे लागू सेवा नियमों के अधीन अनुशासनिक कार्रवाई के लिए दायी होगा/होगी :

परंतु ऐसी अनुशासनिक कार्रवाई करने से पूर्व ऐसे शिक्षक/ऐसी शिक्षिका को सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया जाएगा ।

(3) शिक्षक की शिकायतों को, यदि कोई हों, ऐसी रीति में दूर किया जाएगा, जो विहित की जाए ।

25. छात्र-शिक्षक अनुपात – (1) इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से [1][तीन वर्ष के भीतर] समुचित सरकार और स्थानीय प्राधिकारी यह सुनिश्चित करेंगे कि प्रत्येक विद्यालय में छात्र-शिक्षक अनुपात अनुसूची में विनिर्दिष्ट किए गए अनुसार बनाए रखा जाए ।

(2) उपधारा (1) के अधीन छात्र-शिक्षक अनुपात बनाए रखने के प्रयोजन के लिए, किसी विद्यालय में तैनात किए गए किसी शिक्षक को किसी अन्य विद्यालय या कार्यालय में सेवा नहीं करने दी जाएगी या धारा 27 में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों से भिन्न किसी गैर-शैक्षिक प्रयोजन के लिए अभिनियोजित नहीं किया जाएगा ।

26. शिक्षकों की रिक्तियों का भरा जाना – नियुक्ति प्राधिकारी, समुचित सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा स्थापित, उसके स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: उपलब्ध करवाई गई निधियों द्वारा भागत: वित्तपोषित किसी विद्यालय के संबंध में यह सुनिश्चित करेगा कि उसके नियंत्रणाधीन किसी विद्यालय में शिक्षक के रिक्त पद कुल स्वीकृत पद संख्या के दस प्रतिशत से अधिक नहीं होंगे ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 7 द्वारा प्रतिस्थापित ।

27. गैर-शैक्षिक प्रयोजनों के लिए शिक्षकों को अभिनियोजित किए जाने का प्रतिषेध – किसी शिक्षक को दस वर्षीय जनसंख्या जनगणना, आपदा राहत कर्तव्यों या, यथास्थिति, स्थानीय प्राधिकारी या राज्य विधान-मंडलों या संसद् के निर्वाचनों से संबंधित कर्तव्यों से भिन्न किसी गैर-शैक्षिक प्रयोजनों के लिए अभिनियोजित नहीं किया जाएगा ।

28. शिक्षक द्वारा प्राइवेट ट्यूशन का प्रतिषेध – कोई शिक्षक/शिक्षिका प्राइवेट ट्यूशन या प्राइवेट शिक्षण क्रियाकलाप में स्वयं को नहीं लगाएगा/लगाएगी ।

अध्याय 5

प्रारंभिक शिक्षा का पाठ्यक्रम और उसका पूरा किया जाना

29. पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया – (1) प्रारंभिक शिक्षा के लिए पाठ्यक्रम और उसकी मूल्यांकन प्रक्रिया समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, विनिर्दिष्ट किए जाने वाले शिक्षा प्राधिकारी द्वारा अधिकथित की जाएगी ।

(2) शिक्षा प्राधिकारी, उपधारा (1) के अधीन पाठ्यक्रम और मूल्यांकन प्रक्रिया अधिकथित करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेगा, अर्थात् :–

(क) संविधान में प्रतिष्ठापित मूल्यों से अनुरूपता ;

(ख) बालक का सर्वांगीण विकास ;

(ग) बालक के ज्ञान, अन्त:शक्ति, योग्यता का निर्माण करना ;

(घ) पूर्णतम मात्रा तक शारीरिक और मानसिक योग्यताओं का विकास ;

(ङ) बाल अनुकूल और बालकेन्द्रित रीति में क्रियाकलापों, प्रकटीकरण और खोज के द्वारा शिक्षण ;

(च) शिक्षा का माध्यम, जहां तक साध्य हो बालक की मातृभाषा में होगा ;

(छ) बालक को भय, मानसिक अभिघात और चिन्तामुक्त

बनाना और बालक को स्वतंत्र रूप से मत व्यक्त करने में सहायता करना ;

(ज) बालक के समझने की शक्ति और उसे उपयोग करने की उसकी योग्यता का व्यापक और सतत मूल्यांकन ।

30. परीक्षा और समापन प्रमाणपत्र – (1) किसी बालक से प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक कोई बोर्ड परीक्षा उत्तीर्ण करने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

(2) प्रत्येक बालक को, जिसने अपनी प्रारंभिक शिक्षा पूरी कर ली है, ऐसे प्ररूप और ऐसी रीति में, जो विहित की जाए एक प्रमाणपत्र दिया जाएगा ।

अध्याय 6

बालकों के अधिकार का संरक्षण

31. बालक के शिक्षा के अधिकार को मानीटर करना – (1) बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम, 2005 (2006 का 4) की, यथास्थिति, धारा 3 के अधीन गठित राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग या धारा 17 के अधीन गठित राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग, उस अधिनियम के अधीन उन्हें समनुदेशित कृत्यों के अतिरिक्त निम्नलिखित कृत्यों का भी पालन करेगा, अर्थात् :–

(क) इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन उपबंधित अधिकारों के रक्षोपायों की परीक्षा और पुनर्विलोकन करना और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए अध्युपायों की सिफारिश करना ;

(ख) नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के बालक के अधिकार संबंधी परिवादों की जांच करना ; और

(ग) उक्त बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम की धारा 15 और धारा 24 के अधीन यथा उपबंधित आवश्यक उपाय करना ।

(2) उक्त आयोगों को, उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा के बालक के अधिकार से संबंधित किसी विषय में

जांच करते समय वही शक्तियां होंगी, जो उक्त बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम की क्रमश: धारा 14 और धारा 24 के अधीन उन्हें समनुदेशित की गई हैं ।

(3) जहां किसी राज्य में, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग गठित नहीं किया गया है वहां समुचित सरकार उपधारा (1) के खंड (क) से खंड (ग) में विनिर्दिष्ट कृत्यों का पालन करने के प्रयोजन के लिए ऐसी रीति में और ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन रहते हुए, जो विहित की जाएं, ऐसे प्राधिकरण का गठन कर सकेगी ।

32. शिकायतों को दूर करना – (1) धारा 31 में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति, जिसे इस अधिनियम के अधीन किसी बालक के अधिकार के संबंध में कोई शिकायत है, अधिकारिता रखने वाले स्थानीय प्राधिकारी को लिखित में शिकायत कर सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन शिकायत प्राप्त होने के पश्चात्, स्थानीय प्राधिकारी, संबंधित पक्षकारों को सुने जाने का युक्तियुक्त अवसर प्रदान करने के पश्चात् मामले का तीन मास की अवधि के भीतर निपटारा करेगा ।

(3) स्थानीय प्राधिकारी के विनिश्चय से व्यथित कोई व्यक्ति, यथास्थिति, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग को या धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन विहित प्राधिकारी को अपील कर सकेगा ।

(4) उपधारा (3) के अधीन की गई अपील का विनिश्चय धारा 31 की उपधारा (1) के खंड (ग) के अधीन यथा उपबंधित, यथास्थिति, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग या धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन निहित प्राधिकारी द्वारा किया जाएगा ।

33. राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् का गठन – (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् का गठन करेगी, जिसमें पंद्रह से अनधिक उतने सदस्य होंगे, जितने केन्द्रीय सरकार आवश्यक समझे, जिनकी नियुक्ति प्रारंभिक शिक्षा और बाल विकास के क्षेत्र में ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से की जाएगी ।

(2) राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के कृत्य अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी रूप में कार्यान्वयन के संबंध में केन्द्रीय सरकार को सलाह देना, होंगे ।

(3) राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो विहित की जाएं ।

34. राज्य सलाहकार परिषद् का गठन – (1) राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक राज्य सलाहकार परिषद् का गठन करेगी, जिसमें पन्द्रह से अनधिक उतने सदस्य होंगे, जितने राज्य सरकार आवश्यक समझे, जिनकी नियुक्ति प्रारंभिक शिक्षा और बाल विकास के क्षेत्र में ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से की जाएगी ।

(2) राज्य सलाहकार परिषद् के कृत्य अधिनियम के उपबंधों के प्रभावी रूप में कार्यान्वयन के संबंध में राज्य सरकार को सलाह देना होंगे ।

(3) राज्य सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें वे होंगी, जो विहित की जाएं ।

अध्याय 7
प्रकीर्ण

35. निदेश जारी करने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, यथास्थिति, समुचित सरकार या स्थानीय प्राधिकारी को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगी जो वह इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के प्रयोजनों के लिए ठीक समझे ।

(2) समुचित सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के संबंध में, स्थानीय प्राधिकारी या विद्यालय प्रबंध समिति को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगी और ऐसे निदेश दे सकेगी, जो वह ठीक समझे ।

(3) स्थानीय प्राधिकारी, इस अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के संबंध में विद्यालय प्रबंध समिति को ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांत जारी कर सकेगा और ऐसे निदेश दे सकेगा, जो वह ठीक समझे ।

36. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी – धारा 13 की उपधारा (2), धारा 18 की उपधारा (5) और धारा 19 की उपधारा (5) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए कोई अभियोजन समुचित सरकार द्वारा, अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त प्राधिकृत किसी अधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना संस्थित नहीं किया जाएगा ।

37. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए किसी नियम या आदेश के अनुसरण में सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के संबंध में कोई भी वाद या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, राष्ट्रीय बालक अधिकार संरक्षण आयोग, राज्य बालक अधिकार संरक्षण आयोग, स्थानीय प्राधिकारी, विद्यालय प्रबंध समिति या किसी व्यक्ति के विरुद्ध नहीं होगी ।

38. समुचित सरकार की नियम बनाने की शक्ति – (1) समुचित सरकार, अधिनियम के उपबंधों के कार्यान्वयन के लिए अधिसूचना द्वारा नियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्तियों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियम निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) धारा 4 के पहले परंतुक के अधीन विशेष प्रशिक्षण देने की रीति और उसकी समय-सीमा ;

(ख) धारा 6 के अधीन किसी आसपास के विद्यालय की स्थापना के लिए क्षेत्र या सीमाएं ;

(ग) धारा 9 के खंड (घ) के अधीन चौदह वर्ष तक की आयु के बालकों के अभिलेख रखे जाने की रीति ;

(घ) धारा 12 की उपधारा (2) के अधीन व्यय की प्रतिपूर्ति की रीति और सीमा ;

(ङ) धारा 14 की उपधारा (1) के अधीन बालक की आयु का अवधारण करने हेतु कोई अन्य दस्तावेज ;

(च) धारा 15 के अधीन प्रवेश लेने के लिए विस्तारित अवधि और यदि विस्तारित अवधि के पश्चात् प्रवेश लिया जाता है तो अध्ययन पूरा करने की रीति ;

(छ) वह प्राधिकारी, प्ररूप और रीति, जिसको और जिसमें धारा 18 की उपधारा (1) के अधीन मान्यता प्रमाणपत्र के लिए आवेदन किया जाएगा ;

(ज) धारा 18 की उपधारा (2) के अधीन मान्यता प्रमाणपत्र का प्ररूप, अवधि, उसे जारी करने की रीति और शर्तें ;

(झ) धारा 18 की उपधारा (3) के दूसरे परन्तुक के अधीन सुनवाई का अवसर प्रदान की रीति ;

(ञ) धारा 21 की उपधारा (2) के खंड (घ) के अधीन विद्यालय प्रबंध समिति द्वारा किए जाने वाले अन्य कृत्य ;

(ट) धारा 22 की उपधारा (1) के अधीन विद्यालय विकास योजना तैयार करने की रीति ;

(ठ) धारा 23 की उपधारा (3) के अधीन शिक्षक को संदेय वेतन और भत्ते तथा उसकी सेवा के निबंधन और शर्तें ;

(ड) धारा 24 की उपधारा (1) के खंड (च) के अधीन शिक्षक द्वारा पालन किए जाने वाले कर्तव्य ;

(ढ) धारा 24 की उपधारा (3) के अधीन शिक्षकों की शिकायतों को दूर करने की रीति ;

(ण) धारा 30 की उपधारा (2) के अधीन प्रारंभिक शिक्षा पूरी करने के लिए प्रमाणपत्र देने का प्ररूप और रीति ;

(त) धारा 31 की उपधारा (3) के अधीन प्राधिकरण, उसके गठन की रीति और उसके निबंधन और शर्तें ;

(थ) धारा 33 की उपधारा (3) के अधीन राष्ट्रीय सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और उनकी नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें ;

(द) धारा 34 की उपधारा (3) के अधीन राज्य सलाहकार परिषद् के सदस्यों के भत्ते और उनकी नियुक्ति के अन्य निबंधन और शर्तें ।

(3) इस अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम और केन्द्रीय सरकार द्वारा धारा 20 और धारा 23 के अधीन जारी प्रत्येक अधिसूचना, बनाए जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा/रखी जाएगी । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम या अधिसूचना में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा/होगी । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम या अधिसूचना नहीं बनाया/बनाई जानी चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा/जाएगी । किन्तु नियम या अधिसूचना के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

(4) इस अधिनियम के अधीन राज्य सरकार द्वारा बनाया गया प्रत्येक नियम या अधिसूचना बनाए/बनाई जाने के पश्चात्, यथाशीघ्र, राज्य विधान-मंडल के समक्ष रखा जाएगा/रखी जाएगी ।

[1][**38. कठिनाइयों को दूर करने की केंद्रीय सरकार की शक्ति** – (1) यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में प्रकाशित आदेश द्वारा, ऐसे उपबंध, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, कर सकेगी, जो उस कठिनाई को दूर करने के लिए आवश्यक प्रतीत हों :

परंतु इस धारा के अधीन कोई आदेश, नि:शुल्क और अनिवार्य बाल शिक्षा का अधिकार (संशोधन) अधिनियम, 2012 के प्रारंभ से तीन वर्ष के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

---

[1] 2012 के अधिनियम सं. 30 की धारा 8 द्वारा अंत:स्थापित ।

(2) इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।]

अनुसूची

(धारा 19 और धारा 25 देखिए)

विद्यालय के लिए मान और मानक

क्र. सं.	मद	मान और मानक	
1.	शिक्षकों की संख्या :		
	(क) पहली कक्षा से पांचवीं कक्षा के लिए	प्रवेश किए गए बालक	शिक्षकों की संख्या
		साठ तक	दो
		इकसठ से नब्बे के मध्य	तीन
		इक्यानवे और एक सौ बीस के मध्य	चार
		एक सौ इक्कीस और दो सौ के मध्य	पांच
		एक सौ पचास बालकों से अधिक	पांच धन एक प्रधान अध्यापक
		दौ सौ बालकों से अधिक	छात्र-शिक्षक अनुपात (प्रधान अध्यापक को छोड़कर) चालीस से अधिक नहीं होगा ।

	(ख) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए	(1) कम से कम प्रति कक्षा एक शिक्षक, इस प्रकार होगा कि निम्नलिखित प्रत्येक के लिए कम से कम एक शिक्षक हो – (i) विज्ञान और गणित ; (ii) सामाजिक अध्ययन ; (iii) भाषा । (2) प्रत्येक पैंतीस बालकों के लिए कम से कम एक शिक्षक । (3) जहां एक सौ से अधिक बालकों को प्रवेश दिया गया है वहां – (i) एक पूर्णकालिक प्रधान अध्यापक ; (ii) निम्नलिखित के लिए अंशकालिक शिक्षक – (अ) कला शिक्षा ; (आ) स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा ; (इ) कार्य शिक्षा ।
2.	भवन	सभी मौसम वाले भवन, जिसमें निम्नलिखित होंगे – (i) प्रत्येक शिक्षक के लिए कम से कम एक कक्षा और एक कार्यालय-सह-भंडार-सह प्रधान अध्यापक कक्ष ; (ii) बाधा मुक्त पहुंच ; (iii) लड़कों और लड़कियों के लिए पृथक् शौचालय ; (iv) सभी बालकों के लिए सुरक्षित और पर्याप्त पेय जल सुविधा ; (v) जहां दोपहर का भोजन विद्यालय में पकाया जाता है, वहां

		एक रसोई ; (vi) खेल का मैदान ; (vii) सीमा दीवाल या बाड़ द्वारा विद्यालय भवन की सुरक्षा करने के लिए व्यवस्थाएं ।
3.	एक शैक्षणिक वर्ष में कार्य दिवसों/शिक्षण घंटों की न्यूनतम संख्या	(i) पहली से पांचवीं कक्षा के लिए दो सौ कार्य दिवस ; (ii) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए दो सौ बीस कार्य दिवस ; (iii) पहली कक्षा से पांचवीं कक्षा के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष आठ सौ शिक्षण घंटे ; (iv) छठी कक्षा से आठवीं कक्षा के लिए प्रति शैक्षणिक वर्ष एक हजार शिक्षण घंटे ।
4.	शिक्षक के लिए प्रति सप्ताह कार्य घंटों की न्यूनतम संख्या	पैंतालीस शिक्षण घंटे जिसके अंतर्गत तैयारी के घंटे भी हैं ।
5.	अध्यापन शिक्षण उपस्कर	प्रत्येक कक्षा के लिए अपेक्षानुसार उपलब्ध कराए जाएंगे ।
6.	पुस्तकालय	प्रत्येक विद्यालय में एक पुस्तकालय होगा, जिसमें समाचारपत्र, पत्रिकाएं और सभी विषयों पर पुस्तकें, जिनके अंतर्गत कहानी की पुस्तकें भी हैं, उपलब्ध होंगी ।
7.	खेल सामग्री, खेल और क्रीड़ा उपस्कर	प्रत्येक कक्षा को अपेक्षानुसार उपलब्ध कराए जाएंगे ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
5.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
6.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in